मुद्रक—अनंत बाळकृष्ण घगवे, श्रीसरस्वती मुद्रणालय,
९२४, गिरगांव—बंबई.

प्रकाशक—व्रजवल्लभ हरिप्रसादजी,
कालबादेवी रोड—रामवाडी, बंबई नं. २

प्रस्तावना.

वेदांतविषे यह 'योगवासिष्ठ' ग्रंथ बहुत प्रसिद्ध है. यह ग्रंथ मूल संस्कृतमें है. तिसके कर्त्ता वाल्मीकि ऋषि हैं. तिसपर कोई विद्वान्ने टीका करी है. यह ग्रंथ बहुत प्राचीन है. इसकी भाषा कोई परमार्थी साधु पुरुषने करी है; तिनका नाम ज्ञात नहीं है. ऐसा सुना है कि—योगवासिष्ठकी कोई महात्मा पुरुष कहीं कथा करते थे, तहां इस भाषाके करनेवाले साधु श्रवणके वास्ते प्रतिदिन जाते थे. जब श्रवण करके, आश्रमपर आते थे तब जैसा सुनते थे, वैसाही व्याख्यानसहित लिखते जाते थे. ऐसे इस योगवासिष्ठ ग्रंथकी भाषा तिन साधु पुरुषने संपूर्ण करी. इस रीतिसे यह ग्रंथ भया है, इसीसे इसकी भाषा अतिसुगम भई है, और वह साधु पुरुष अनुभवी थे इससे कहींभी सिद्धांतविरुद्ध वाक्य इसमें नहीं दीख पडते. भाषा पढनेवाले मुमुक्षुजनोंपर तिन कृपालु साधु पुरुषका बड़ा उपकार भया है.

सब मिलिके, इस ग्रंथके षट् (६) प्रकरण हैं, सो सब छपे हैं, परंतु तिनकी बडी कीमत होनेसे सबको उपयोगी नहीं हैं. इससे मुमुक्षुजनोंको आरंभके दो प्रकरण अतिउपयोगी हैं ऐसे विचारके, ये दोनों प्रकरण बड़े अक्षरोंमें टाइपपर हमने छपाये हैं कि, इनकी कीमत लघु होनेसे सबको इसका उपयोग सहजमें होवेगा.

इन दोनों प्रकरणोंमेंही इतना वेदांतसिद्धांत दिखाया है कि जो कोई शास्त्ररीतिसे इतना श्रवण, मनन और निदिध्यासन करे, तो तिसे अवश्यमेव मोक्षकी प्राप्ति होवे. वैराग्यप्रकरणमें इस जगत्की असत्यता ऐसी स्पष्ट दिखाई है, कि, जिसके श्रवणमात्रसे

पुरुषकी वृत्ति वैराग्यवाली होजाती है; और तिसकरके जगज्जालसे छूटनेकी तिस पुरुषको इच्छा होती है.

परमानंदकी प्राप्ति और अनर्थकी निवृत्तिके अर्थ मुमुक्षुको विचारही कर्तव्य है; क्योंकि, तिससे ज्ञान होता है, ऐसा इस ग्रंथके मुमुक्षुप्रकरणके "विचारवर्णनमें" भलीप्रकार वर्णन किया है, जगतके तुच्छ पदार्थोंकी प्राप्तिके अर्थ पुरुष बहुत वर्षोंपर्यंत पुरुषार्थ करते हैं, तब वांछित पदार्थकी प्राप्ति होती है, जगतके कोईभी पदार्थ मोक्षके समान नहीं हैं. मोक्षकी प्राप्तिका मनुष्यजन्म हेतु है, इससे तिसकी प्राप्तिके अर्थ पुरुषको दृढ अभ्यास करना चाहिये.

इस ग्रंथके विचारमें और अद्वितीयबोधक प्रक्रियाग्रंथोंका गुरुमुखसे श्रवण अपेक्षित है; क्योंकि, जो मुमुक्षुप्रकरणमें अठारहवें सर्गमें पृष्ठ १६२ पर कहा है कि--' पदपदार्थको जाननेहारा होवे ' सो इसको वारंवार विचारे तब तिसका दृश्य भ्रम नाश पावे. इस शास्त्रके विचारविषे और किसी तीर्थ. तप, दानआदिककी अपेक्षा नहीं. जहां स्थान होवे तहां बैठे, जैसा भोजन गृहविषे होवे तैसा करे और वारंवार इसका विचार करै, तब अज्ञान नष्ट होजावे अरु आत्मपदकी प्राप्ति होवे.

इस ग्रंथमें बहुत पुनरुक्तियां दृष्टि आती हैं, परंतु सो दूषण नहीं है; ग्रंथको भूषण है; क्योंकि, जिससे इस शास्त्रका विषय दुर्बोध है, इससे एकही दृष्टांत वा सिद्धांतका वारंवार श्रवण अथवा विचार मुमुक्षुको दृढतानिमित्त उपयोगीही है.

प्रकाशक.

सूचना.



समस्त वेदान्तानुरागी महाशयोंको विदित होवे कि—यह योगवासिष्ठ ग्रंथ बहुत उत्तम है. इसमें छह प्रकरण हैं. सो सब छपे हैं; लेकिन उनकी कीमत ज्यादा होनेसे कोई २ धनाढ्यही लेते थे परंतु सब नहीं लेते थे. यह देख, कईएक हमारे सहयोगियोंने इसके मुमुक्षु तथा वैराग्य ये दो प्रकरण छापे; क्योंकि, यह दोनों प्रकरण सबको अत्युपयोगी हैं और कीमतभी कमती रक्खी है; परंतु उनके निकट उत्तम संशोधक न होनेसे इन प्रकरणोंमें ऐसा गोलमाल हो गया कि कथा तो उतनीकी उतनीहि रही. लेकिन् वैराग्यप्रकरणमें संस्कृत ग्रंथमें ३३ सर्ग थे तिसके २८ रहगये. और मुमुक्षुप्रकरणमें २० सर्गके १९ रहगये. और इसके प्रारंभहीमें एक ऋषीका नाम कारुण्य था उसका कारण होगया. और जो अग्निवेश्य ऋषि लोकमें प्रसिद्ध हैं कि, जिन्होंने रामायणभी बनाया है, उनकेभी नाममें विकार होगया. अर्थात् अग्निवेश्यकी जगहपर अग्निवेष होगया और वैराग्यप्रकरण द्वितीय सर्ग पृष्ठ १० में अष्टमंत्रीकी जगहपर अष्टाविंशतिमंत्री करदिया. परन्तु नाम तो आठही लिखे. फिर नामोंमेंभी बडाही गोलमाल करदिया. यानी धृष्टिकी जगहपर कुंतभासी, जयन्तकी जगहपर शतवर्द्धन, भासकी जगहपर सुखधाम, वसिष्ठकी जगहपर जय और सुषेणकी जगहपर वामदेव होगया. और भगवान्‌को वृन्दाका शाप होनेकी कथा साफही उडगई. औरभी बहुत विषयोंमें अनेक विकार होगये और भाषाभी बहुतही बिगड गई. ये मुख्य २ विषय हमने लिखे हैं; सब नहीं लिखे; क्योंकि बहुत विस्तार हो जायगा. सो अब हमने हमारे परममित्र सुमेरपुरनिवासी पण्डित रामभद्र शर्मासे शुद्ध कराके, प्रकाशित किया. महात्मा परीक्षक जन इस हमारी प्रतिसे जब उन प्राचीन प्रतियोंको मिलावेंगे, तब इसकी शुद्धता मालूम होजायगी. अब संपूर्ण सज्जनोंसे हमारी सविनय प्रार्थना है कि– यदि दृष्टिदोषसे इसमें कोई अशुद्धि रहगई हो तो क्षमा कर, सुधार लेवें.

हरिप्रसाद भगीरथजीका प्राचीन पुस्तकालय,

कालकादेवीरोड, रामवाडी–मुम्बई.

अथ योगवासिष्ठविषयानुक्रमणिका ।

सर्गांकाः	विषयाः	पृष्ठांकाः
	वैराग्यप्रकरणम् ।	
१	कथारंभवर्णनम्	१
२	कथारंभवर्णनम्	८
३	तीर्थयात्रावर्णनम्	१०
४	दिवसव्यवहारवर्णनम् ...	१५
५	कार्श्यवर्णनम्...	
६	विश्वामित्रागमनवर्णनम् ...	१८
७	विश्वामित्रेच्छावर्णनम् ...	२०
८	दशरथोक्तिवर्णनम्	२१
९	वसिष्ठसमाश्वासनवर्णनम् ...	२५
१०	रामविषादवर्णनम्	२८
११	रामसमाश्वासनवर्णनम् ...	३२
१२	रामवैराग्यवर्णनम्	३४
१३	लक्ष्मीतिरस्कारवर्णनम् ...	३६
१४	जीवितनिन्दावर्णनम्	३९
१५	अहंकारनिन्दावर्णनम् P49	४२
१६	चित्तदौरात्म्यवर्णनम् ...	४५
१७	तृष्णागारुडीवर्णनम्	४९
१८	देहनैराश्यवर्णनम् ...	५३
१९	बाल्यावस्थानिन्दावर्णनम् ...	६०
२०	युवानिन्दावर्णनम्	६३
२१	स्त्रीनिन्दावर्णनम्	६८
२२	जरावस्थानिन्दावर्णनम् ...	७२
२३	कालापवादवर्णनम्	७५
२४	कालविलासवर्णनम्	७९
२५	कालविलासवर्णनम्	८०
२६	कालविलासवर्णनम् ...	८२
२७	सर्वपदार्थाभाववर्णनम् ...	८५
२८	जगद्विपर्ययवर्णनम्	८९
२९	सर्वार्तिप्रतिपादनवर्णनम् ...	९३
३०	वैराग्यप्रयोजनवर्णनम् ...	९४
३१	रामप्रश्नवर्णनम्	९७
३२	नभश्चरसाधुवादवर्णनम् ...	९९
३३	नभश्चरमहीचरसंमेलनवर्णनम्	१००
	मुमुक्षुप्रकरणम् ।	
१	शुकनिर्वाणवर्णनम् ...	१०२
२	विश्वामित्रोक्तिवर्णनम् ...	१०६
३	असंख्यसृष्टिप्रतिपादनम् ...	१०८
४	पुरुषार्थोपक्रमवर्णनम् ...	१११
५	पुरुषार्थवर्णनम्	११३
६	परमपुरुषार्थवर्णनम् ...	११६
७	पुरुषार्थप्राधान्यसमर्थनवर्णनम्	११९
८	दैवनिराकरणवर्णनम् ...	१२२
९	कर्मविचारवर्णनम् ...	१२४
१०	ज्ञानावतरणवर्णनम् ...	१२७
११	वसिष्ठोपदेशवर्णनम् ...	१३१
१२	तत्त्वज्ञमाहात्म्यवर्णनम् ...	१३६
१३	शमवर्णनम्	१४०
१४	विचारवर्णनम्	१४६
१५	संतोषवर्णनम्	१५२
१६	साधुसंगवर्णनम्	१५४
१७	षट्प्रकरणवर्णनम्... ...	१५७
१८	दृष्टांतवर्णनम्	१६१
१९	प्रमाणवर्णनम्	१६७
२०	आत्मप्राप्तिवर्णनम्... ...	१६९

इत्यनुक्रमणिका समाप्ता ।



श्रीपरमात्मने नमः ।

अथ श्रीयोगवासिष्ठे

वैराग्यप्रकरणप्रारंभः ।



प्रथमः सर्गः १ ।



अथ कथारंभवर्णनम् ।

सत्-चित्-आनंदरूप जो आत्मा है तिसको नमस्कार है. सो कैसा है? जिससे यह सब भासत है अरु जिसविषे यह सर्व लीन होय है अरु जिसविषे यह सब स्थित है, तिस सत्य आत्माको नमस्कार है. ज्ञाता, ज्ञान, ज्ञेय, द्रष्टा, दर्शन, दृश्य, कर्त्ता, कारण और क्रिया, ये जिसकरके सिद्ध होते हैं, ऐसा जो ज्ञानरूप आत्मा है, तिसको नमस्कार है. जिस जिस आनंदके समुद्रके कणसों संपूर्ण विश्व आनंदवान् है अरु जिस आनंदकरि सर्व जीव जीवते हैं, तिस आनंद आत्माको नमस्कार है.

कोई एक सुतीक्ष्ण अगस्तिमुनिका शिष्य होता भया; तिसके मनमें एक संशय उत्पन्न हुआ, तिसको निवृत्त करनेके अर्थ अगस्ति मुनिके आश्रमको गया. जायकर, विधिसंयुक्त प्रणाम करि स्थित भया और नम्रभावसों प्रश्न करने लगा.

सुतीक्ष्ण उवाच—हे भगवन्! धर्मतत्त्वज्ञ! सर्वशास्त्रोंके ज्ञाता! मुझको एक संशय है, सो तुम कृपाकरके निवृत्त करो. मोक्षका कारण कर्म है, कि ज्ञान है, कि दोनों हैं? याते जो मोक्षका कारण होय सो कहो.

अगस्तिरुवाच—हे ब्रह्मण्य ! केवल कर्म मोक्षका कारण नहीं और केवल ज्ञानसेभी मोक्ष प्राप्त नहीं होता. दोनोंकरके मोक्षकी प्राप्ति होती है. कर्म करके अंतःकरण शुद्ध होता है, मोक्ष नहीं होता; अरु अंतःकरणशुद्धिविना, केवल ज्ञानसेभी मुक्ति नहीं होती. अर्थात् शास्त्रका तात्पर्य, ज्ञानका निश्चय, अंतःकरण शुद्ध हुए विना ज्ञानकी स्थिति नहीं होती. ताते दोनोंकरके मोक्षकी सिद्धि होती है. कर्मकरके प्रथम अंतःकरणकी शुद्धि होती है, बहुरि ज्ञान उपजता है; तब मोक्षकी सिद्धि होती है. जैसे दोनों पंखों करके, पक्षी आकाशमार्गको सुखेन उड़ता है, तैसे कर्म अरु ज्ञान दोनोंकरके मोक्ष सिद्ध होता है. हे ब्रह्मण्य! इस अर्थके अनुसार एक पुरातन इतिहास है सो तू श्रवण कर.

एक कारुण्यनाम ब्राह्मण अग्निवेश्यका पुत्र था. सो गुरुके निकट जायकर, चार वेद षडङ्गसहित अध्ययन करता भया. अध्ययन करके घरको आवत भया और कर्मते रहित होयकर चुप रहा. अर्थात् संशययुक्त होय कर्महीते रहित भया. तब पिताने देखा जो यह कर्मते रहित होयकर स्थित भया है, ऐसा देखके, इसे कहत भया—

अग्निवेश्य उवाच—हे पुत्र! तू कर्मकी पालना क्यों नहीं करता ? और तू कर्मके न करनेते सिद्धताको कैसे प्राप्त होवेगा ? जिस करके तू कर्मते रहित हुआ है, सो कारण कहि दे.

कारुण्य उवाच—हे पिताजी ! एक संशय मुझको उत्पन्न हुआ है, तिसकरके मैं कर्मते चुप रहा हूं, सो श्रवण करो. वेदने एक ठौर कहा है कि--जब लग जीवता रहै तब लग कर्मको करना. जो अग्निहोत्रादिक कर्म हैं, सो करताही रहै. अरु और ठौर कहा है कि, धनकरके मोक्ष होत नहीं और कर्मकरके मोक्ष होत नहीं और पुत्रादिककरके मोक्ष होत नहीं; केवल त्यागते मोक्ष होता है, इन दोनोंक

विषे मुझको क्या कर्त्तव्य है? यह संशय है सो तुम कृपा करके निवृत्त करो; कि, क्या कर्त्तव्य है?

अगस्तिरुवाच—हे सुतीक्ष्ण! ऐसे जब कारुण्यने पिताको कहा, तब तिसका वचन सुन, अग्निवेश्य कहत भया----

अग्निवेश्य उवाच—हे पुत्र! एक कथा मुझते तू श्रवण कर जो पहिले हुई है. तिसको सुनकर, हृदयविषे धरके आगे जो तेरी इच्छा होय सोय करना.

एक सुरुचि नाम अप्सरा हती, सो जेती कुछ अप्सरा हतीं, तिनके विषे उत्तम थी. सो एक समय हिमालयके शिखरपर बैठी थी सो हिमालय पर्वत कैसा है, कि, कामनाकरके संपन्न जो हृदयमें बिचारे सो पावे. तहां देवता अरु किन्नरनके गण अप्सराओंके साथ क्रीडा करते हैं. और कैसा है, जहां गंगाजीका प्रवाह लहरी देत चला आवत है. सो गंगा कैसी है, कि, महापवित्र जल है जिनका, ऐसे शिखरपर सुरुचि अप्सरा बैठी थी, तिसने इंद्रका दूत अंतरिक्षते चला आवत देखा. जब निकट आया, तब अप्सराने कहा--अहो सौभाग्य देवदूत! तू देवगणमें श्रेष्ठ है, तू कहांते आया और कहां जायगा, सो कृपा करके कहि दे.

देवदूत उवाच—हे सुभद्रे! तैंने पूंछा है सो श्रवण कर. अरिष्टनेमि एक राजर्षि था; वाने अपने पुत्रको राज्य देकर, वैराग्य लिया. संपूर्ण विषयोंकी अभिलाषा त्याग करके, गंधमादन पर्वतमें जायकर भयंकर तप करने लगा. अरु धर्मात्मा तिसके साथ मेरा एक कार्य था. सो कार्य करके, मैं अब इंद्रके पास जाता हूं, तिनका मैं दूत हूं, संपूर्ण वृत्तांत निवदन करनेको चला हूं.

अप्सरोवाच—हे भगवन्! वृत्तांत कौनसा है? सो मुझसे कहो; मेरेको तू अतिप्रिय है; यह जानकर पूंछती हूं और जो महा

पुरुष हैं; तिनसो कोई प्रश्न करता है, तब वह उद्वेगते रहित होकर उत्तर देते हैं, ताते तूं कहि दे.

देवदूत उवाच—हे भद्रे ! जो वृत्तांत है सो सुन. विस्तार करके मैं तुझको कहता हूं. वह जो राजा गंधमादन पर्वतमें तप करने लगा, सो बड़ा तप किया, तब देवतोंके राजा जो इंद्र हैं तिन्होंने मुझको बुलायकर, आज्ञा करी कि--हे दूत ! तू गंधमादन पर्वतमें जा और विमान, अप्सरा, नाना प्रकारकी सामग्री, गंधर्व, यक्ष, सिद्ध, किन्नर, ताल, मृदंग--आदि बाजे संग ले जा, और वह गंधमादन पर्वत कैसा है, जो नाना प्रकारकी लता--वृक्षोंकरके पूर्ण है, तहां जायके राजाको विमानपर बिठायके, इहां ल्याव. हे सुंदरि ! जब इंद्रने ऐसा कहा, तब मैं विमान अरु सामग्रीसहित तहां आया अरु राजासे कहा कि--हे राजन् ! तेरे कारण विमान ले आया हूं तापर बैठके तू स्वर्गको चल और देवतानके भोग भोगु. जब मैंने ऐसे कहा तब मेरा वचन सुनकर, राजा बोलत भया.

राजोवाच—हे देवदूत ! प्रथम स्वर्गका वृत्तांत तू मुझसे कह कि, तेरे स्वर्गमें दोष कहा ? अरु गुण कहा है ? तिनको सुनके मैं हृदयमें विचारूं, पीछे जो मेरी इच्छा होवेगी तो आऊंगा.

देवदूत उवाच—हे राजन् ! स्वर्गमें बड़े दिव्य भोग हैं सो स्वर्ग बड़े पुण्यसों जीव पाते हैं. जो बड़े पुण्यवाले होते हैं, सो उत्तम सुख स्वर्गको पाते हैं. जो मध्यम पुण्यवाले हैं सो मध्यमसुख स्वर्गको पाते हैं अरु कनिष्ठपुण्यवाले हैं सो कनिष्ठ सुख स्वर्गको पाते हैं. यह तो गुण स्वर्गमें हैं सो तो तोसों कहे हैं और स्वर्गके जो दोष हैं सो सुन. हे राजन् ! जो आपते ऊंचे बैठे दृष्टि आवते हैं अरु उत्तम सुख भोगते हैं, तिनको देखके, तापउत्पत्ति होती है. क्योंकि, उनकी उत्कृष्टता सही नहीं जाती है. अरु जो कोई अपने समान सुख भोगते

हैं, तिनको देखके, क्रोध उपजत है; कि--मेरे समान क्यों बैठे हैं? अरु जो अपने नीचे कनिष्ठपुण्यवाले बैठे हैं तिनको देखके, आपको अभिमान उपजत है; कि--मैं इनते श्रेष्ठ हूं और एक औरभी दोष है, कि--जब उसके पुण्य क्षीण होते हैं, तब तिसी कालमें उसको मृत्युलोकमें गिराय देते हैं; एक क्षणभी रहने देते नहीं. हे राजन् ! यह जो दोष कहे सो स्वर्गमें हैं. जो तैंने पूंछा सो मैंने गुण अरु दोष कहे.

हे भद्रे ! जब इस प्रकार राजासे मैंने कहा तब मोंको राजाने कहा कि--हे देवदूत ! इस स्वर्गके योग्य हम नहीं हैं. अरु हमको इच्छाभी नहीं है. हम उग्र तप करैंगे, तपकरके, इस देहकोभी त्याग देंगे, जैसे सर्प अपनी त्वचाको पुरातन जानिके, त्याग करता है. हे देवदूत ! तुम अपने विमानको जहांते लाये हो, तहां लेजाओ, हमारे तो नमस्कार है.

हे देवि ! जब इस प्रकार राजाने मुझको कहा, तब विमान अप्सरा आदि सबको लेके, मैं स्वर्गमें गया अरु संपूर्ण वार्ता मैंने इंद्रसे कही. तब इंद्र प्रसन्न हुए अरु सुंदर वाणीकरके मुझसे कहत भये कि--हे दूत ! तू बहुरि जहां राजा है तहां जा. वह संसारते उपराम हुआ है. उसको अब आत्मपदकी इच्छा हुई है. उसको साथ लेके, वाल्मीकी कि जिन्होंने आत्मतत्त्वको आत्माकरि जाना है, तिनके पास ले जाय, मेरा संदेशा कहना कि--हे महाऋषि ! इस राजाको तत्त्वबोधका उपदेश करना. क्योंकि, यह बोधका अधिकारी है. काहेते कि, इसको स्वर्गकी भी इच्छा नहीं अरु औरकीभी वांछा नहीं. ताते तुम इसको तत्त्वबोधका उपदेश करो जो तत्वबोधको पाय करके, संसारदुःखते मुक्त होवे.

हे सुभद्रे ! जब इस प्रकार देवराजाने मुझसे कहा, तब मैं चला. जहां राजा था, तहां जाइ करिके, मैंने कहा कि--हेराजन् ! संसारसमुद्रते मोक्ष होनेके निमित्त वाल्मीकिके पास चल, वाल्मीकि तुझको उपदेश करेंगे, ऐसा कह, तिसको साथ लेकर, मैं वाल्मीकिके स्थानपर

आय, प्राप्त भया. तिस स्थानमें राजाको विठाया अरु इंद्रका संदेश दिया. जो वहां वृत्तान्त भया सो सुन. हम और राजा जब वहां गये अरु प्रणाम कर बैठे, तब वाल्मीकिने कहा--हे राजन् ! कुशल है ?

राजोवाच—हे भगवन् ! परमतत्त्वज्ञ ! और वेदांतजाननेवालोंमें श्रेष्ठ ! तुम्हारे दर्शन करके मैं अब कृतार्थ हुआ. अब मुझको कुशल हुआ है अरु कछु पूंछता हूं. कृपा करके उत्तर कहना, जिससे संसारबंधनते मुक्ति होय.

वाल्मीकिरुवाच—हे राजन्! महारामायण औषध तुझसे कहता हूं सो श्रवण करके, हृदयविषे तात्पर्य धारण करनेका यत्न कर. जब हृदयविषे तात्पर्य धारेगा, तब जीवन्मुक्त होयकर विचरेगा. हे राजन्! वासिष्ठजी अरु रामचंद्रजीका संवाद है, तिसमें सब कथा मोक्षके उपायकी कही है. तिसको सुनके, जैसे रामचंद्रजी अपने स्वभावविषे स्थित हुए अरु जीवन्मुक्त होयके विचरे हैं, तैसे तूभी विचरेगा.

राजोवाच—हे भगवन् ! रामचंद्रजी कौन थे, अरु कैसे थे, अरु कैसे होकर विचरे हैं, सो कृपा करके कहो.

वाल्मीकिरुवाच—हे राजन् ! शापके वशते, हरि जो विष्णु तिनके छलकरके मनुष्यका देह धरा सो अद्वैतज्ञानकर संपन्न है तोभी कछुक अज्ञानको अंगीकार करके, मनुष्यका शरीर धरे थे.

राजोवाच—हे भगवन् ! चिदानंद रूप जो हरि हैं, तिसको शाप किस कारण हुआ, अरु किसने दिया, सो कहो.

वाल्मीकि उवाच—हे राजन् ! एक कालमें सनत्कुमार जो निष्काम हैं सो ब्रह्मपुरीमें बैठे थे अरु त्रिलोकीके पति जो विष्णु भगवान् सो वैकुंठते उतरके ब्रह्मपुरीमें आए, तब ब्रह्मासहित सर्व सभा उठके खडी हुई अरु सबोंने पूजन किया अरु सनत्कुमारने पूजन नहीं किया. तिसको देखकर विष्णु भगवान् बोलते भये कि—हे सनत्कुमार!

तुझको निष्कामताका अभिमान है, ताते तू कामकरके अवतार पावेगा अरु स्वामिकार्तिक तेरा नाम होवेगा. जब विष्णुभगवान्‌ने ऐसा कहा, तब सनत्कुमार बोले कि--हे विष्णु ! सर्वज्ञताका अभिमान तुझको है. सो तेरी सर्वज्ञता कोई काल निवृत्त होवेगी अरु अज्ञानी होवेगा. हे राजन् ! एक तो यह शाप हुआ. औरभी सुन.

एक कालमें भृगुकी स्त्री जाती रही तिसके वियोगसे वह ऋषि तपायमान हुए. तिनको देखके विष्णुजी हँसे. तब भृगु ब्राह्मणने शाप दिया कि-- हे विष्णु ! मेरेको देख तैंने हाँसी करी है, सो मेरी नाईं तूभी स्त्रीके वियोगसे आतुर होवेगा.

अरु एक समय जालन्धर और शिवजीका युद्ध होता था सो उसकी स्त्री वृन्दा पतिव्रता थी इससे वह मरता नहीं था. यह देख, विष्णुजीने जालंधरका रूप धर उसका पातिव्रत्य भंग किया, तो उसने शाप दिया कि--जिससे तुमने मुझसे छल करके मेरा पातिव्रत्य धर्म खण्डित किया इससे तुम स्त्रीवियोग पावोगे.

तथा एक दिवस देवशर्मा ब्राह्मणने नरसिंह भगवान्‌को शाप दिया था सो सुन. एक दिन नरसिंह भगवान् गंगाके तीरपर गये थे, तहां देवशर्मा ब्राह्मणकी स्त्री थी, तिसको देखके, नरसिंहजी भयानक रूप दिखायके हँसे, तिनको देखके, ऋषिकी लुगाईने भय पाय, प्राण छोड़ दिये. तब देवशर्माने शाप दिया कि--तुमने मेरी स्त्रीका वियोग किया, ताते तुमभी स्त्रीका वियोग पावोगे.

हे राजन् ! सनत्कुमार, भृगु, वृन्दा अरु देवशर्माके शाप करके विष्णुभगवान्‌ने मनुष्यका शरीर धरा, सो राजा दशरथके घरमें प्रगटे. हे राजन् ! यह जो शरीर धरा है, अरु आगे जो वृत्तांत हुआ है, सो सावधान होय, श्रवण कर.

इति श्रीयोगवासिष्ठे वैराग्यप्रकरणे कथारंभवर्णनं नाम प्रथमः सर्गः ॥१॥

द्वितीयः सर्गः २ ।

अथ कथारंभवर्णनम् ।

दिव्य जो देवलोक है अरु भू जो पृथ्वीलोक है अरु पाताललोक ऐसी त्रिलोकीको प्रकाशता है अरु अंतर बाहर आत्मतत्त्वकरि पूर्ण है ऐसा अनुभवात्मक मेरा आत्मा है; तिस आत्माको नमस्कार है.

हे राजन्! यह शास्त्र कि, जिसका आरंभ किया है, तिसका विषय क्या है? अरु प्रयोजन क्या है? अरु संबंध क्या है अरु अधिकारी कौन है? सो श्रवण कर. सत, चित् आनंदरूप, अचिंत्य, चिन्मात्र आत्माको जानता है सो विषय है. अरु परमानंद आत्माकी प्राप्ति अरु अनात्म अभिमान दुःखकी निवृत्ति, यह प्रयोजन इसमें है अरु ब्रह्म-विद्या मोक्ष उपायकर आत्मपदका प्रतिपादन है, सो संबंध है, अरु जिसको यह निश्चय है कि "मैं अद्वैतब्रह्म अनात्म देहका साथी हुआ हूं सो किस प्रकार छूटूं ऐसा ज्ञानवान् है अरु मुमुक्षु है, ऐसा जो विकृति आत्मा है सो इहां अधिकारी है.

यह शास्त्र मोक्षका उपाय है. परंतु कैसा है मोक्षका उपाय कि, परमानंदकी प्राप्ति करनहारा है. जो पुरुष इसको विचारे सो ज्ञानवान् होवे. बहुरि जन्ममृत्युरूप संसारमें न आवे. हे राजन्! यह महारामायण जो है सो पावन है. श्रवणमात्रसे सब पापका नाश कर्ता है जिसविषे रामकथा है सो प्रथम मैंने अपने भरद्वाज शिष्यको श्रवण कराई है.

एक समय भरद्वाज चित्तको एकाग्र करके मेरे पास आया. तिसको मैंने उपदेश किया था. तिसको श्रवण करके, वचनरूपी समुद्रते साररूपी रत्नको हृदयविषे धरके, एक समय सुमेरु पर्वतपर गया. तहां पितामह जो ब्रह्मा सो बैठे थे अरु भरद्वाजने जायकर प्रणाम किया, अरु पास बैठा अरु ब्रह्माजीको यह सुनाई. तब ब्रह्माने प्रसन्न होकर, भरद्वाजसे कहा कि—हे पुत्र! कछु वर मांग, मैं तुझपर

प्रसन्न हुआ हूं, हे राजन् ! जब इसप्रकार ब्रह्माजीने कहा, तब परम-उदार जिसका आशय है, ऐसा जो भरद्वाज सो कहत भया कि--हे भूत-भविष्यके ईश्वर ! जो तुम प्रसन्न हुए हो, तौ यह वर देहु कि, संपूर्ण जीव संसारदुःखते मुक्त होहिं अरु परमपदको पावहिं, सो उपाय कहो.

ब्रह्मोवाच—हे पुत्र ! तू अपने गुरु वाल्मीकिके पास गमन कर बहुरि जो तिन्होंने आत्मबोधरूप महारामायण अनिंदित शास्त्रका आरंभ किया है तिनको सुनकर, जीव महामोह संसारसमुद्रते तरैंगे. शास्त्र महारामायण कैसा है ? कि, जो संसारसमुद्र तरनेको पुल है अरु परम पावन है.

वाल्मीकिरुवाच—हे राजन् ! इसप्रकार कह, आप परमेष्ठी (ब्रह्मा), भरद्वाजको साथ लेकर मेरे आश्रममें आये. तब मैंने भले प्रकारसों इनका पूजन किया. सो ब्रह्माजी कैसे हैं, कि, जिनकी सर्व भूतके हितमें प्रीति है सो मुझसे कहत भये.

ब्रह्मोवाच—हे मुनिनमें श्रेष्ठ वाल्मीकि ! यह जो रामके स्वभावके कथनका आरंभ तुमने किया है, तिस उद्यमका त्याग नहीं करना. इसको आदिते अंतपर्यंत समाप्त करना. यह मोक्षउपाय कैसा है, जो संसाररूपी समुद्रको पार करनेके जहाज है. इस करिके सर्व जीव कृतार्थ होवेंगे.

वाल्मीकिउवाच—हे राजन्! इस प्रकार ब्रह्माजी मुझ से कहिके, अंतर्द्धान होगये, जैसे समुद्रते आवर्त (चक्र) एक मुहूर्तपर्यंत उठके, बहुरि लीन हो जाता है तैसे ब्रह्माजी अंतर्द्धान होगये. तब मैंने भरद्वाजसे कहा कि—हे पुत्र ! ब्रह्माजीने क्या कहा ?

भरद्वाज उवाच—हे भगवन्! तुमको ब्रह्माजीने ऐसा कहा कि--हे मुनिश्रेष्ठ ! तुमने रामके स्वभावके कथनको उद्यम किया है.

तिसका त्याग नहीं करना, अंतपर्यंत समाप्ति करना. काहेते कि, इस संसारसमुद्रके पार करनेको यह कथा जहाज है, इसकरि अनेक जीव कृतार्थ होवेंगे अरु संसारसंकटते मुक्त होवेंगे.

वाल्मीकिरुवाच—हे राजन्! जब इसप्रकार ब्रह्माजीने मुझको कहा तब ब्रह्माजीकी आज्ञाके अनुसार मैंने ग्रंथ किया अरु भरद्वाजको कहा—हे पुत्र! वसिष्ठजीके उपदेशको पायकर, जिस प्रकार रामजी निःशंक हो बिचरे हैं तैसे तूभी विचर.तब उसने प्रश्न किया कि—

भरद्वाज उवाच—हे भगवन्! जिसप्रकार रामचंद्रजी जीवन्मुक्त होकर विचरे हैं, सो आदिसों क्रमकरके मुझसे कहो.

वाल्मीकिरुवाच—हे भरद्वाज! रामचंद्र, लक्ष्मण, भरत, शत्रुघ्न, सीता, कौशल्या, सुमित्रा, दशरथ, कृतास्त्र, अविरोध और वसिष्ठ, कामदेव अरु अष्टमंत्री ये लोग जीवन्मुक्त होय विचरे हैं. तिन मंत्रियोंके नाम सुन—धृष्टि १, जयंत २, भास ३, विभीषण ४, इंद्रजित ५, हनुमंत ६, जय ७, सुषेण ८ ये अष्टमंत्री हैं सो निःशंक होय, चेष्टा करत भये हैं अरु सदा अद्वैतनिष्ठ हुए हैं. इनको कदाचित् स्वरूपते द्वैतभाव नहीं हुआ, अनामयपदविषे स्थितिमें तृप्त रहे, जो केवल चिन्मात्र, शुद्धपद, परमपावनताको प्राप्त हुए हैं.

इति श्रीयोगवासिष्ठेवैराग्यप्रकरणेकथारंभवर्णनंनामद्वितीयःसर्गः॥२॥

तृतीयः सर्गः ३ ।

अथ तीर्थयात्रावर्णनम् ।

भरद्वाज उवाच—हे भगवन्! जीवन्मुक्तकी स्थिति कैसी है अरु रामजी कैसे जीवन्मुक्तहुए हैं,सो आदितेलेकर अंतपर्यंत सब कहो.

वाल्मीकिरुवाच—हे पुत्र ! यह जगत् जो भासता है सो वास्तविक कछु नहीं उत्पन्न भया. अविचारकरके भासता है. विचार कियेते निवृत्त हो जाता है, जैसे आकाशमें नीलता भासती है, सो भ्रम करके है, जब विचारकरके देखिये तब नीलताप्रतीति दूर हो जाती है, तैसे अविचार करके जगत् भासता है अरु विचारते लीन हो जाता है. हे शिष्य ! जबलग सृष्टिका अत्यंत अभाव नहीं होता, तबलग परमपदकी प्राप्ति नहीं होती. जब दृश्यका अत्यंत अभाव होय जावे, तब पीछे शुद्ध चिदाकाश आत्मसत्ता भासेगी. कोई इस दृश्यको महाप्रलयमें कदाचित् अभाव कहते हैं, परंतु मैं तुझको तीनोंही कालका अभाव कहता हूं सो सतशास्त्रकर इस शास्त्रमें श्रद्धासंयुक्त आदिते लेकर, अंतपर्यंत श्रवण कर अरु तिनको धार, तब तिसकी भ्रांति निवृत्त होय जावे, अरु अव्याकृत पदकी प्राप्ति होवे. हे शिष्य ! संसार भ्रममात्र सिद्ध है; इसको भ्रममात्र जानकर विस्मरण करना, सो मुक्ति है. अरु इसको बंधनका कारण वासना है. जीव वासना-करके भटकता फिरता है. जब वासनाका क्षय हो जाय, तब पर-मपदकी प्राप्ति होवे. वासनामें फिरता है, तिसका नाम मन है. जैसे जल शरदीकी दृढ जड़ता पायके बर्फ होता है, पीछे सूर्यके तापते गल-कर जल होता है, तब केवल शुद्ध जल होय रहता है, तैसे आत्मरूपी जल है. तिसविषे संसारकी सत्यतारूपी जड़ता शीतलता है. तिस-करके मनरूपी बर्फका पुतला हुआ है. जब ज्ञानरूपी सूर्य उदय होवेगा, तब संसारकी सत्यतारूपी जड़ता, शीतलता, निवृत्त होजावेगी.

जब संसारकी सत्यता अरु वासना निवृत्त हुई, तब मन नष्ट हो जावेगा. जब मन नष्ट हुआ, तब परमकल्याण हुआ. ताते इसको बंध-नका कारण वासना है अरु वासनाके क्षय हुयेते मुक्ति है. सो वासना दो प्रकारकी है. एक शुद्ध अरु दूसरी अशुद्ध. सो अपने वास्तविक स्वरू-

पके अज्ञानते अनात्मा जो देहादिक, तिनमें अहंकार करना, सो जव अनात्ममें आत्म-अभिमान हुआ, तव नाना प्रकारकी वासनायें उपजती हैं, तिसकरके घटीयंत्रकी नांई चक्र भमता है. हे साधु ! यह जो पंच भूतोंका शरीर तू देखता है, सो वासनारूप है. वासना है सोही चक्र है. जैसे मटके धागेके आश्रयतें खड़े होते हैं और जव धागा टूट पड़ा, तव मटका न्यारा न्यारा होय पड़ता है अरु ठहरता नहीं है, तैसे वासनाके क्षय हुए पंचभूतोंका शरीर नहीं रहता. तातें सव अनर्थका कारण वासना है. अरु जो शुद्ध वासना है,तिसमें जगत्का अत्यंत अभाव निश्चय होता है. हे शिष्य ! अज्ञानीका जो निश्चय है, सो वासनाकर वहुरि जन्मका कारण हो जाता है अरु ज्ञानीकी वासना है, सो वहुरि जन्मका कारण नहीं होती है. जैसे एक कच्चा वीज होता है, दूसरा दग्धवीज होता है, तिसमें जो कच्चा है सो वहुरि उगता है अरु जो दग्ध हुआ है सो वहुरि नहीं उगता, तैसे अज्ञानीकी वासना है. सो रसरहित है, सो जन्मका कारण है अरु ज्ञानीकी वासना है सो रससहित है, सो जन्मका कारण नहीं. ज्ञानीकी चेष्टा स्वाभाविक गुण करके खडी होती है, और किसी गुणके साथ मिलकर, अपनेमें चेष्टा दहीं देखता. खाता है,पीता है, लेता है, देता है, वोलता है, चलता है, विचार करता है,परंतु अंतर सदा अद्वैतनिश्चयको धरता है. कदाचित् द्वैतभावना तिसको होती नहीं है. अपने स्वभावविषे स्थित है. तातें निर्गुण अरु अरूप है;ताकी चेष्टा जन्मका कारण नहीं है. जैसे कुम्हारका चक्र है, सो जवलग उसको फेर चढ़ावे, तवलग वह फिरता है और जव फेर चढ़ावना छोड़ दिया, तव स्थीयमानगतिसे उतरता उतरता फिरके स्थिर रह जाता है, तैसे जवलग अहंकारसहित वासना होती है, तवलग जन्म पावता है; जव अहंकारते रहित हुआ तव वहुरि जन्म नहीं पावता है. हे साधु ! यह जो अज्ञानरूपी वासना

है, तिसको नाश करनेका उपाय एक ब्रह्मविद्या श्रेष्ठ है. ब्रह्मविद्या मोक्षउपायका शास्त्र है. जब इसते और शास्त्रमें गिरेगा तब कल्पपर्यंतहू अव्याकृत पदको न पावेगा, अरु जो ब्रह्मविद्या आश्रय करेगा सो सुखसों आत्मपदको प्राप्त होवेगा॰ हे भरद्वाज! यह मोक्षउपाय रामजी अरु वासिष्ठजीका संवाद है सो विचारने योग्य है; बोधका परम कारण है. ताते आदिसों अंतपर्यंत मोक्षउपाय श्रवण कर जैसे रामजी जीवन्मुक्त होय विचरे हैं सो सुन-

एक दिन रामजी विद्या पढके, अध्ययनशालाते अपने गृहमें आये अरु संपूर्ण दिन विचार करनेहीमें व्यतीत करादिया. बहुरि मनमें तीर्थ ठाकुरद्वारका संकल्प धर, पिता दशरथके पास आये॰ पितासों मिलके जो संपूर्ण प्रजाको सुखमें राखते थे अरु सब प्रजा तिसके निटक रहिके सुख पाई, तिन दशरथजीका चरण श्रीरघुनाथजीने ग्रहण किया. जैसे सुंदर कमलको हंस ग्रहण करे तैसे पिताका चरण ग्रहण किया. जैसे कमलके तरे कोमल तरियां होती हैं तिन तरियोंसहित, कमलको हंस पकड़ता है, तैसे दशरथजीकी अंगुरीनको रामजीने ग्रहण किया अरु बोले कि-हे पिता ! मेरा चित्त तीर्थ अरु ठाकुरद्वारके दर्शनको उठा है, ताते तुम आज्ञा करो, तो मैं तीर्थका अरु ठाकुरद्वारेका दर्शन कर आऊं. मैं तुह्मारा पुत्र हूं, तुमको पालना करनी योग्य है और आपसे आगे मैंने कभी कहा नहीं; यही प्रार्थना अब करी है. ताते तुम आज्ञा देहु जो मैं जाऊं. यह वचन मेरा फेरना नहीं. काहेते कि-ऐसा त्रिलोकीमें कोउ नहीं है, जिसका मनोरथ इस वरते सिद्ध हुआ नहीं है; सबका मनोरथ सिद्ध हुआ है. ताते मुझको कृपा कर आज्ञा देहु॰

वाल्मीकिरुवाच-हे भरद्वाज ! इसप्रकार जब रामजीने कहा, तब वसिष्ठजी पास बैठे, तिननेभी दशरथसे कहा कि-हे राजन् !

रामजीको आज्ञा देहु, सो तीर्थ कर आवें. क्योंकि--इनका चित्त उठा है ओर ये राजकुमार हैं, इससे इसके साथ सेना दीजे, धन दीजे, मंत्री दीजे, ब्राह्मण दीजे, जिससे ये दर्शन कर आवें.

हे भरद्वाज ! जब ऐसे विचार किया, तब शुभ मुहूर्त देखकर, रामजीको आज्ञा दीनी. जब चलने लगे, पिता अरु माताके चरण लगे अरु सबको कंठ लगाइ, रुदन करने लगे तिनको मिलकर आगे चले. अरु लक्ष्मण आदि जो भाई हैं और मंत्री थे, तिनको साथ लेकर अरु वसिष्ठ आदि जो ब्राह्मण विधिके जाननेवाले थे, अरु बहुत धन, बहुत सेना यह सब साथ ले चले और दानपुण्य करके, जब गृहके बाहर निकसे, तब वहांके जो लोग थे अरु स्त्रियां थीं तिन सबने रामजीके ऊपर फूल अरु फूलोंकी मालावोंकी वर्षा करी. सो वर्षा बर्फ बरसती है ऐसी दीखती थी. अरु रामजीकी जो मूर्त्ति है सो हृदयमें धर लीनी. इसप्रकार रामजी वहांसे चले, तहां ब्राह्मण अरु निर्धनोंको दान देते देते तीर्थ जो गंगा, यमुना, सरस्वती आदि देखे हैं, इनमें विधिसंयुक्त स्नान कर, पृथ्वीके चारों कोन--उत्तर, दक्षिण, पूर्व, पश्चिमको दान किया. अरु चारों ओर समुद्रके स्नान किये, अरु सुमेरुपर्वतपर गये, हिमालय पर्वतपर गये अरु शालिग्राम, बद्रीकेदार-आदि गंगामें स्नान किये अरु दर्शन किये. ऐसे सब तीर्थ स्नान, दान, तप, ध्यान विधिसंयुक्त यात्रा करत भये. जैसी जैसी जहां विधि थी तैसी तैसी तहां करी; एकवर्षमें संपूर्ण यात्रा करके रामजी बहुरि अपने घरमें आये.

इति श्रीयोगवासिष्ठे वैराग्यप्रकरणे तीर्थयात्रावर्णनं नाम तृतीयः सर्गः ॥ ३ ॥

चतुर्थः सर्गः ४ ।



अथ दिवसव्यवहारवर्णनम् ।

वाल्मीकिरुवाच—हे भरद्वाज! जब रामजी यात्रा करके अपनी अयोध्यामें आवत भये, तब नगरवासी लोग पुरुष और स्त्री फूलनकी वर्षा करत भये. अरु जय जय जय शब्द मुखते उच्चारने लगे अरु प्रेमहास्य करने लगे और जैसे इंद्रका पुत्र अपने स्वर्गमें आवत है, तैसे रामचंद्रजी अपने घरमें आये. पहिले राजा दशरथको प्रणाम कर फिर वसिष्ठजीको प्रणाम कर, फिर सब सभाके लोगोंको यथायोग्य मिले फिर अंतःपुरमें आवत भये. तहां कौशल्या आदि जो माता थीं, इनको यथायोग्य नमस्कार किये और जो भाई, बांधव, कुटुंबी थे तिन सबको मिले.

हे भरद्वाज! इसप्रकार रामजीके आवनेका उत्साह अष्टदिनपर्यंत होता रहा. वा समयमें कोई मिलने आवे, कोई कछु लेने आवे, तिनको दान, पुण्य करत बाजे बजत उत्साह हुआ. भाट—आदि स्तुति करने लगे. तदनंतर रामजीका आचरण हुआ सो सुन. प्रातःकालमें उठके स्नानसंध्यादिक सत्कर्म करते, बहुरि भोजन करते, बहुरि भाई—बंधुको मिल, अपने तीर्थकी कथा करते. देवद्वारके दर्शनकी वार्ता करते. इसप्रकारसों उत्साहकर, दिन-रातको बितावते थे.

इति श्रीयोगवासिष्ठे वैराग्यप्रकरणे दिवसव्यवहारवर्णनं नाम चतुर्थः सर्गः ॥ ५ ॥

पञ्चमः सर्गः ५ ।



अथ कार्श्यवर्णनम् ।

एक दिन प्रातःकालमें उठके, पिताजी दशरथको देखे सो जैसे इं-

द्रका तेज है, तैसे तेजवान् देखा अरु वसिष्ठादिककी सभा बैठी थी तहां वसिष्ठजीके साथ कथा वार्ता रामजी करते होते, तहां एक दिन राजा दशरथ कहत भये कि—रामचन्द्र ! तुम शिकार खेलने जायवो करो. ता समयमें रामजीकी अवस्था वर्ष १६ में थोरेके महिना कमती थी. तब राजकुमार रामजीके साथ लक्ष्मण अरु शत्रुघ्न भाई थे, भरत ननिहारेको गये थे. फिर तिनके साथ स्नान संध्यादिक नित्य कर्म करके, भोजन करके शिकार खेलने जाते. तहाँ जो जीवनको दुःख देनेहारे जानवर देखते तिनको मारते, अरु और लोगोंको प्रसन्न करते. इसप्रकार दिनको शिकार खेलते, रात्रिको निसान बजाते अपने घरमें आवते. ऐसे करते केतेक दिन बीते, तामें रामजी अपने अंतःपुरमें आय सबका त्याग करके एकांतमें चिंतन करत बैठि रहते.

हे भरद्वाज! जेती कछु राजकुमारकी चेष्टायें सो सबको रामजीने त्याग कर दीनी थीं, जेते कछु रसयुक्त इंद्रियोंको विषय हैं, इनको त्यागके शरीरते दुर्बल जैसे होगये. मुखकी कांति घटगई. पीत वर्ण होगया. जैसे कमल सूखके पीतवर्ण होय जाता है तैसे रामजीका मुख पीला होगया. अरु जैसे सूखे कमलपर भँवरे बैठते हैं, तैसे सूखे मुखकमलपर नेत्ररूपी भँवरे भासने लगे. सोहू शोभा होवन लगी. अरु इच्छा निवृत्त होय गई. जैसे शरत्कालमें ताल निर्मल होता है, तैसे इच्छारूपी मलनते रहित चित्तरूप तालहू निर्मल होगया. तैसे वासना निवृत्त होते दिन दिनपै शरीर निर्मल होगया अरु जहां बैठे तहां चिंतासंयुक्त बैठे रहि जावें, उठें नहीं. अरु बैठें तब हाथपै चिबुक धरके बैठें. जब टहलुए मंत्री बहुत कहहिं, कि–हे प्रभो! यह स्नानसंध्याका समय हुआहै सो अब उठो तब उठकर, स्नानादिक करहिं, अरु हृदयमें न विचारहिं. जेती कछु खाने, पीने, बोलने, चलने, पहिरनेकी क्रिया है, सो सब विरस होय

गईं, ऐसे रामचंद्रजी भये. तब लक्ष्मण अरु शत्रुघ्नहू रामजीको संशयसंयुक्त देखके, तिसप्रकार हो बैठे. तब—

दशरथ यह वार्ता सुनके रामजीके पास आय बैठे अरु देखे तब महाकृशहोगये हैं.इस चिंताकरके आतुर हुए, कि-हाय २ इनकी क्या अवस्था हुई है ! इस शोकके लिये रामजीको गोदमें बैठाये अरु पूँछनेलगे. कोमल सुंदर शब्द करके बोले कि-हे पुत्र ! तुमको क्या दुःख प्राप्त भया है जिसकरके तुम शोकवान् हुयेहो ? तब रामजीने कहाकि-हे पिता ! हमको तो दुःख कोऊ नहीं है ऐसे कहिके चुप होरहे. जब केतेक दिवस इसप्रकार व्यतीत भये, तब दशरथ शोकवान् हुए अरु सब स्त्रियांभी शोकवान् भई. अरु राजा व मंत्री मिलके विचार करनेलगे, कि-पुत्रका किसी ठौर विवाह करना. अरु यहभी बिचार किया कि—यह क्या हुआ है ? जो मेरे पुत्र शोकवान् होय रहते हैं. तब वसिष्ठजीसे पूँछा कि हे मुनीश्वर ! मेरे पुत्र शोकमें क्यों रहते हैं ? तब—

वसिष्ठजीने कहा कि—हे राजन् ! महापुरुषको जो क्रोध होता है सो किसी अल्प कारणकर नहीं होता अरु मोहभी अल्प कारणकर नहीं होता अरु शोकभी अल्पकारणकर नहीं होता. जैसे पृथ्वी, जल, तेज, वायु व आकाश जो महाभूत हैं सो अल्पकार्यमें विकारवान् नहीं होते. जब जगत्की उत्पत्ति प्रलय होता है तब विकारवान् होते हैं, तैसे महापुरुष अल्पकार्य्यमें विकारवान् नहीं होते. तातें हे राजन् ! तुम शोक करने योग्य नहीं अरु रामजी जो शोकवान् हुए हैं सोभी किसी अर्थके निमित्त होयँगे, पीछे इनको सुख मिलेगा; तुम शोक मत करो.

इति श्रीयोगवासिष्ठे वैराग्यप्रकरणे कार्श्यवर्णनं नाम पञ्चमः सर्गः ॥ ५ ॥

षष्ठः सर्गः ६ ।



अथ विश्वामित्रागमनवर्णनम् ।

वाल्मीकिरुवाच—हे भरद्वाज ! ऐसे वसिष्ठजी अरु राजा दशरथ विचार करतेथे तिसकालमें विश्वामित्रजी अपने यज्ञके सहायके अर्थ आवत भये. राजा दशरथके गृहमें आयकर, पौरियासों कहत भये कि–राजा दशरथसे कहो कि–गाधिके पुत्र विश्वामित्र बाहर खडे हैं. तब इसमें और बड़े पौरियाको जाय कहा कि–हे स्वामी ! एक बड़े तपस्वी द्वारपै आय खडे हैं उन्हें हमसे कहा है कि–राजा दशरथके पास जाय कहो, कि–विश्वामित्र आये हैं. सो सुनके संपूर्ण मंडलेश्वरकर पूज्य जो राजा दशरथ सबनसहित अपने सिंहासनपर बैठे हैं और जो बडे तेजकर संपन्न हैं, तिनसे कहा कि–विश्वामित्रने हमसे कहा है कि दशरथ पास जाय कहो, कि–गाधिके पुत्र विश्वामित्र बाहर खडे हैं.

हे भरद्वाज ! जब इसप्रकार बडे पौरियाने राजासों कहा तब राजा सुनकर सुवर्णके सिंहासनसे उठ खडे हुए अरु चरणोंकरके चले. एक ओर वसिष्ठजी और दूसरी ओर वामदेवजी. अरु सुभटकी नाईं मंडलेश्वर स्तुति करत चले. जब जहांते विश्वामित्रजी दृष्टि आये तब तहांते प्रणाम करने लगे. जहां पृथ्वीपर शीश राजाका लागे तहां पृथ्वीभी हीरा मोतीकी सुंदर होय जावे. इसप्रकार शीश नमावत नमावत राजा दशरथ विश्वामित्रके आगे चले अरु बडी जटा शिरपरते कांधपर परी है, ऐसे विश्वामित्र अग्निकी नाईं प्रकाशित हैं अरु शरीर सुवर्णकी नाईं प्रकाशता है, अरु हृदयमें शांति, कोमल स्वभाव जाननेमें आवे ऐसे अरु महातेजवान, सुंदर कांति अरु शांतिरूप अरु हाथमें बाँसकी लकड़ी अरु महाधैर्यवान्, ऐसे विश्वामित्रको प्रणाम करत राजा दशरथ चरणोंके ऊपर जाय गिरे. जैसे सूर्य सदाशिवके चरणोंपर जाय गिरे थे,

तैसे मस्तक नमाय कर, कहा कि—मेरे बडे भाग्य हुये जो तुह्मारा दर्शन हुआ है. हमारे ऊपर तुमने बड़ा अनुग्रह किया है. हमको बड़ा आनंद प्राप्त हुआ है जो अनादि, अनंत है, आदि, मध्य, अंतते रहित अविनाशी है, ऐसा जो अकृत्रिम आनंद है, सो तुह्मारे दर्शन कर मुझको प्राप्त हुआ दृष्टिमें आवता है. हे भगवन् ! आज मेरे बडे भाग्य हुए हैं, जो मैं धर्मात्माके गिननेमें आऊंगा. काहेते कि—जो तुम मेरे कुशल निमित्त आये हो. हे भगवन् ! तुह्मारा आना हमारे लक्ष्यमें नहीं था अरु तुमने बडा अनुग्रह किया है. जैसे सूर्य कोई कार्य करनेको पृथ्वीपर आवें, तैसे तुम मुझको दृष्टिमें आवते हो, अरु सबते उत्कृष्ट दृष्टिमें आवते हो. काहेते कि—तुममें दो गुण हैं एक तो क्षत्रियका स्वभाव तुह्मारेमें है अरु दूसरा ब्राह्मणका स्वभावभी तुह्मारेमें भासता है. अरु शुभ गुणकर संपूर्ण हो: हे मुनीश्वर ! तुम क्षत्रियमेंते ब्राह्मण भये हो. ऐसी कोईकी सामर्थ्य नहीं देखी. अरु तुह्मारा शरीर प्रकाशवान् दीखता है अरु जिस मार्गसे तुम आये हो अरु जिस मार्गमें तुम दृष्टि करत आये हो, तहां तहां अमृतवृष्टि करत आये हो, ऐसा दृष्टि आता है. हे मुनीश्वर ! तुम आये सो तुह्मारे दर्शन कर मुझको बडा लाभ है.

हे भरद्वाज ! इसप्रकार राजा दशरथ विश्वामित्रसे बोले अरु वसिष्ठजी आयकर, विश्वामित्रको कंठ लगायके मिले. और जो मंडलेश्वर राजा थे सो बहुत प्रणाम कर, इसप्रकार सब मिले. तब विश्वामित्रको राजा दशरथ घरमें ले आये. जहां राजसिंहासन था, तहां आनकर बिठाया अरु वसिष्ठ, वामदेवको बिठाये. और राजा दशरथने विश्वामित्रका पूजन किया, अरु अर्घ्य पादार्चन करके, प्रदक्षिणाकरिके बहुरि वसिष्ठजीने विश्वामित्रका पूजन किया अरु विश्वामित्रने वसिष्ठजीका पूजन किया; ऐसे अन्योन्यपूजन हुआ: इसप्रकार पूजन करके सब अपने २ आसनपर यथायोग्य बैठे.

तब राजा दशरथ बोले कि–हे भगवन्! हमारे बड़े भाग्य हैं जो तुह्मारा दर्शन हुआ. जैसे कोऊ तप्तको अमृतप्राप्ति होवे अरु जन्मांधको नेत्र प्राप्त होवें, सो आनंद पावे, जैसे निर्धनको चिंतामणि प्राप्त होवे, अरुआनंदको पावे अरु जैसे किसीका बांधव मरा होय, सो विमानपर चढ़ा हुआ आकाशते आवे, उसको जैसा आनंद प्राप्त होवे, तैसे तुह्मारे दर्शन कर, मैं आनंदको प्राप्त हुआ हूं. हे मुनीश्वर ! तुह्मारा आना जिसके अर्थ हुआ है, सो कृपा करके कहो. अरु जो तुह्मारा अर्थ है, सो पूर्ण हुआ जानो. काहेते कि–ऐसा पदार्थ कोई नहीं है, जो तुमको देना कठिन है. सब कछु मेरे विद्यमान है. जो तुह्मारा अर्थ है सो निश्चय कर, जानने योग्य होय रहा है. जो कछु तुम आज्ञा करोगे सो मैं देऊंगा.

इति श्रीयोग० वैरा० विश्वामित्रागमनवर्णनं नाम षष्ठः सर्गः ॥ ६ ॥

सप्तमः सर्गः ७।

अथ विश्वामित्रेच्छावर्णनम् ।

वाल्मीकि उवाच—हे भरद्वाज ! जब इसप्रकार राजा दशरथने कहा, तब मुनिनमें शार्दूल जो विश्वामित्र, सो बहुत प्रसन्न भये, अरु रोम खडे हो आये. जैसे पूर्णमासीके चंद्रमाको देखके क्षीरसागर प्रसन्न होता है, तैसे प्रसन्न होकर, कहत भये कि–हे राजशार्दूल ! तुम धन्य हो ! ऐसा क्यों न होवे? जो कि—तुह्मारेमें दो गुण श्रेष्ठ हैं. एक तोरघुवंशी हो, दूसरा वसिष्ठजी तुह्मारे गुरु हैं, तिनकी आज्ञामें चलते हो.

ताते हे राजन्! जो कछु मेरा प्रयोजन है सो तुह्मारे आगे प्रगट करता हूं, श्रवण करो. दशरात्र यज्ञका मैंने आरंभ किया है, सो जब यज्ञको करने लगताहूं, तबराक्षस मारीच अरु सुबाहु उस यज्ञको

तोर डारते हैं. जहा जहां मैं जायकर यज्ञ करताहूं, तहां तहां आयकर,अपवित्र जो रुधिर अरु मांस अरु अस्थि सो डारते हैं. सो स्थान यज्ञ करनेयोग्य नहीं रहता. और बहुरि मैं और ठौर करने लगता हूं; तहांभी उसी प्रकार अपवित्र कर जाते हैं. तिनके नाश करनेके निमित्त मैं तुम्हारेपास आया हूं. कदाचित् ऐसे कहो कि—तुमभी तो समर्थ हो; तो हे राजन् ! मैंनें यज्ञका आरंभ किया है, तिसका अंग क्षमा है, जो उसको मैं शाप देऊं, तो वह भस्म हो जावे, परंतु शाप क्रोधविना होत नहीं. अरु क्रोध कियेते यज्ञ निष्फल होजाता है. अरु जो मैं चुप हो रहूँ तो वह राक्षस अपवित्र वस्तु डार जाते हैं, ताते मैं तुम्हारी शरण आया हूं,मेरा कार्य करो.हे राजन् ! तुम्हारे जो रामजी पुत्र हैं, सो कमलनयन काकपक्षसंयुक्त हैं, इससे यह जो बालक दूसरो साथ रहे है तिसको मेरे साथ देहू, जो राक्षसोंको मारे; तब मेरा यज्ञ सफल होय. और तुमको ऐसा शोक करना नहीं चाहिये कि—मेरा पुत्र बालक है. यह तो बड़े इंद्रके समान शूरबीर हैं, इनके समीप वह राक्षस ठहर न सकेंगे. जैसे सिंहके सन्मुख मृगके बच्चे ठहर नहीं सकते, तैसे तुम्हारे पुत्रोंके सन्मुख राक्षस न ठहर सकेंगे. ताते मेरे साथ उनको तुम देहु. जो तुम्हाराभी धर्म रहै अरु यशभी रहै. मेरा कार्यभी होवे. इसमें संदेह नहीं करना.

हे राजन् ! ऐसा पदार्थ त्रिलोकीमें कोई नहीं जो रामजीका किया कछु न होवे. इसीते मैं तुह्मारे पुत्रोंको लिये जाता हूं. यह मेरे करसों ढांप रहेंगे. अरु इनको कोई विघ्न मैं होने न देऊंगा अरु जो तेरे पुत्र वस्तु हैं सो मैं जानता हूं; और वसिष्ठजीहू जानते हैं. और जो ज्ञानवान् त्रिकालदर्शी होवेगा, सोभी इनको जानता होयगा. और कोईकी सामर्थ्यता नहीं है जो इनको जानसके. ताते तुम इनको मेरे साथ देहू जो मेरे कार्यकी सिद्धि होय.

हे राजन् ! जो समयपर कार्य होता है, सो थोरे करनेसेभी बहुत सिद्धि पाता है. जैसे द्वितीयाके चंद्रमाको देखके, एक तंतु (धागे) का दान किया होय सोभी बहुत है, पीछे वस्त्रका दान किय तौभी तैसा कार्य सिद्ध नहीं होता, तैस समयपर थोडा कार्यभी बहुत सिद्धिको देता है अरु समयविना बहुत कार्यभी थोरे फलको देता है. ताते आप मेरे साथ रामजीको दीजे.

सुबाहु मारीच ए बडे दैत्य हैं. सो आयकर मेरा यज्ञ खंडन करते हैं. जब रामजी जावेंगे, तब वह भाग जायँगे. रामजी के आगे खडे न होय सकैंगे. इनके तेजसे वह सब अल्पबल हो जावेंगे. जैसे सूर्यके तेजकरके तारागणका प्रकाश छिप जाता है, तैसे रामजीके दर्शनसे वह स्थित न रहैंगे. जैसे गरुडके आगे सर्प नहीं ठहर सक्ते, तैसे रामजीके आगे राक्षस न ठहर सकैंगे. देखकर भाग जायँगे. ताते तुम मेरे साथ देहु जो मेरा कार्य होवे अरु तुम्हारा धर्मभी रहे. रामजीके निमित्त संदेह मत करना. वह राक्षसोंकी सामर्थ्य नहीं जो रामजीके निकट आवे अरु मैंभी रामजीकी रक्षा करूंगा.

वाल्मीकि उवाच—हे भरद्वाज! जब विश्वामित्रने ऐसा कहा तब राजा दशरथ सुनकर चुप रहे अरु गिरपडे, एक मुहूर्त पर्यंत पडे रहे.

इति श्रीयोगवासिष्ठे वैराग्यप्रकरणे विश्वामित्रेच्छावर्णनं नाम सप्तमः सर्गः ॥ ७ ॥

अष्टमः सर्गः ८ ।

अथ दशरथोक्तिवर्णनम् ।

वाल्मीकि उवाच—हे भरद्वाज ! एक मुहूर्त पीछे राजा उठे अरु महादीनसे होगये अरु महामोहको प्राप्त होय गये. धैर्यते रहित होकर, बोले कि—

राजोवाच–हे मुनीश्वर ! तुमने क्या कहा ? रामजी अभी तो कुमार हैं. शस्त्रविद्या, अस्त्रविद्याभी सीखे नहीं हैं, अभी तो फूलनकी शय्यापर शयन करनेवारे हैं, वह युद्धको क्या जानें ? अंतःपुरमें स्त्रियनके पास बैठनेवाले हैं, राजकुमार बालकनके साथ खेलनेवाले हैं और कदाचित् रणभूमि देखीहू नहीं है. भृकुटीको चढ़ायके, कदाचित् युद्ध भी नहीं किया. अरु कमलकी नांई जिनके हाथ हैं अरु कोमल जिनका शरीर है, वह राक्षसके साथ युद्ध कैसे करैंगे ? कहूं पत्थरका अरु कमलकाभी युद्ध हुआ है ? रामजीका वपु कमलसमान कोमल है अरु वह राक्षस महाक्रूर पत्थरकीनांई हैं; उनके साथ इनका युद्ध कैसे होवेगा?

हे मुनीश्वर ! मैं नव सहस्र वर्षका हुआ हूं; अब दशवां सहस्र लगाहै, वृद्ध हुआ हूं. यह वृद्धावस्थामें मेरे घर पुत्र हुवे हैं सो चारोंके मध्य रामजी कमलनयन, कछु षोड़श वर्षके हुए हैं. अरु मुझको बहुत प्रियतम हैं. अरु मेरे प्राण हैं. रामजीबिन मैं एक क्षणभी रहि नहीं सक्ता. जो तुम इनको ले जाओगे, तो मेरे प्राण निकल जांयगे. मैं मृतक हो जाऊंगा.

हे मुनीश्वर ! केवल मेराही ऐसा स्नेह सो नहीं है. उनका भाई जो लक्ष्मण, भरत, शत्रुघ्न, अरु उनकी माता जो हैं, इन सबहीके प्राण रामजी हैं. जो तुम रामजीको ले जाओगे, तो हम सबही मर जांयगे. वियोगकरके जो हमको मारने आये हो तो ले जाओ. हे मुनीश्वर ! मेरे चित्तमें रामही व्याप रहे हैं ! तिनको मैं तुह्मारे साथ कैसे देऊं ? मैं उनको देखते देखते प्रसन्न होता हूं जैसे पूर्णमासीके चंद्रमाको देखकर, क्षीरसमुद्र प्रसन्न होता है, अरु चंद्रको देखकर चकोर प्रसन्न होता है अरु स्वातीके मेघ बूँदको देखकर, पपीहा प्रसन्न होता है, तैसे रामजीको देखकर, मैं प्रसन्न होता हूं. तब रामजीके वियोगकरके मेरा जीवन कैसा होयगा ? हे मुनीश्वर ! मेरेको रामजी जैसे प्रिय तैसे स्त्रीभी नहीं अरु धनभी ऐसा प्रिय नहीं, अरु राज्यभी ऐसा प्रिय नहीं

और पदार्थभी मुझको कोई रामके समान नहीं है. ऐसे रामजी प्यारे हैं.

हे मुनीश्वर! तुह्मारे वचन सुनके मैं बड़े शोकको प्राप्त हुआ हूं. मेरे बडे अभाग्य आये हैं, जो तुह्मारा आना इस निमित्त हुआ है. तुह्मारे वचन सुनकर जैसे कमलके ऊपर पत्थरकी वर्षा होय ऐसी व्यथा मेरे-को होती है अरु पत्थरकी वर्षाते जैसे कमल नष्ट होजाते हैं तैसे तुह्मारे वचनसे मेरी नष्टता होजायगी. जैसे बड़ा मेघ चढ़ आवे, तामें बड़ा पवन चलै तब मेघकी गंभीरताका अभाव होय जाय, तैसे तुह्मारे वचनते मेरी बडी प्रसन्नताका अभाव होय जाता है. जैसे वसंत ऋतुकी मंजरी, ज्येष्ठ आषाढमें सूख जाती है, तैसे तुह्मारे वचन सुन, मेरे हृदयकी प्रसन्नता जर जाती है. हे मुनीश्वर ! रामजीको देनेमें मैं समर्थ नहीं हूं. जो तुम कहो तो एक अक्षौहिणी सेना मेरी है, सो बड़े शूरवीरोंकी है, जिसको शस्त्रविद्या, अस्त्रविद्या, मंत्रविद्या, सब आवती है. और सबै युद्धमें चतुर हैं. तिनके साथ मैं तुह्मारे संग चलता हूं; वहां जायके मैं उनको मारूंगा. अरु हस्ती, घोडा, रथ प्यादे ऐसी चतुरंगिनी सेनाको साथ ले जाओ. अरु जो तुह्मारे यज्ञके खंडनहारे हैं तिनका नाश करो. अरु एकके साथ मैं युद्ध न कर सकूंगा. जो कदाचित् यज्ञखंडनहार कुबेरका भाई अरु विश्रवाका पुत्र रावण होवे तो उसके साथ युद्ध करनेको मैं समर्थ नहीं.

हे मुनीश्वर! आगे मेरेमें बडा पराक्रम था, वैसा त्रिलोकीमें किसीको नहीं था. जो मेरे निकट मारनेको आता, तो वाको मैं मार देता अब मेरी वृद्धावस्था हुई है अरु देह जर्जरीभावको प्राप्त हुआ है, इस कारण रावणके साथ युद्ध करनेको मैं समर्थ नहीं हूं.

हे मुनीश्वर ! मेरे बडे अभाग्य हैं जो तुह्मारा आना इसनिमित्त हुआ है. अब मेरा वैसा पराक्रम नहीं. मैं रावणसों काँपता हूं; केवल मैंही नहीं काँपता; इंद्रादिक देवता सब रावणसे काँपते हैं. अरु

राक्षस सब उसके वशमें वर्त्तते हैं. अब किसीको शक्ति नहीं है जो रावणके साथ युद्ध करे, इस कालमें वह बड़ा शूरवी .

हे मुनीश्वर! जब मेरी समर्थताभी नहीं रही, तौ राजकुमार रामजी कैसे समर्थ होवेंगे ? अरु जिन रामजीको लेने तुम आये हो सो रोगी हो रहे हैं, उनको चिंता ऐसी आय लगी है, जिससे वह महादुर्बल होगये हैं. अरु अंतःपुरमें एकांतमें बैठे रहते हैं. खाना, पीना इत्यादिक जो राजकुमारकी चेष्टा हैं, सो सब उनको विरस होगई हैं. अरु मैं नहीं जानता कि–उनको क्या दुःख प्राप्त हुवा है. जैसे कमल सूखके पीतवर्ण होजाता है तैसे उनका मुख होगया है. उनको युद्ध करनेकी समर्थता नहीं. अरु उन्होंने अपने स्थानते बाहरकी पृथ्वीभी नहीं देखी है, सो युद्ध कैसे करेंगे ?

हे मुनीश्वर! वह युद्ध करनेको समर्थ नहीं है, अरु हमारे प्राण वही हैं. जो उनका वियोग होवेगा तो हमारा जीवना नहीं होवेगा. जैसे जल बिना मछली जीवती नहीं है, तैसे हम रामजी बिना कैसे जीवेंगे अरु जो राक्षसके युद्धनिमित्तक हो तो हम तुह्मारे साथ चलें अरु रामजी युद्ध करनेको योग्य नहीं.

इति श्रीयोगवासिष्ठे वैराग्यप्रकरणे दशरथोक्तिवर्णनं नामाष्टमः सर्गः ॥ ८ ॥

नवमः सर्गः ९।

अथ वसिष्ठसमाश्वासनवर्णनम्।

वाल्मीकिरुवाच–हे भरद्वाज ! जब इसप्रकार राजा दशरथने कहा, तब महादीन जैसे मोहसहित अधीर्यवान् वचन सुनकर क्रोधसों विश्वामित्र कहत भये.

विश्वामित्र उवाच—हे राजन्! तुम अपने धर्मको सुमिरण करो. यह प्रतिज्ञा तुमने करी है कि "जो तुह्मारा अर्थ होवेगा सो पूर्ण करूंगा; और पूर्णहुआ जानना" ऐसा तुमने कहा है;अब तुम अपने धर्मको त्यागते हो और जो तुम सिंह हो मृगोंकी नांई भागते हो तो भागो; परंतु आगे रघुवंशमें ऐसा कोई नहीं हुआ. जैसा चंद्रमाके मंडलमें शीतलता होती है, अग्नि निकसता नहीं है, तैसे तुह्मारे कुलविषे ऐसा कदाचित् नहीं हुआ, अरु जो तुम करते हो तो करो, हम उठ जायँगे. काहेते कि—सूने गृहते सूनेई जाताहै.परंतु यह तुमको योग्य न था, अरु तुम वसते रहो, राज्य करते रहो, जो कछु होवेगा सो हम समझ लेयगें, अरु जो अपने धर्मको तुम त्यागते हो तो त्याग दो.

वाल्मीकिरुवाच—हे भरद्वाज! इसप्रकार जब अत्यंत क्रोधवान् होकर, विश्वामित्र वोले, तब इनके क्रोध करनेसे सकल पृथ्वी काँपने लगी अरु इंद्रादिक देवताभी भयको प्राप्त हुवे; कि—ये क्या हुआ? तब वासिष्ठजी वोले.

वासिष्ठ उवाच—हे राजा! इक्ष्वाकुके कुलमें सब परमार्थी हुए हैं और तुम अपने धर्मको क्यों त्यागते हो? हमारे सन्मुख तुमने कहा है. कि—" जो तुह्मारा अर्थ होवेगा, सो मैं पूर्ण करूंगा." अब तुम क्यों भागते हो! रामजी साथ दो, अरु यह तुह्मारे पुत्रकी रक्षा करेंगे. जैसे सर्पते अमृतकी रक्षा गरुड करते हैं, तैसे तुह्मारे पुत्रकी रक्षा यह करेंगे, अरु यह कैसे पुरुष हैं, सो श्रवण करो. इनके समान वल किसीका नहीं, ये साक्षात् वलके मूर्ति अरु धर्मात्मा हैं, साक्षात् धर्मकी मूर्ति हैं.अरु ऐसा तपस्वी कोऊ नहीं है अरु तपकी खानि है. अरु इनके समान कोऊ बुद्धिमान् नहीं है अरु इनके समान कोई शूरभी नहीं है. अरु अस्त्र—विद्यामेंभी इनके तुल्य कोऊ नहीं है. काहेते कि—जो दक्षप्रजापतिकी दो पुत्री थीं, एक जया अरु दूसरी सुप्रभा.

सो ये ऋषिको दीनी हैं अरु जया थी तिसमें दैत्योंके मारने निमित्त पांचसौ पुत्रोंको प्रगट किये थे, अरु सुप्रभाके भी पांचसौ पुत्र भये थे सो सब दैत्योंके नाशनिमित्त उत्पन्न किये थे सो स्त्रियां इनके विद्यमान मूर्ति धरके स्थित हुई हैं. ताते इनको जीतनेको कोऊ समर्थ नहीं है. जिसके साथी विश्वामित्र होवें सो त्रिलोकीमें काहूसों नहीं डरे. ताते इनके साथ तुम अपने पुत्र दो, अरु संशय मत करो, किसीकी सामर्थ्य नहीं जो इनके होते तुम्हारे पुत्रको कछु कोऊ कहि सके. इनकी दृष्टिसे देखनेते दुःखका अभाव हो जाता है. जैसे सूर्यके उदयते अंधकारका अभाव हो जाता है तैसे.

हे राजन् ! इनके साथ तुम्हारे पुत्रको खेद कहां होवे ? तुम इक्ष्वाकुके कुलके हो अरु दशरथ तुम्हारा नाम है. सो तुम्हारे जैसे धर्मात्मा जब अपने धर्ममें स्थित न रहें तो और जीवते धर्मकी पालना कैसे होयगी ? जो कछु श्रेष्ठ पुरुष चेष्टा करते हैं, तिनके अनुसार और जीव करते हैं. जो तुमसरिखे अपने वचनकी पालना न करैंगे तब और सों कहा बनैगी ? अरु तुम्हारे कुलमें ऐसा कबहुँ नहीं हुवा; ताते अपने धर्मको त्यागना योग्य नहीं. तुम अपने पुत्रको दो. अरु जो तुम उनको भयकरके शोकमान होवो तौभी ना मति कहो. और मूर्त्तिधारी काल आयकर स्थित होवे तौभी विश्वामित्रके विद्यमान रहते तुह्मारे पुत्रको कछु होवे नहीं, इनके विद्यमान रहते मराभी नर जी उठता है. तुम शोक मत करो; अपने पुत्रको इनके साथ दो. अरु जो न दोगे तौ दोऊ प्रकारका तुम्हारा धर्म नष्ट होवेगा; एक धर्म यह है कि जो कूप, बावली, ताल कराये होयँगे तिनका जो पुण्य है, सो नष्ट हो जावेगा; अरु तप, व्रत, यज्ञ, दान स्नानादिकका जो पुण्य है अरु क्रिया हैं तिन सबका फल नष्ट होजावेगा और तुह्मारा गृह निरर्थ होय जावेगा. ताते मोह अरु शोकको त्यागो अरु अपने धर्मका स्मरण करो.

रामजीको इनके साथ दे दो. तुम्हारे सब कार्य सफल होवेंगे.

हे राजन् ! जो इसप्रकार तुमको करना था, तो प्रथमही विचारकर कहना था. काहेते कि–विचारविना काम करनेका परिणाम दुःख होता है. ताते इनके साथ अपने पुत्रको देदो.

इति श्रीयोगवासिष्ठे वैराग्यप्रकरणे वसिष्ठसमाश्वासन-
वर्णनं नाम नवमः सर्गः ॥ ९ ॥

दशमः सर्गः १० ।

अथ रामविषादवर्णनम् ।

वाल्मीकिरुवाच—हे भरद्वाज ! जब इसप्रकार वसिष्ठजीने कहा, तब राजा दशरथ धैर्यवान् होकर भृत्योंमें जो श्रेष्ठ भृत्य था, वाको बुलायकर, कहत भये कि–हे महाबाहु ! लक्ष्मणसह रामजीको ले आओ. तब इनके साथ जो चाकर अंदर वहार आवने जानेवारा था अरु छलते रहित था, सो रामकी आज्ञा लेकर, रामजीके निकट गया और एक मुहूर्त पीछे पीछा आया. अरु कहत भया कि–हे देव ! रामजी तो वड़ी चिंतामें बैठे हैं. मैंने रामजीसे वारंवार कहा कि–अब चलिये, तब वे कहते हैं कि–चले हैं. ऐसे कहि कहि चुप हो रहते हैं.

हे भरद्वाज ! इसप्रकार जब राजाने श्रवण किया तब कहा कि–रामजीके मंत्री अरु टहलुए सब बुलावो. सेवक सबको बुलाय निकट लाये. तब राजा आदरसों कोमल सुंदर वचन युक्तिसे कहत भयो कि हे रामजीके प्यारो ! रामजीकी कहा दशा है ? और ऐसी दशा क्योंकर हुई है ? सो सब क्रमकरके कहो.

भृत्य उवाच—हे देव ' हम कहा कहैं ?' जेते हम कछु दृष्टि आवते हैं सो सब आकार अरु प्राण देखनेमात्र हम हैं, अरु मृतक हैं. काहेते कि–हमारे स्वामी रामजी वडी चिंताको प्राप्त हुए हैं.

हे राजन्! जिस दिनसे रघुनाथजी तीर्थ कर आये हैं तिसी दिनसे चिंताको प्राप्त भये हैं. जब उत्तम भोजन हम ले जाते हैं और पानकरनेका पदार्थ और पहरनेका पदार्थ अरु देखनेका पदार्थ और कछु लेजाते हैं, सो सुखदाई पदार्थ रससहित तिसे देखके, किसीप्रकार प्रसन्न होते हमने नहीं देखा. ऐसे चिंताके विषे वे लीन हैं कि--देखतेभी नहीं अरु जो देखते हैं तो क्रोध करते हैं अरु सुखदाई पदार्थका निरादर करते हैं. अरु अंतःपुरमें इनकी माता,नानाप्रकारके हीरेअरु मणिके भूषण देती हैं, तो उनकोभी डार देते हैं, नहीं तो किसी निर्धनको दे देते हैं. प्रसन्न किसी पदार्थपै होते नहीं हैं, सुंदर स्त्रियां खडी विद्यमान होती हैं, नानाप्रकारके भूषणनसहित महामोह करनेहारी निकट होइकर, प्रसन्न करनेके निमित्त कटाक्षहुसहित लीलाकरती हैं, तौभी विषवत् जानते हैं, उनकी ओर देखतभी नहीं. जैसे पपीहा और जलको देखताभी नहीं. जब अंतःपुरविषे होके निकसते हैं, तब उनको देखकर, क्रोधवान होते हैं.

हे राजन ! और कछु उनको भला नहीं लगता.किसी बड़ी चिंता विषे मग्न हैं, और तृप्त होकर, भोजनभी नहीं करते,क्षुधावंत रहते हैं. और न कछु पहरने खाने पीनेकी इच्छा रखते हैं; न राज्यकी इच्छा है, न किसी इंद्रियहूके सुखकी इच्छा है.महा उन्मत्तकी नाई बैठे रहते हैं. अरु जब कोई सुखदाई पदार्थ फूलादिक ले जाते हैं, तब क्रोध करते हैं, हम नहीं जानते कि--क्या चिंता उनको भई है. एक कोठरीमें पद्मासन करि अरु हाथमें मुख धर बैठे रहते हैं अरु जो कोऊ बड़ा मंत्री आयके पूंछता है, तब उससे कहते हैं--कि तुम जिसको संपदा मानते हो सोई आपदा है. जिसको आपदा जानते हो सो आपदा नहीं है अरु नानाप्रकारके संसारके पदार्थ जो रमणीयकरके जानते हो, सो सब झूंठे हैं. याहीमें सब डूबे हैं.ये सब मृगतृष्णाके जलवत् हैं तिनको सत्य जान, मूर्ख जो हरिण सो दौरते हैं अरु दुःख पाते हैं.

हे राजन् ! कदाचित् बोलते हैं तो ऐसे बोलते हैं और कछु उनके उरमें सुखदायी नहीं भासता है. अरु जो हम हँसीकी वार्त्ता करते हैं तौ वे हँसते नहीं हैं. जिस पदार्थको प्रीतिसे युक्त लेते थे तिस पदार्थको अब डारि देते हैं अरु दिनदिनपै दुर्बल हुये जाते हैं अरु जब अंतःपुरमें स्त्रियोंके पास बैठते हैं, अरु वे नानाप्रकारकी चेष्टा रामजीको प्रसन्न करनेके निमित्त देखावती हैं,उनकोभी देखके प्रसन्न नहीं होते. अरु जैसे मेघकी बूंदोंसे पर्वत चलायमान नहीं होते हैं, तैसे आप चलायमान नहीं होते हैं. अरु जो बोलते हैं तो ऐसे कहते हैं कि—न राज्य सत्य है, न भोग सत्य है, न जगत् सत्य है, न मित्र सत्य हैं; मिथ्या पदार्थके निमित्त मूर्ख बड़े २ यत्न करते हैं. जिनको सत्य जानते हैं अरुसुखदायक जानते हैं सो बंधनका कारण हैं और कहा कहिये ? जो कोई उनके पास राजा अथवा पंडित जाते तिनको देखकर कहते हैं कि—यह पशु हैं, आशारूपी फांसीसे बांधे हुये हैं.

हे राजन् ! जो कछु भोग्य पदार्थ हैं तिनको देखकर, उनका चित्त प्रसन्न नहीं होता, अरु देखके क्रोधवान् होते हैं. जैसे पपीहा मारवाड़में आवे अरु मेघकी बूँदहू देखता नहीं है अरु खेदवान् होता है, तैसे रामजी विषयते खेदवान् होते हैं. हे राजन् ! इनकरके हर्षवान् नहीं होते, ताते हम जानते हैं कि—इनको परमपद पानेकी इच्छा है. परन्तु कदाचित मुखते सुना नहीं है. अरु त्यागका अभिमानभी कदाचित् सुना नहीं. कबहुं गाते हैं अरुबोलते हैं तब ऐसे कहते हैं कि—हाय ! हाय !! मैं अनाथ मारागया हूं. अरे मूर्ख ! तुम संसारसमुद्रमें क्यों डूबते हो ? यह संसार परम अनर्थका कारण है, इसमें सुख कदाचित्भी नहीं है; इससे छूटनेका उपाय करो.

हे राजन् ! ऐसाभी कभी हम सुनते हैं, अरु किसीके साथ बोलते नहीं हैं—न मंत्रीके साथ, न अपने अंतःपुरनकी स्त्रियोंके साथ,

न माताके साथ बोलते हैं, किसी परमचिंतामें मग्न हैं. अरु किसी पदार्थकर आश्चर्यवान् नहीं होते. जो कोऊ कहे कि-आकाशमें बाग लगा, तिसमें फूल फूले हैं, तिनको मैं ले आया हूं, तिसको सुनकरभी आश्चर्यवान् नहीं होते. सब भ्रममात्र देखते हैं. न किसी पदार्थसे उनको हर्ष होता है, न किसी पदार्थसे उनको शोक होता है. किसी बड़ी चिंतामें मग्न हैं. सो किसीको चिंता निवारनेमें हम समर्थ नहीं देखते हैं. वे तो चिंताके समुद्रमें मग्न हैं. हे राजन् ! यह चिंता हमको लगरही है कि-रामजीको न खानेकी इच्छा है, न पहिरनेकी इच्छा है, न डोलनेकी, न देखनेकी इच्छा रही है, और न किसी कर्मकी इच्छा रही है. ताते मृतक न हो जावें ऐसी हमें चिंता है. अरु जो कोऊ कहता है कि-तुम चक्रवर्ती राजा हो, तुह्मारो बड़ा आयुर्बल होइ अरु बड़े सुखको पाओ. तब तिसका वचन सुन उसको कठोर बोलते हैं.

हे राजन् ! केवल रामजीहीको ऐसी चिंता नहीं; किंतु लक्ष्मण अरु शत्रुघ्नकोभी ऐसी चिंता लगरही है ! रामको देखकर, कोऊ उनकी चिंता दूर करनेहारा होवे तो करे; नहीं तो वे बड़ी चिंतामध्य डूब रहैंगे. किसी पदार्थकी इच्छा उनको नहीं रहती है.

हे राजन् ! अब कहा कहते हो ? तुह्मारे पुत्र रामचन्द्र अब अतीत ह्वै रहे हैं. एक वस्त्र उपरना ओढ़कर बैठे हैं. ताते सोई उपाय करो. जिससे उनकी चिंता निवृत्त होवे.

इति श्रीयोगवासिष्ठे वैराग्यप्रकरणे रामविषादवर्णनं नाम दशमः सर्गः ॥ १० ॥

एकादशः सर्गः ११ ।

अथ रामसमाश्वासनवर्णनम् ।

विश्वामित्र उवाच—हे साधु ! जो रामजी ऐसे हैं, तो हमारे पास विद्यमान लाओ, हम उनका दुःख निवृत्त करेंगे. हे राजा दशरथ ! तुम बडे धन्य हो, कि—जिनका पुत्र विवेक अरु वैराग्यको प्राप्त भया. हे राजन् ! हम तुह्मारे पुत्रको परमपदकी प्राप्ति करावेंगे. अभी सब दुःख उनके मिट जायँगे. हम वसिष्ठादि जो बैठे सो एक युक्तिकर उपदेश करेंगे; तिसकरके उनको आत्मपदकी प्राप्ति होवेगी; तब वह दशा तुह्मारे पुत्रकी होवेगी; जो लोष्ठ, पत्थर अरु सुवर्णको समान जानेंगे, अरु जो कछु तुह्मारे क्षत्रियकी प्रवृत्तिका आचरण है सो करेंगे, अरु जो हृदयमें भमते उदासी होवेंगे. ताते हे राजन् ! उस करके तुह्मारा कुल कृतकृत्य होवेगा. ताते रामजीको शीघ्र बोलावहु.

वाल्मीकिरुवाच—हे भरद्वाज ! ऐसे मुनींद्रके वचन सुनकर, राजा दशरथ, मंत्री अरु नौकरोंसे कहत भये कि—रामजी, लक्ष्मण अरु शत्रुघ्नको लेआवो. जब राजा दशरथने ऐसा कहा तब मंत्री अरु भृत्यने रामजीके पास जायके कहा, तब रामजी आये. सो आवत आवत राजा दशरथ अरु वसिष्ठजी अरु विश्वामित्रको देखे, कि—तिनके ऊपर चमर होयरहे हैं; अरु बडे मंडलेश्वर बैठे हैं. तिन्होंहू रामजीको देखे, जो शरीरते कृश होय हैं. जैसे महादेवजी स्वामिकार्तिकको आवत देखें तैसे रामजीको आवत राजा दशरथ देखते हैं. तहां रामजीने आयकर राजा दशरथजीके चरणोंपै मस्तक लगाय नमस्कार किया फिर तैसेई वसिष्ठजीको अरु विश्वामित्रको नमस्कार किया. बहुरि सभामें जो ब्राह्मण बडे बडे बैठे थे, तिनकोहू नमस्कार किये अरु जो बड़े बड़े मंडलेश्वर बैठे थे तिनने उठकर, रामजीको प्रणाम किया; फिर

राजा दशरथने रामजीको गोदमें बैठाया अरु देखकर मस्तक चूमा, अरु बहुत प्रेमपुलकित होय रामसों कहत भये कि-हे पुत्र! केवल विरक्तता कर परमपदकी प्राप्ति नहीं होती है. किंतु वसिष्ठजी गुरु हैं, तिनके उपदेशकी युक्तिकर परमपदकी प्राप्ति होयगी.

श्रीवसिष्ठ उवाच—हे रामजी! तुम धन्य हो अरु बडे शूर हो, जो विषयरूपी शत्रु तुमने जीते हैं. जो विषय अजीत हैं अरु दुष्ट हैं ताको तुमने जीता. ताते तुम धन्य हो ! धन्य हो ! !

विश्वामित्र उवाच—हे कमलनयन राम ! तुम अपने अंतरकी जो चपलता है, तिसको त्याग करके, जो कछु तुम्हारा आशय होय सो प्रकट कर कहो. हे रामजी! यह जो तुमको मोह प्राप्त हुआ है, सो कैसे अरु किस कारण हुआ है? अरु कैताक है? सो कहो. अरु जो अब कछु तुमको वांछित होय सो कहो, हम तुमको तिसीपदमें प्राप्त करेंगे, जिसमें दुःख कदाचित् होवे नहीं और आकाशको चूहा काटि नहीं सकता है, तैसे तुमको पीडा कदाचित् न होवेगी. हे रामजी! तुम्हारे संपूर्ण दुःख नाश कर देयँगे, तुम संशय मत करो. जो कछु तुम्हारा वृत्तांत होय सो हमसे कहो.

वाल्मीकिरुवाच—हे भरद्वाज ! जब ऐसे विश्वामित्रने कहा सो सुनकर रामजी बहुत प्रसन्न भये अरु शोकको त्याग दिया. जैसे मेघको देखके मोर प्रसन्न होते हैं, तैसे विश्वामित्रके वचन सुन रामजी प्रसन्न हुये अरु उन्होंने अपने हृदयमें निश्चय किया कि-अब मुझको उस पदकी प्राप्ति होवेगी.

इति श्रीयोगवासिष्ठे वैराग्यप्रकरणे रामसमाश्वासनवर्णनं नाम एकादशः सर्गः ॥ ११ ॥

द्वादशः सर्गः १२ ।

अथ रामवैराग्यवर्णनम् ।

वाल्मीकिरुवाच—हे भरद्वाज ! ऐसे मुनीश्वरके वचनको सुनके रामजी वहुत प्रसन्न होयके वोले.

श्रीराम उवाच—हे भगवन् ! जो वृत्तांत है सो तुम्हारे विद्यमान क्रम करके कहता हूं. इन राजा दशरथके घरमें जो मैं उत्पन्न भया हूं, वहुरि क्रमकरके वड़ा हुआ हूं, उपवीत पाया हूं अरु चारों वेद पढ़कर, ब्रह्मचर्यादि व्रत पाया हूं; तापीछे एक दिन पढ़के मैं घरमें आया, तब मेरे हृदयमें वात आय रही कि—तीर्थाटन करूं अरु देवद्वारमें जायके देवनके दर्शन करूं; तव मैं पिताकी आज्ञा लेकर तीर्थको गया. अरु गंगाआदि संपूर्ण तीर्थोंमें स्नान किया; अरु शालग्राम अरु केदारआदि ठाकुरके विधिसंयुक्त दर्शन किये अरु यात्रा करके इहां आया फिर उत्साह हुआ.

तव मेरे मनमें विचार आया, कि—प्रातःकाल उठके स्नानसंध्यादिक कर्म करना, बहुरि भोजन करना. ऐसे इसप्रकारसों केतेक दिन व्यतीत भये, तब मेरे हृदयमें विचार उत्पन्न हुआ सो विचार हृदयको खेंच लेगया. जैसे नदीके तटपर तृण लता होते हैं, तिसको नदीका प्रवाह खेंच लेजाता है, तैसे मेरे हृदयमें जो कुछ जगत्की आस्थारूप तृणलता थी, सो विचाररूपी प्रवाह ले गया. तव मैं जानता भया कि—राज्य करके क्या है ? अरु भोगते क्या है ? अरु जगत् क्या है ? सव भ्रममात्र है. इसकी वासना मूर्ख रखते हैं. यह स्थावर—जंगमरूपी जितना कछु जगत है सो सव मिथ्या है.

हे मुनीश्वर ! जेते कछु पदार्थ हैं, सो मनसों हैं सो मनभी भ्रममात्र है. अनहोता मन दुःखदायी हुआ है. मन जो पदार्थ सत्य जानकर

दौड़ता है अरु सुखदायक जानता है, सो मृगतृष्णाके जलवत् है. जैसे मृगतृष्णाको देखकर, मृग दौरता है अरु है नहीं; सो मृग दौरते दौरते थकके पड़जाता है; तौहू जल तिसको प्राप्त नहीं होता. तैसे मूर्ख जीव पदार्थको सुखदायी जानकर, भोगनेका यत्न करता है, अरु शांतिको नहीं पाता है; तैसे—

हे मुनीश्वर ! इंद्रियनके भोग सर्पवत हैं. जिनका मारा हुआ जन्ममरणको पाता है. जन्मते जन्मांतरको पाता है. भोग अरु जगत् सब भ्रममात्र है. तिनविषे जो आस्था करते हैं सो महामूर्ख हैं, ऐसा मैं विचार करके जानता हूं जो सब आगमापाई हैं. इसलिये यह जो आवतेहू हैं अरु जातेहू हैं. ताते जिस पदार्थका नाश न होय, सो पदार्थ पावनेयोग्य है, इसीकारणते मैंने भोगका त्याग किया है.

हे मुनीश्वर ! जेते कछु संपदारूप पदार्थ भासते हैं, सो सब आपदा हैं. इनमें रंचकहू सुख नहीं है. जब इनका वियोग होता है, तब कंटककी नाईं मनमें चुभता है. जब इंद्रियको भोग प्राप्त होता है, तब रागदोषकर जलता है, अरु जब नहीं प्राप्त होता तब तृष्णाकर जलता है ताते भोग दुःखरूप है; जैसे पत्थरकी शिलामें छिद्र नहीं होता, तैसे भोगरूपी दुःखकी शिलामें रंचकभी सुखरूपी छिद्र नहीं होता है.

हे मुनीश्वर ! विषयकी तृष्णामें बहुत कालको जलता रहा हूं. जैसे हरे वृक्षके छिद्रमें रंचक अग्नि धरा होय, तब धुवाँ होय थोरा थोरा जलता रहता है, तैसे भोगरूपी अग्निकरके मन जलता रहता है. यहां विषयमें सुख कच्छुहू नहीं अरु दुःख बहुत है. इनकी इच्छा करनी सोई मूर्खता है. जैसे खाईके ऊपर तृण अरु पात होता है, तिसकर खाई आच्छादित होय जाती है, तिसको देखके, हरिण कूद पडता है अरु दुःख पाता है, तैसे मूर्ख, भोगको सुखरूप जानके भोगनेकी इच्छा करता है, जब भोगता है तब जन्मते जन्मांतररूप खाईमें जाय पड़ते हैं, अरु दुःख पाते हैं.

हे मुनीश्वर ! भोगरूपी चोर है; सो अज्ञानरूपी रात्रिमें लूटने लगता है अरु आत्मरूपी धन है, तिसको ले जाता है, तिसके वियोगते महादीन रहता है. अरु जिस भोगके निमित्त यह यत्न करता है सो दुःखरूप है, शांतिको प्राप्त नहीं होता. अरु जिस शरीरके अभिमान करके यह यत्न करता है, सो शरीर क्षणभंग होता है अरु असार है. जिसको सदा भोगकी इच्छा रहती है, सो मूर्ख अरु जड़ है, इसका बोलना चालना भी ऐसा है, जैसे सूखे बाँसके छिद्रमें पवन जाता है अरु पवनके वेगकर शब्द होता है, तैसे वह मनुष्यकी वासना है. जैसे थका हुआ मनुष्य मारवाड़के मार्गकी इच्छा नहीं करता, तैसे दुःख जानकर, मैं भोगकी इच्छा नहीं करता हूं.

इति श्रीयोगवासिष्ठे वैराग्यप्रकरणे रामवैराग्यवर्णनं नाम द्वादशः सर्गः ॥ १२ ॥

त्रयोदशः सर्गः १३ ।

अथ लक्ष्मीतिरस्कारवर्णनम् ।

राम उवाच—अरु यह जो लक्ष्मी है सो परम अनर्थकारी है. जबलग इसकी प्राप्ति नहीं होती तबलग तिसके पानेका यत्न होता है. अरु अनर्थ करके प्राप्ति होती है. अरु जब प्राप्ति हुई तब सब गुणका नाश कर देती है. शीलता, संतोष, धर्म, उदारता, कोमलता, वैराग्य, विचार, दयादिक गुणोंका नाश करती है. जब ऐसे गुणोंका नाश हुवा, तब सुख कहांते होय? परम आपदा प्राप्त होती है. परमदुःकारण जानकर, मैंने इसका त्याग किया है. हे मुनीश्वर ! इसमें गुण तबलग है, जबलग लक्ष्मीकी नहीं प्राप्ति भई. जब लक्ष्मीकी प्राप्ति भई तब सब गुण नाश होजाते हैं. जैसे वसंतऋतुकी मंजरी हरि-

थल तबलग रहती है जबलग ज्येष्ठ, आषाढ़ नहीं आया; जब ज्येष्ठ आषाढ़ आया तब मंजरी जरजाती है. तैसे लक्ष्मीकी प्राप्ति भई तब सब शुभ जरजाते हैं, अरु मधुर वचन तबलग बोलता है; जबलग लक्ष्मीकी प्राप्ति नहीं होती है. जब लक्ष्मीकी प्राप्ति भई, तब कोमलताका अभाव हो कठोर होजाता है. जैसे जल पतला तबलग रहता है जबलग शीतलताका संयोग नहीं होय. जब शीतलताका संयोग होता है तब बर्फ होकर, कठोर दुःखदायक हो जाता है, तैसे यह जीव लक्ष्मी पाकर जड़ हो जाता है.

हे मुनीश्वर! जो कछु संपदा है सो आपदाका मूल है; काहेते कि जब लक्ष्मीकी प्राप्ति होती है तब बड़े सुखको भोगता है; अरु जब तिसका अभाव होता है तब तृष्णाकरके जलता है. जन्मते जन्मांतरको पाता है. लक्ष्मीकी इच्छा है, सोइ मूर्खता है. यह तो क्षण-भंग है. याते भोग उपजता है अरु नाशभी होता है. जैसे जलसे तरंग उपजते हैं, अरु मिट जाते हैं, अरु बिजुली स्थिर नहीं होती है तैसे भोगहू स्थिर नहीं रहते हैं. अब पुरुषमें शुभ गुण तबलग हैं, जबलग तृष्णाका स्पर्श नहीं किया, जब तृष्णा भई तब शुभ गुणका अभाव होय जाता है. जैसे दुधमें मधुरता तबलग है, जबलग उसका सर्पने स्पर्श नहीं किया, जब सर्पने स्पर्श किया, तब दूध है सो विषरूप होजाता है

हे मुनीश्वर! लक्ष्मी देखने मात्रहीमें सुंदर है, अरु जब इसकी प्राप्ति हुई तब सद्गुणका नाश कर देती है. जैसे विषकी लता देखने मात्रको सुंदर है अरु स्पर्श कियेते मार डालती है, तैसे लक्ष्मीकी प्राप्ति हुए, आत्मपदते मृतक होता है. अरु महादीन होय जाता है, जैसे तबलग किसीके घरमें चिंतामणि दबी रही, ताको खोदकर लेवे नहीं, तबलग दरिद्री रहता है तैसे अज्ञानकर ज्ञानबिना महादीन जैसा होय रहताहै, आत्मानंदको पाय नहीं सकता. आत्मानंदके पानेका जो मार्ग है, तिसके

नाश करनहारी लक्ष्मी है.इसकी प्राप्तिते जीव महाअंध हो जाता है.

हे मुनीश्वर ! जब दीपक प्रज्वलित होता है, तब उसका बड़ा प्रकाश दृष्टि आता है. जब दीपक बुझ जाता है, तब प्रकाशका अभाव हो जाता है.अरु काजरकी समक्षता रह जाती है जो वारंवार वासना उपजती थी सो रहती है. तैसे जब इस लक्ष्मीकी प्राप्ति होती है तब बड़े भोग उसको भुगवाती है, अरु तृष्णारूप काजर उसते उपजता रहता है.जब लक्ष्मीका अभाव होता है तब वासना तृष्णाकी समक्षता छांड जाती है. तिस वासना करके अनेक जन्मको पाता है.शांतिको कदाचित् नहीं प्राप्त होता.

हे मुनीश्वर ! जब जिसको लक्ष्मीकी प्राप्ति होती है, तब शांतिके उपजावनहारे गुणका नाश करती है.जैसे जबलग पवन नहीं चलता, तबलग मेघ रहता है; जब पवन चला कि--मेघका अभाव होजाता है तैसे लक्ष्मीकी प्राप्ति हुए गुणका अभाव होता है,अरु गर्वकी उत्पत्ति होती है.

हे मुनीश्वर ! जो शूर होके अपने मुखते अपनी बड़ाई न कहै सो दुर्लभ है अरु समर्थ हो किसीकी अवज्ञा न करे, सबमें समबुद्धि रखे सो दुर्लभ है. तैसे लक्ष्मीवान् होकर शुभगुणसंयुक्त हो सोभी दुर्लभ है.

हे मुनीश्वर ! तृष्णारूपी जो सर्प है तिसको बढानेका स्थान लक्ष्मीरूपी दूध है, सो पीता पवनरूपी भोगका आहार करती कदाचित् अघाता नहीं अरु महामोहरूप उन्मत्त हस्ती है तिसको फिरनेका स्थान पर्वतकी अटवीरूपी लक्ष्मी है अरु गुणरूप जो सूर्यमुखी कमल है तिसकी लक्ष्मी रात्रि है अरु भोगरूपी चंद्रमुखी कमल है, तिसकी लक्ष्मी चंद्रमा है. अरु वैराग्यरूप जो कमलिनी है तिसके नाश करनेहारी लक्ष्मी बर्फ है. अरु ज्ञानरूपी जो चंद्रमा है तिसका आच्छादन करनेहारी लक्ष्मी राहु है. अरु मोहरूपी जो उलूक है तिसकी यह रात्रि है. अरु दुःखरूपी जो बिजुरी है

तिसको लक्ष्मी आकाश है. अरु तृष्णारूपी जो लता है तिसको बढ़ानेहारी लक्ष्मी मेघ है. अरु तृष्णारूप जो तरंग है, तिसकी लक्ष्मी समुद्र है. अरु भोगरूपी जो पिशाच है, तिसकी लक्ष्मी स्थान है. अरु तृष्णारूपी भँवरको लक्ष्मी कमलिनी है. जन्मके दुःखरूप जलको यह लक्ष्मी ताल है.

हे मुनीश्वर ! देखनेमात्र यह सुंदर लगती है अरु दुःखका कारण है. जैसे खड्गकी धार देखनेमात्र सुंदर होती है अरु विचारूपी मेघका नाश करनेमें लक्ष्मी वायु है.

हे मुनीश्वर ! यह मैंने विचार कर देखा है. इसमें सुख कछुहू नहीं अरु संतोषरूपी मेघका नाश करनहारा यह शरत्काल है. अरु इस मनुष्यमें गुण तबलग दृष्टि आवें जबलग लक्ष्मीकी प्राप्ति नहीं भई. जब लक्ष्मीकी प्राप्ति होती है तब शुभ गुण नाश पाते हैं.

हे मुनीश्वर ! लक्ष्मी ऐसी दुःखदायक जानकर, इसकी इच्छा मैंने त्याग दीनी है. यह भोग मिथ्यारूप है. जैसे बिजुरी प्रगट होय छिप जाती है, तेसे यह लक्ष्मीहू प्रगट होय छिप जाती है. जैसे जल है सो हिम है, तैसे लक्ष्मीकी ज्योति है सो हिम मूर्ख जडके आश्रयते है, इसको छलरूप जानकर मैंने त्याग किया है.

इति श्रीयोगवासिष्ठे वैराग्यप्रकरणे लक्ष्मीतिरस्कारवर्णनं नाम त्रयोदशः सर्गः ॥ १३ ॥

चतुर्दशः सर्गः १४।

अथ जीवितानिन्दावर्णनम् ।

श्रीराम उवाच—हे मुनीश्वर ! जैसे कमल पत्रके उपर जलकी

बूँद नहीं रहती है, तैसे आयु क्षणभंग है. जैसे जलके तरंग होयके नाश पाते हैं, तैसे आयु होयके नाश पाती है.

हे मुनीश्वर ! पवनको रोकना कठिन है सोभी कोऊ रोका है, अरु आकाशका चूर्ण करना अतिकठिन है, सोभी कोऊ चूर्ण कर धारे, अरु बिजुलीको रोकना अतिकठिन है, सोभी कोऊ रोके है, परंतु आयु स्थिर होवे नहीं. जैसे शशाके सींगसों कोऊ मार नहीं सकता अरु कांचके ऊपर जैसे मोती नहीं ठहरता है, जैसे तरंगकी गांठ नहीं परती है, तैसे आयुभी स्थिर नहीं रहती है. आयु तो बिजुलीके चमक जैसी है. सो होतीहू है अरु मिटभी जाती है, अरु जो आयु पायके आप अमर हुआ चाहे, सो महामूर्ख जानना अरु जो क्षणभंगुर शरीर पायकर, भोगकी वांछा करता है, सो महाआपदाका पात्र है, तिसको जीनेते मरना श्रेष्ठ है. जीनेकी आशा मूर्ख करते हैं, सो अपने नाशके निमित्त करते हैं, जैसे स्त्री जो गर्भकी इच्छा करती है, सो अपने नाशके निमित्त करती है.

अरु जो ज्ञानवान् पुरुष हैं, जिनकी परमपदमें स्थिति है अरु तिसकर तृप्ति पाये हैं, तिनका जीना सुखके निमित्त है. तिनके जीनेते औरका कार्यभी सिद्ध होजाता है. तिनका जीना चिंतामणिकी नाईं श्रेष्ठ है. अरु जिनको सदा भोगकी इच्छा रहती है और आत्मपदते विमुख हैं तिनका जीना किसी सुखके निमित्त नहीं है. वह मनुष्य नहीं, गर्दभ है. अरु जैसे वृक्ष, पक्षी पशुका जीना तैसे तिसकाभी जीना है.

हे मुनीश्वर ! जिस पुरुषने शास्त्र पढ़ा है अरु पानेयोग्य पद नहीं पाया, तब शास्त्र उसको भाररूप है. जैसे औरका भार होता है, तैसे पढ़नेकाभी भार है. अरु पढ़के विचारचर्चा करता है और तिसके सारको नहीं ग्रहण करता तो यह विचारचर्चाहू भार है.

हे मुनीश्वर ! मन जो है, सो आकाशरूप है. सो मनमें जो शांति न आई, तो मनहू उसको भार है. अरु जिसने मनुष्यशरीरको पाया है, उसको अभिमान नहीं त्यागता है तो यह शरीरभी उसको भारहै, यह शरीरका जीना तबही श्रेष्ठ है जब आत्मपदको पावे, अन्यथा उसका जीना व्यर्थ है. और आत्मपदकी प्राप्ति अभ्याससे होती है. जैसे जल पृथ्वीते खोदते निकसता है, तैसे अभ्यास कर आत्मपदकी प्राप्ति होती है. अरु जो आत्मपदते विमुख होय, आशाकी फांसीमें फँसे हैं सो संसारमें भटकते रहते हैं.

हे मुनीश्वर ! संसारसागरमें देहरूप लता फेनवत् क्षणभंग है, इसको पायके, जो अभिमान करता है सो मूर्ख है. जैसे बिल्ली चूहाको पकडनेके लिये पड़ी रहती है, तैसे उनको नरकमें डालनेके लिये, घरमें पड़ी रहती है, जैसे अंजलीमें जल नहीं ठहरता, तैसे आयु चली जाती है. ऐसी क्षणभंग आयु अरु शरीरको पायकर जो भोगकी तृष्णा करते हैं, सो महामूर्ख हैं सो मृत्युके मुखमें परे हुए जीनेकी आशा करते हैं. जैसे सर्पके मुखमें मेंढक पड़ता है, सो मच्छरको खानेकी इच्छा करता है, याते सो महामूर्ख है, तैसे यह पुरुष मृत्युके मुखमें परा हुआ भोगकी वांछा करता है सो महामूर्ख है.

अरु युवा अवस्था नदीके प्रवाहकी नांई चली जाती है, बहुरि वृद्धावस्था प्राप्त होती है, तामें महादुःख प्रगट होते हैं अरु शरीर जर्जर होय जाता है, फिर मरता है. इक क्षणहुं मृत्यु इनको विसारती नहीं है, सदाई देखत रहता है, जैसे महाकामी पुरुषको सुंदर स्त्री मिलती है, तब उसको देखनेका त्याग नहीं करता, तैसे मृत्यु मनुष्यको देखे बिना नहीं रहती है.

हे मुनीश्वर ! मूर्ख पुरुषका जीना दुःखके निमित्त है. जैसे वृद्ध मनुष्यका जीना दुःखका कारण है, तैसे अज्ञानीका जीना दुःखका

कारण है. उसको बहुत जीनेते मरना श्रेष्ठ है. जिस पुरुषने मनुष्य-शरीर पायकर, आत्मपद पानेका यत्न नहीं किया तिसने आपही आपना नाश किया है, सो आत्महत्यारा है.

हे मुनीश्वर! यह माया बहुत सुंदर भासती है, अरु आखिर नाशको पाती है. जैसे वृक्षको अंतरते घुन खाय जाता है अरु बाहरते बहुत सुंदर दीखता है, तैसे यह पुरुष बाहरते सुंदर दृष्टि आता है अरु अंतरते इसको तृष्णा खाय जाती है.जो पदार्थको सत्य अरु सुखरूप जानकर, सुखके निमित्त आश्रय करता है सो सुखी नहीं होता है. जैसे नदीमें सर्पको पकड़के पार उतरा चाहे, सो पार नहीं उतरता है, वह मूर्खता करके डूबेईगा; तैसे जो संसारके पदार्थको सुखरूप जानकर आश्रय करता है, सो सुख नहीं पाता संसारसमुद्रमेंही डूब जाता है.

हे मुनीश्वर! यह संसार इंद्रधनुषकी नाईं है. जैसे इंद्रधनुष बहुत रंगका दृष्टिमें आता है अरु तिसते अर्थसिद्धि कछु नहीं होती है, तैसे यह संसार भ्रममात्र है इसमें सुखकी इच्छा रखनी व्यर्थ है. इस प्रकार जगतको मैंने असत्‌रूप जानकर निर्वासना होनेकी इच्छा करी है.

इति श्रीयोगवासिष्ठे वैराग्यप्रकरणे जीवितनिंदानिषेध-वर्णनं नाम चतुर्दशः सर्गः ॥ १४ ॥

पञ्चदशः सर्गः १५।



अथ अहंकारनिन्दावर्णनम्।

श्रीराम उवाच–हे मुनीश्वर! यह जो अहंकार उदय हुवा सो अज्ञानते महादुष्ट है. अरु यही परमशत्रु है. इसने मेरेको भार प्राप्त किया है अरु मिथ्या है. जेते कछु दुःख हैं तिन सबकी खानि अहंकार है. जबलग अहंकार है तबलग पीड़ाकी उत्पत्तिका अभाव कदाचित् नहीं होता है.

हे मुनीश्वर! जो कछु मैंने अहंकारसों भजन किया अरु पुण्य किया है अरु जो लिया दिया है और कछु किया है सो सब व्यर्थ है, इसकर परमार्थकी सिद्धि कुछु नहीं है. जैसे राखमें आहुति धरी व्यर्थ हो जाती है, तैसे जानता हूं अरु जेते कछु दुःख हैं तिनका बीज अहंकार है. इसका नाश होवे, तब कल्याण होवे. ताते तुम इसका उपाय मुझको कहो, जिसकर अहंकार निवृत्त होवे.

हे मुनीश्वर! जो वस्तु सत्य है, तिसका त्याग करनेमें दुःख होता है अरु जो वस्तु नाशवान् अरु भ्रमकरके दीखती है, तिसका त्याग करनेते आनंद है. अरु शांतिरूप जो चंद्रमा है तिसको आच्छादन करनेका अहंकाररूपी राहु है. जब राहु चंद्रमा ग्रहण करता है तब उसकी शीतलता अरु प्रकाश ढँप जाताहै, तैसे जब अहंकार उपजता है तब समता ढँप जाती है जब अहंकाररूपी मेघ गर्जके बरसता है तब तृष्णारूपी कटकमंजरी बढ़ जाती है, सो कदाचित् घटती नहीं. जब अहंकारका नाश होवे, तब तृष्णाका अभाव होवे. जैसे जबलग मेघ है तबलग बिजुरी है. जब विवेकरूपी पवन चले तब अहंकाररूपी मेघका अभाव होयके बिजुरी नाश पाती है. जैसे जबलग तेल अरु बाती है तबलग दीपकका प्रकाश है; जब तेल बातीका नाश होता है, तब दीपकका प्रकाशभी नाश पाता है. तैसे जब अहंकारका नाश होवे, तब तृष्णाकाभी नाश होता है.

हे मुनीश्वर! परमदुःखका कारण अहंकार है. जब अहंकारका नाश होवे, तब दुःखकाभी नाश होजाय. हे मुनीश्वर! यह जो मैं राम हूं सो नहीं अरु इच्छाभी कछु नहीं. काहेते जो मैं नहीं तो इच्छा किसको होवे? अरु इच्छा होइ तो यही होइ, जो अहंकारके रहित पदकी प्राप्ति होवे. जैसे जिनेंद्रको अहंकारका उत्थान नहीं हुआ, तैसा मैं होऊं, ऐसी मुझको इच्छा है.

हे मुनीश्वर ! जैसे कमलको वर्फ नाश करता है, तैसे अहंकार ज्ञानका नाश करता है. जैसे पारधी जालसों पक्षीको बंधन करता है, तिसकर पक्षी दीन होजाते हैं. तैसे अहंकाररूपी पारधीने तृष्णा-रूपी जाल डालके जीवको बंधन किया है, तिसकर महादीन होगया है. जैसे पक्षी अन्नके कणको सुखरूप जानकर चुगनेको आता है, फिर चुगते फिरते जालमें बंध जाता है; तिस बंधनकर दिन होजाता है; तैसे यह पुरुष विषयभोगकी इच्छा कियेते तृष्णारूपी जालमें बँधके, महादीन होजाता है. ताते हे मुनीश्वर ! मुझको सोई उपाय कहो, जिसकर अहंकारका नाश होवे. जब अहंकारका नाश होवेगा तब मैं परमसुखी होऊंगा. जैसे विंध्याचल पर्वतके आश्रयते उन्मत्त हस्ती पड़े गर्जते हैं, तैसे अहंकाररूपी जो विंध्याचल पर्वत है तिसके आश्रयते मनरूपी उन्मत्त हस्ती नानाप्रकारके संकल्पविकल्प-रूपी शब्द करता है. ताते सोई उपाय कहो जिसकर अहंकारका नाश होवे. सो अहंकार अकल्याणका मूल है. जैसे मेघका नाश करनहारा शरत्काल है, तैसे वैराग्यका नाश करनहारा अहंकार है. मोहादिक विकाररूप जो सर्प हैं, तिनको रहनेका अहंकाररूपी बिल है, अरु अहंकार कामी पुरुषकी नाईं है. जैसे कामी पुरुष कामको भुगतता है अरु फूलोंकी माला गलेमें डालके प्रसन्न होता है, तैसे तृष्णारूपी तागा है; अरु मनुष्यरूपी फूलके मणके हैं, सो तृष्णारूपी तागेके साथ गुँथे हैं. सो अहंकाररूपी कामी पुरुष गलेमें डालता है अरु प्रसन्न होताहै.

हे मुनीश्वर ! आत्मारूपी सूर्य है तिसका आवरण करनहारा मेघ-रूपी अहंकार है. जब ज्ञानरूपी सूर्यउदयका काल आवे, तब अहंकार रूपी बादलका नाश हो जाताहै अरु तृष्णारूपी तुषारकाभी नाश होवे.

हे मुनीश्वर ! यह निश्चय कर मैंने देखा है, कि—जहां अहंकार है, तहां सब आपदा आय प्राप्त होती हैं. जैसे समुद्रमें सब नदियां आयके

प्राप्त होती हैं, तैसे अहंकारमें सब आपदाओंकी प्राप्ति है. ताते सोई उपाय कहो जिसकर अहंकारका नाश होवे.

इति श्रीयोगवासिष्ठे वैराग्यप्रकरणे अहंकारनिंदावर्णनं नाम पंचदशः सर्गः ॥ १५ ॥

षोडशः सर्गः १६ ।

अथ चित्तदौरात्म्यवर्णनम् ।

श्रीराम उवाच-हे मुनीश्वर ! यह जो मेरा चित्त है, सो काम, क्रोध, लोभ, मोह, तृष्णादिक दुःखकर जर्जरीभाव होगया है अरु महापुरुषके जो गुण वैराग्य, विचार, धैर्य और संतोष, तिनकी ओर नहीं जाता; सर्वदा विषयकी गिरदमें उड़ता है. जैसे मोरका पंख पवनके लगे ठहरता नहीं, तैसे यह चित्त सर्वदा भटकता फिरता है अरु इसको लाभ कछु प्राप्त नहीं होता. जैसे श्वान द्वारद्वारपै भटकता फिरता है तैसे यह चित्त पदार्थके पानेके निमित्त भटकता फिरता है और प्राप्त कछु नहीं होता, अरु जो कछु प्राप्त होता है तिसकरि तृप्त नहीं होता. अंतर तृष्णाहि बनीरहती है. जैसे पिटारेमें जल भरिये; तासों वह पूर्ण नहीं होता;क्योंकि छिद्रते जल निकस जाता है अरु पिटारा शून्यका शून्य रहता है, तैसे चित्तको भोगपदार्थ प्राप्त होता है, तासों संतुष्ट नहीं होता है सदा तृष्णाही रहती है.

हे मुनीश्वर! यह चित्तरूपी महामोहका समुद्र है तिसमें तृष्णारूपी तरंग उठतेही रहते हैं. सो कदाचित् स्थिर नहीं होते. जैसे समुद्रमें तीक्ष्ण वेगकर तरंग होता है, सो तटके वृक्षको लगता है अरु जलमें बहे जाते हैं तैसे चित्तरूपी समुद्रमें विषय बहि जाते हैं. वासनारूपी तरंगके वेगसों मेरा जो अचल स्वभाव था, सो चलायमान होगया है, सो इस चित्तसों मैं महादीन हुआ हूं. जैसे जालमें पड़ा पक्षी होजाता है तैसे चित्तसे, धीवरकी वासनारूपी जालमें बँधा हुआ मैं

दीन होगया हूं. जैसे मृगके समूहते भूली मृगी अकेली खेदवान् होती है, तैसे मैं आत्मपदते भूला हुआ चित्तमें खेदवान् हुआ हूं.

हे मुनीश्वर! यह चित्त सदा क्षोभवान् रहता है; कदाचित् स्थिर नहीं होता. जैसे क्षीरसमुद्र मंदराचलकरके क्षोभवान् हुआ था, तैसे यह चित्त संकल्पविकल्पकर खेद पाता है. जैसे पींजरेमें आया सिंह पींजरेमें फिरता है तैसे वासनामें आया चित्त स्थिर नहीं होता.

हे मुनीश्वर! इस चित्तने मेरेको दूरसे दूर डाला है. जैसे भारी पवनसों सूखा तृण दूरसे दूर जा पडता है. तैसे चित्तरूपी पवनने मुझको आत्मानंदसे दूर डाला है. जैसे सुखे तृणको अग्नि जलाता है, तैसे मोको चित्त जलाता है. जैसे अग्निसे धूम निकलता है तैसे चित्तरूपी अग्निसे तृष्णारूपी धूम निकलता है. तिसकर मैं परमदुःख पाता हूं. यह चित्त हंस नहीं बनता है. जैसे राजहंस दूध अरु जल मिलेको भिन्न भिन्न करता है, तिसकी नाईं मैं अनात्मामें अज्ञानकरके एकसा होगया हूं. तिसको भिन्न नहीं कर सक्ता हूं. जब आत्मपद पानेका यत्न करता हूं तब अज्ञान प्रास करने नहीं देता. जैसे नदीका प्रवाह समुद्रमें जाता है तिसको पहाड सूधे नहीं चलने देता है. अरु समुद्रकी ओर जाने नहीं देता है. तैसे मुझको चित्त आत्माकी ओरसे रोंकता है सो परमशत्रु है. हे मुनीश्वर! ताते सोई उपाय कहो, जिसकर चित्तरूपी शत्रुका नाश होवे.

यह तृष्णा मेरा भोजन करती रहती है. जैसे मृतक शरीरको श्वान अरु श्वाननी भोजन करते हैं तैसे आत्माके ज्ञानविना मैं मृतकसमान हूं जैसे बालक अपनी परछाहींको वैतालमानकर भयको पाता है. सो जब विचार करके समर्थ होता है तब वैतालका भय पाता नहीं. तैसे चित्तरूपी वैतालने मेरा स्पर्श किया है तिसकरके मैं भयको पाता हूं ताते तुम सोई उपाय कहो, जिससे चित्तरूपी वैताल नष्ट होय जावे.

हे मुनीश्वर! अज्ञानकरके मिथ्या बैताल चित्तमें दृढ़ होरहा है तिसके नाश करनेको मैं समर्थ नहीं हो सकता. अग्निमें बैठना सोभी मैं सुगम जानता हूं और चलके बडे पर्वतके ऊपर जाना, सोभी मैं सुगम जानता हूं. अरु बडे वज्रको पीसड़ालना यहभी मैं सुगम मानता हूं; परंतु चित्तका जीतना महाकठिन है ऐसा मैं जानता हूं. चित्त सदाई चलायमान स्वभाववाला है. जैसे थंभके साथ बांधा हुआ बानर कदाचित् स्थिर होय नहीं बैठता, तैसे चित्त वासनाके मारे स्थिर कदाचित् नहीं होवे है. हे मुनीश्वर! बड़ा समुद्रका पान कर जाना सुगम है अरु अग्निका भक्षण करनाभी सुगम है और सुमेरुका उल्लंघन करना सोभी सुगम है, परंतु चित्तको जीतना महाकठिन है; जो सदा चलरूप है. जैसे समुद्र अपना द्रवस्वभावका कदाचित् नहीं त्याग करता अरु महाद्रवीभूत रहता है, तिसकर नानाप्रकारके तरंग होते हैं, तैसे चित्तभी चंचलस्वभावको कभी नहीं त्यागता है. नाना प्रकारकी वासना उपजती रहती हैं. अरु बालककी नाईं चंचल है, सदा विषयकी ओर धावता है. कहूं पदार्थकी प्राप्ति होती है परंतु अंतरते सदा चंचल रहता है, जैसे सूर्यके उदय हुए दिन होता है अरु अस्त हुए नाश पाता है, तैसे चित्तके उदयहुए त्रिलोकीकी उत्पत्ति है अरु चित्तके अस्तहुए लीन होजाती है.

हे मुनीश्वर! किसी समुद्रके जल गंभीर है, तिसमें बडे सर्प रहते हैं सो जब कोऊ समुद्रमें प्रवेश करे, तब वह सर्प उनको काटता है, तिनको विष चढ़ जाता है तिसकरके बडा दुःख पाता है. दृष्टांत सुनिये-चित्तरूपी समुद्र है अरु वनवासरूपी जल है, तिसमें छलरूप सर्प है, जब जीव उसके निकट जाता है तब भोगरूपी सर्प उसको काटता है, तब तृष्णारूपी विष पसरता है, तिसकर मरते हैं.

हे मुनीश्वर! जो भोगको सुखरूप जानकर, चित्त दौडता है, सो भोग दुःखरूप है. जैसे तृणसों खाई आच्छादित होय जाती है, ति-

सको देखकर, मूर्ख मृग खानेको दौडता है, तब खाईं में गिर पड़ता है अरु दुःख पाता है. तैसे चित्तरूपी मृग, भोगका सुख जानकर भागनेको लगता है, तब तृष्णारूपी खाईंमें गिर पड़ता है अरु जन्मान्तर दुःखको भुगतताहै.

हे मुनीश्वर ! यह चित्त कबहूं बड़ा गंभीर हो बैठता है, और जब भोगको देखता है, तब तिनकी ओर चीलकी नाईं गिर पडता है. जैसे गीदड पक्षी आकशमें चढ़ा फिरता है, सो जब पृथ्वीपर मांसको देखता है, तब तहांते आय पृथ्वीपर बैठता है अरु मांसको लेता है, तैसे यह चित्त निराला उडता है जब विषय देखे तब आसक्ति पाय विषयमें गिर जाता है, अरु यह चित्त वासनारूपी शय्यामें सोता रहता है; अरु आत्मपदमें जागता नहीं. इस चित्तके जालमें मैं फँसा हूं. सो कैसा जाल है ? तामें वासनारूपी सूत्र है अरु संसारकी सत्यतारूपी ग्रंथि है अरु भोगरूपी तिसमें चारा है, इसको देखके मैं फँसा हूं. कबहूं पातालमें अरु कबहूं आकाशमें, वासनारूपी जेवरीकर घटीयंत्रकी नाईं बँधा हूं. ताते हे मुनीश्वर ! तुम सोई उपाय कहो कि, जिसकर चित्तरूपी शत्रुको जीतों.

अब मुझको किसी भोगकी इच्छा नहीं अरु जगत्की लक्ष्मी मुझको विरस भासती है. जैसे चंद्रमा बादलकी इच्छा नहीं करता अरु चतुर्मासमें आच्छादित होय जाता है. ताते मैं भोगकी इच्छा नहीं करता और जगत्की लक्ष्मीको मैं नहीं चाहता, अरु मेरा चित्त है सो परम शत्रु है.

हे मुनीश्वर ! महापुरुष जो जीतनेको यत्न करते हैं सो जब चित्तको जीतें, तब परमपदको पावें ताते मुझको सोई उपाय कहो कि, जिसकर मनको जीतों. सब दुःख इसके आश्रयते रहते हैं, जैसे पर्वत पर वन है सो पर्वतके आश्रयते रहता है.

इति श्रीयोगवासिष्ठे वैराग्यप्रकरणे चित्तदौरात्म्यवर्णनं नाम षोडशः सर्गः ॥ १६ ॥

सप्तदशः सर्गः १७ ।



तृष्णागारुडीवर्णनम् ।

श्रीराम उवाच—हे ब्रह्मन्! चैतन्यरूपी आकाशमें जो तृष्णारूपी रात्रि आई है तामें काम, क्रोध, लोभ मोहादिक उलूक विचरते हैं. जब ज्ञानरूप सूर्य उदय होवे तब तृष्णारूपी रात्रिका अभाव होजावे, जब रात्रि नष्ट होती है तब मोहादिक उलूकभी नष्ट हो जाते हैं, जब सूर्यका उदय होता है तब बर्फ उष्ण हो पिघल जाता है, तैसे संतोषरूपी रसको तृष्णारूपी उष्णता सुखाती है. बहुरि तृष्णा कैसी है? जैसे शून्यवनमें पिशाचिनी अपने परिवारसहित फिरती रहती है अरु प्रसन्न होती है. सो वन अरु पिशाच कैसा है? आत्मपदते शून्य जो चित्त सो भयानक शून्य वन है, तिसमें तृष्णारूपी पिशाचिनी है अरु मोहादि उसके परिवार हैं उनको साथ लेकर फिरती है.

हे मुनीश्वर! चित्तरूपी पर्वत है, तिसके आश्रयते तृष्णारूपी नदीका प्रवाह चलता है अरु नानाप्रकारके संकल्परूपी तरंगोंको पसारता है. जैसे मेघको देखकर मोर प्रसन्न होता है, तैसे तृष्णारूपी मोर भोगरूपी मेघको देखके प्रसन्न होता है, ताते परमदुःखका मूल तृष्णा है. जब मैं किसी संतोषादि गुणका आश्रय करता हूं, तब तृष्णा तिसको नाश करदेती है. जैसे सुंदर सारंगीको चूहा तोर डारता है, तैसे संतोषादि गुणोंको तृष्णा नाश करती है.

हे मुनीश्वर! सबते उत्कृष्ट पदमें बिराजनेका मैं यत्न करता हूं तब तृष्णा बिराजने नहीं देती. जैसे जालमें फँसा हुआ पक्षी आकाशमें उड़नेका यत्न करता है, परंतु उड़ नहीं सक्ता है; तैसे मैं अनात्मपदमेंते आत्मपदको प्राप्त नहीं हो सक्ता. स्त्री, पुत्र अरु कुटुंबने जाल बिछाया है, तामें फँसा हूं सो निकल नहीं सक्ता, सो आशारूपी फाँसीमें बँधा हुआ, कबहूं ऊर्ध्वको जाता हूं; कबहूं अधःपातको प्राप्त होता हूं सो

घटी-यंत्रकी नांई मेरी गति है. जैसे इंद्रका धनुष मेघमें मलीन होता है, सो बड़ा अरु बहुत रंगसों भरा है. परंतु मध्यते शून्य है, तैसे तृष्णा मलिन अंःकरणमें होती है सो बडी है, अरु गुणरूपी रंगते रंगी है, देखनेमात्रको सुंदर है, परंतु इससे काम्यसिद्धि कछु नहीं होती.

हे मुनीश्वर! तृष्णारूपी मेघ हैं, तिनते दुःखरूपी बूंद निकलते हैं. अरु तृष्णारूपी काली नागिन है, उसका स्पर्श तो कोमल है, परंतु विषयके पूर्ण है तिसके डसेते मृतक होजाता है, अरु तृष्णारूपी बादर है, सो आतमरूपी सूर्यके आगे आवरण करता है. जब ज्ञानरूपी पवन निकले तब तृष्णारूपी बादरका नाश होवे, अरु आतमपदका साक्षात्कार होवे अरु ज्ञानरूपी कमलको संकोच करनहारी तृष्णारूपी निशा है, अरु तृष्णारूपी महाभयानक काली रात्रि है जिसकर बडे धीरजवान्भी भयभीत हैं. अरु नयनवारेकोभी अंध कर डालती है. जब यह आवती है, तब वैराग्य अरु अभ्यासरूपी नेत्रोंको अंध कर डालती है. इसीसे यह सत्य असत्यको विचारने नहीं देती.

हे मुनीश्वर! तृष्णारूपी डाकिनी है, सो संतोषादिक पुत्रोंको मार डालती है. अरु तृष्णारूपी कंदरा है, तिसमें मोहरूपी उन्मत्त हत्ती गर्जते हैं, अरु तृष्णारूपी समुद्र है, तिसमें आपदारूपीनदी आय प्रवेश करती है. ताते सोई उपाय मुझको कहो, जिसकर तृष्णारूपी दुःखते छूटों.

हे मुनीश्वर! अग्निसोंभी ऐसा दुःख नहीं होता अरु इंद्रके वज्रकरभी ऐसा दुःख नहीं होता; जैसा दुःख तृष्णाकर होता है. सो तृष्णाके प्रहारसों घायल बड़े दुःखको पाता है. तृष्णारूपी दीपक परा जलता है; तिसमें संतोषादि पतंग जर जाते हैं. जैसे जलमें मछली रहती है. सो जलमें कंकरी, रेती-आदिकोंको देख, मांस जानकर वह मुखमें लेती है, ताते उसकी अर्थसिद्धि कछु नहीं होती. तैसे तृष्णाभी जो कछु पदार्थ देखती है, तिसके पास उडती है. अरु तृप्ति किसीकर नहीं

होती. अरु तृष्णारूपी एक पक्षिणी है, सो कबहुं कहुं उडजाती है अरु स्थिर कबहूं नहीं होती; तैसे तृष्णाभी कबहूं किसी पदार्थको, कबहूं किसीको ग्रहण करती है; परन्तु स्थिर कबहूं नहीं होती. अरु तृष्णारूपी वानर है. स्थिर कबहूं किसी वृक्षपर रहता है, कबहुं किसीके ऊपर जाता है, स्थिर कबहूं नहीं होता है. जो पदार्थ नहीं प्राप्त होता तिसके निमित्त यत्न करता है. तैसे तृष्णाहू नानाप्रकारके पदार्थोंका ग्रहण करती है. अरु भोगकर तृप्त कदाचित् नहीं होती. जैसे घृतकी आहुतिकर अग्नि तृप्ति नहीं पावे, तैसे जो पदार्थ प्राप्तियोग्य नहीं है, तिसक ओरभी तृष्णा दौड़ती है और शांतिको नहीं पाती है.

हे मुनीश्वर ! तृष्णारूपी उन्मत्त नदी है, तिसमें जो बहाया पुरुष, ताको कहां कहा ले जाती है.कबहूँ तो पहाड़की बाजूमें लेजाय, कबहूं दिशामें लेजाय, परंतु इनको ले फिरती है; तैसे तृष्णारूपी नदी है, सो मुझको ले फिरती है. अरु तृष्णारूपी नदी है, इसमें वासनारूपी अनेक तरंग उठते हैं. कदाचित् मिटते नहीं हैं अरु तृष्णारूपी नटिनी है अरु जगत्रूपी आखाड़ा तिसने लगाया है; तिसको शिर ऊँचा कर देखता है अरु मूर्ख बडे प्रसन्न होते हैं. जैसे सूर्यके उदय हुए सूर्यमुखी कमल खिलके ऊंचा आता है, तैसे मूर्ख तृष्णाको देखकर प्रसन्न होते हैं. तृष्णारूपी वृद्ध स्त्री है जो पुरुष इसका त्याग करता है तब वाके पाछे लगी फिरती है, कबहूं इसका त्याग नहीं करती. अरु तृष्णारूपी रस्सी है, तिसमें जीवरूपी पशु बाँधे हुए हैं, तिसकर भ्रमते फिरते हैं अरु तृष्णा दुष्टिनी है. जब शुभ गुणोंको देखे, तब तिनको मार डालती है. तिसके संयोगते मैं दीन होजाता हूं. जैसे पपीहा मेघको देखकर प्रसन्न होता है अरु बूंद ग्रहण करने लगता है, और मेघको जब पवन ले जाता है, तब पपीहा दीन होजाता है. तैसे तृष्णा शुभगुणका नाश करती है तब मैं दीन हो जाता हूं.

हे मुनीश्वर ! तृष्णाने मुझको दूरते दूर डारा है, जैसे सूखे तृणको पवन दूरते दूर डारता है, तैसे आत्मपदते दूर परा हूं. हे मुनीश्वर ! जैसे भौंरा कमलके ऊपर जाता है. कबहूं नीचे बैठता है, कबहूं आसपास फिरता है अरु स्थिर नहीं होता, तैसे तृष्णारूपी भौंरा संसाररूपी कमलके नीचे ऊपर फिरता है, कदाचित् ठहरता नहीं है; जैसे मोतीका बाँस होता है तिसते अनेक मोती निकसते हैं तैसे तृष्णारूपी बाँसते जगत्रूपी अनेक मोती निकलते हैं, तिसकर लोभीका मन पूर्ण नहीं होता है. तैसे तृष्णाते मन पूर्ण नहीं होता. दुःखरूपी रत्नका तृष्णारूपी डब्बा है, तिसमें अनेक दुःख रहते हैं. ताते सोई उपाय कहो, जिसकर तृष्णा निवृत्त होवे.

यह तृष्णा वैराग्यसों निवृत्ति पाती है और किसी उपायकर निवृत्ति नहीं होती है. जैसे अंधकारका नाश प्रकाशकर होता है और किसी उपायकर नहीं होता; तैसे तृष्णाका नाश और उपायसों नहीं है. अरु तृष्णारूपी हल है, सो गुणरूपी पृथ्वीको खोद डारता है, अरु तृष्णारूपी लता है, सो गुणरूपी रसको पीती है अरु तृष्णारूपी धूर है, सो अंतःकरणरूपी जलमें उछलके मलीन करती है.

हे मुनीश्वर ! तृष्णारूपी नदी है, सो वर्षाकालमें बढ़ती है, फिर घट जाती है. तैसे जब इष्टभोगरूपी जल प्राप्त है तब हर्षकर बढ़ती है, जब भोगरूपी जल घटजाता है, तब सूखके, क्षीण होजाती है. हे मुनीश्वर ! इस तृष्णाने मुझको दीन किया है. जैसे सूखे तृणको पवन उडाता है, तैसे यह मुझको उड़ाती है. ताते सोई उपाय तुम कहो, जिस कर तृष्णाका नाश होवे अरु आत्मपदकी प्राप्ति होवे अरु दुःख नष्ट होवे अरु आनंद होवे.

इति श्रीयोगवासिष्ठे वैराग्यप्रकरणे तृष्णागारुडीवर्णनं नाम सप्तदशः सर्गः ॥ १७ ॥

अष्टादशः सर्गः १८।

अथ देहनैराश्यवर्णनम् ।

श्रीराम उवाच—हे मुनीश्वर! यह जो अमंगलरूप शरीर जगत्में उत्पत्ति पाया है, सो बड़ा अभाग्यरूप है, सदा विकारवान् मांसमज्जाकर पूर्ण है, सदा अपवित्र है. इसकरके मैं कछु अर्थसिद्धि होना नहीं देखता. ताते तिन विकाररूप शरीरोंकी इच्छा मैं नहीं रखता. यह शरीर न अज्ञ है, न तज्ज्ञ अर्थात् यह न जड है, न चैतन्य है. जैसे अग्निके संयोगकरके लोहा अग्निवत् होता है,सो जलाताभी है, परंतु आप नहीं जलता; तैसे यह देह न जड है, न चैतन्य है.जड इस कारणते नहीं कि, इसते कार्यभी होता है, अरु चैतन्य इस कारणते नहीं कि, इसको आपते ज्ञान कछु नहीं होता; ताते मध्यमभावमें है, काहेते जो चैतन्य आत्मा इसमें व्याप रहा है सो लोहअग्निकी नाईं जानता हूं अरु आपते अपवित्ररूप अस्थि, मांस, रुधिर, मूत्र विष्ठाकरि पूर्ण अरु विकारवान्, ऐसा जो देह है सो दुःखका स्थान है अरु इष्टके पायेते हर्षवान् होता है अरु अनिष्टके पायेते शोकवान् होता है, ताते ऐसे शरीरकी मुझको इच्छा नहीं. यह अज्ञानकरके उपजता है.

हे मुनीश्वर ! ऐसे अमंगलरूपी शरीरमें जो अहंपना फुरता है सो दुःखका कारण है. इस संसारमें स्थित होकर, नानाप्रकारके शब्द करता है, अरु मौन कबहूं नहीं धरता है, अरु अहंकाररूपी बिलाडा देहमें रहा हुआ 'अहं, अहं' करता है. चुप कदाचित् नहीं रहता है. हे मुनीश्वर ! जो किसीके निमित्त शब्द होवे सो सुंदर है, अन्यथा शब्द व्यर्थ है. जैसे जयके निमित्त ढोलका शब्द सुंदर होता है तैसे अहंकारते रहित जो पद है सो शोभनीय है और सब व्यर्थ है.

अरु शरीररूपी नौका भोगरूपी रेतीमें परी है इसको पार होना;

कठिन है. जब वैराग्यरूपी जल वढ़े अरु प्रवाह होवे अरु अभ्यासरूपी पतवारीका बल होवे, तब संसारके पाररूपी किनारेपै पहुँचे. अरु शरीररूपी बेडा है; अरु संसाररूपी समुद्र और तृष्णारूपी जलमें परा है, अरु वडा प्रवाह है; अरु भोगरूपी तिसमें मगर है, सो शरीररूपी वेडाको पार लगने नहीं देता. जव शरीररूपी वेडाके साथ वैराग्यनदी वायु लगे अरु अभ्यासरूपी पतवारीका वल लगे तव शरीररूपी वेडा पारको पावे; हे मुनीश्वर! जिन पुरुषोंने ऐसे वेड़को उपायकर आपको संसारसमुद्रते पार किया है, सो सुखी भये हैं, अरु जिनोंने नहीं किया, वे परमआपदाको प्राप्त होते हैं. सो इस वेडेकर उलटे डूबेंगे. जैसे वेडेमें छिद्र होवे; और वामें जल प्रवेश कर आवे, तव वह डूव जाता है, अरु तिसमें जो मच्छ है सो खा जाता है, सो इहां शरीररूपी वेडेका तृष्णारूपी छिद्र है, तिसकरके इहां संसारसागरमें डूब जाता है अरु भोगरूपी मगर इसको खाता है. अरु यह आश्चर्य है कि–वेडा अपने निकट नहीं भासता है अरु मनुष्य सो मूर्खताकरके आपको वेडा मानता है, अरु तृष्णारूपी छिद्रकरके दुःख पाता है.

अरु शरीररूपी वृक्ष है, तामें भुजारूपी शाखा हैं अरु अँगुरी इसके पत्र हैं अरु जंघा उसके स्थंभ हैं अरु वासना इसकी जड है अरु सुख दुःख इसके फूल हैं अरु तृष्णारूपी कन है सो शरीररूप वृक्षको खाता रहता है, जब इसको श्वेत फूल लगे तव नाशका समय पाता है; कारण जो मृत्युके निकटवर्ती होता है, बहुरि शरीररूपी इसके टास हैं अरु हस्त पांय इसके पत्र हैं अरु गिटे इसके गुच्छे हैं अरु दांत फूल हैं, जंघा स्थंभ हैं अरु कर्म जलकरके बढ़जाता है. जैसे वृक्षते जल निकसता है, सो चिकटा है, तैसे जल शरीरके द्वारा निकसता है अरु तृष्णारूपी विषते पूर्ण सर्पिणी रहतीहै अरु जो कामनाके लिये इस वृक्षका

आश्रय लेता है, तब तृष्णारूपी सर्पिणी तिसको डसती है, तिस विषसों वह मरि जाता है. हे मुनीश्वर ! ऐसा जो अमंगलरूपी शरीरवृक्ष है, तिसकी इच्छा मुझको नहीं है. यह परमदुःखका कारण है.

जबलग यह पुरुष अपने परिवारमें बँधा हुआ है तबलग मुक्ति नहीं होती, जब परिवारका त्याग करे, तब मुक्ति होवे. देह, इंद्रिय, प्राण, मन व बुद्धि, ये इसके परिवार हैं. इनमें जो अहंभाव है उसका त्याग करे तब मुक्ति होवे. अन्यथा मुक्ति नहीं होती.

हे मुनीश्वर ! जो श्रेष्ठ पुरुष हैं सो पवित्रही स्थानमें रहते हैं, अपवित्रमें नहीं रहते. सो अपवित्र स्थान यह देह है. इसमें रहनेवाला भी अपवित्र है अरु अस्थिरूपी इस घरमें लकडे हैं. रुधिर, मूत्र, विष्ठाका इसमें कीच लगाया है और मांसकी कहगील करी है अरु अहंकाररूपी इसमें श्वपच रहता है अरु तृष्णारूपी श्वपचिनी इसकी स्त्री है; अरु काम, क्रोध, मोह और लोभ इसके बेटे हैं. आंत अरु विष्ठादिककरि पूर्ण भरा हुआ है. ऐसा जो अपवित्र स्थान अमंगलरूप शरीर तिसका मैं अंगीकार नहीं करता. यह शरीर रहे, चाहे मत रहे. इसके साथ मेरा अब कुछ प्रयोजन नहीं.

हे मुनीश्वर ! एक बड़ा घर है. तिसमें बड़े पशु रहते हैं, सो धूरको उड़ाते हैं. सो गृहमें कोऊ जाता है तब सींगोंसों मारने लगते हैं. अरु धूलभी उसके ऊपर गिरती है सो शरीररूपी बड़ा गृह है. तिसमें इंद्रियरूपी पशु है, जब इस गृहमें पैठता है, तब बडी आपदाको प्राप्त होता है. तात्पर्य यह है कि-जो इसमें अहंभाव करता है, तिस इंद्रियरूपी पशु विषयरूप सींगोंसे मारते हैं अरु तृष्णारूपी धूल इसको मलीन करती है. हे मुनीश्वर ! ऐसे शरीरको मैं अंगीकार नहीं करता.

जिसमें सदा कलह पडेही रहते हैं, तिसमें ज्ञानरूपी संपदा प्रविष्ट नहीं होती. ऐसा जो शरीररूपी गृह है, तिसमें तृष्णारूपी चंडी स्त्री

रहती है; सो इंद्रियरूपी द्वारसों देखती रहती है, सदा कल्पना करते रहती है· तिसकरके शमदमादिरूप संपदाका प्रवेश नहीं होता·तिस घर में एक शय्या है,जब उसके ऊपर विश्राम करता है,तब कछुक सुख पाता है; परंतु तृष्णाका जो परिवार है सो विश्राम करने नहीं देता·सो सुषुप्तिरूपी शय्या है, जब उसमें विश्राम करता है तब कामक्रोधादिक रुदन करते हैं· अरु ए चंडी स्त्रीका जो परिवार, काम, क्रोध, लोभ और मोह इच्छा है सो उठाइ देते हैं,विश्राम करने नहीं देते· हे मुनीश्वर ! ऐसा दुःखका मूल जो शरीररूपी गृह है तिसकी इच्छा मैंने त्याग दीनी है· यह परमदुःख देनहारा है· इसकी इच्छा मुझको नहीं है·

हे मुनीश्वर ! शरीररूपी वृक्ष है· तिसपर तृष्णारूपी कौवानी आय स्थित भई है· सो जैसे कौवानी नीच पदार्थके पास उड़ती है, तैसे तृष्णारूपी कौवानी भोगरूपी मलिन पदार्थके पास है, वृक्षको बहुरि तृष्णा बंदरीकी नाई शरीररूपी वृक्षको हिलाती है, स्थिर होने देती नहीं· अरु जैसे उन्मत्त हस्ती कीचमें फँस जाता है अरु निकस नहीं सक्ता अरु खेदवान् होता है, तैसे अज्ञानरूपी मदकरके उन्मत्त हुआ जीव शरीररूपी कीचमें फंसा है, सो निकस नहीं सक्ता है· परापराही दुःख पाता है. ऐसे दुःख पानेवारा शरीर है, तिसका मैं अंगीकार नहीं करता·

हे मुनीश्वर ! यह शरीर अस्थि, मांस और रुधिरकरि पूर्ण है सो अपवित्र है जैसे हस्तीके कान सदाही हिलते हैं तैसे इसको मृत्यु परा हिलाता है· कछु कालका विलंब है; परंतु मृत्यु इसका ग्रासकर लेवेगा· ताते मैं इस शरीरका अंगीकार नहीं करता हूं·

यह शरीर कृतघ्न है, भोग भुगतता है और बड़े ऐश्वर्यको प्राप्त करता है;परंतु मृत्यु इससे सखापन नहीं करता है·जब जीव इसको छांड कर परलोकको जाता है,तब अकेलाही जाता है और शरीरको छोड

देता है जीव इसके सुखनिमित्त अनेक यत्न करता है, परंतु संगमें सदा नहीं रहता. ऐसा जो कृतघ्न शरीर है, इसका मैंने मनसों त्याग किया है, जो यह दुःख देनहार है.

हे मुनीश्वर ! और आश्चर्य देखो,—जो उसीका भोग करता है, तिसके साथ चलता नहीं, जैसे धूरकरके मार्ग भासनेते रह जाता है, तैसे यह जी जब चलने लगता है, तब शरीरके साथ क्षोभवान् होता अरु वासनारूप धूरसंयुक्त चलता है, परंतु दीखता नहीं कि, कहां गया ? जब परलोकको जाता है तब बडा कष्ट होता है, काहे कि, ते शरीरके साथ स्पर्श किया है.

हे मुनीश्वर! यह शरीर क्षणभंगुर है. जैसे जलकी बूँद पत्रके ऊपरसे गिरती है, सो क्षणमात्र रहती है, तैसे शरीरभी क्षणभंग है. ऐसे शरीरमें आस्था करनी सो मूखर्ता है. अरु ऐसे शरीरके ऊपर उपकार करनाभी दुःखके निमित्त है, सुख कछु नहीं है; और जो धनाढ्य शरीरसों वडे भोग भोगते हैं,अरु निर्धन थोडे भोग भोगते हैं,परंतु जरावस्था अरु मृत्यु दोनोंको होते हैं. इसमें विशेषतः कछु नहीं. शरीरका उपकार करना और भोग भोगना, सो तृष्णकरके उलटा दुःखका कारण है. जैसे कोऊ नागिनी घरमें रखके, उसको दूध पिलावे, तोभी आखिर उसको काटके मारेगी, तैसे जीवने तृष्णारूपी नागिनीके साथ सखाई करी है, सो मरेगी; क्योंकि नाशवंत है. इसके निमित्त जो भोग भोगनेका यत्न करना सो मूर्खता है. जैसे पवनका वेग आता है अरु जाता है, तैसे यह शरीर नाशवंत है, इससों प्रीति करनी, सो दुखका कारण है; सब जीव इसकी आस्थामें बाँधे हुए हैं; इसका त्याग कोई विरलेनेही किया है. जैसे कोऊ विरला मृग होता है, सो मरुस्थलके जलकी आस्था त्यागता है और सब परे भ्रमते हैं.

हे मुनीश्वर ! बिजलीका अरु दीपकका प्रकाश भी आता जाता

दीखता है, परंतु इस शरीरका आदि अंत नहीं दीखता है, कि, कहांते आता है अरु कहां जाता है? जैसे समुद्रमें बुद्बुद् उपजता है अरु मिट जाता है तिसकी आस्था करनेते कछु लाभ नहीं, तैसे इस शरीरकी आस्था करनी योग्य नहीं. यह अत्यंत नाशरूप है, स्थिर कदाचित् नहीं होता है. जैसे बिजुरी स्थिर नहीं होती, तैसे शरीरभी स्थिर नहीं रहता; इसकी मैं आस्था नहीं करता. इसका अभिमान मैंने त्यागा है. जैसे कोऊ सूखे तृणको त्याग देता है, तैसे मैंने अहंममता त्यागी है.

हेमुनीश्वर ! ऐसे शरीरको पुष्ट करना, सो दुःखके निमित्त है. यह शरीर किसी लिये आनेयोग्य नहीं, जलानेयोग्य है. जैसे लकडी जलायेबिन और काममें नहीं आती है, तैसे इस शरीरमें जड अरु गुंगा जलानेके अर्थ है. हे मुनीश्वर ! जिस पुरुषने शरीररूपी काष्ठको ज्ञानाग्निकर जलाया है, तिसका परम अर्थ सिद्ध भया है अरु जिसने नहीं जलाया, सो परम दुःख पाता है.

हे मुनीश्वर ! न मैं शरीर हूं न मेरा शरीर है, न इसका मैं हूं, न यह मेरा है; अब मुझको कामना कोऊ नहीं है. मैं निराशी पुरुष हूं. अरु शरीरके साथ मुझको प्रयोजन कछु नहीं है; ताते तुम सोई उपाय कहो कि, जिसकरके मैं परमपदकी प्राप्ति पाऊं.

हे मुनीश्वर ! जिस पुरुषने शरीरका अभिमान त्यागा है, सो परमानंदरूप है और जिसको देहका अभिमान है, सो परम दुःखी है. जेते कछु दुःख हैं, सो शरीरके संयोगकरि होते हैं; मान, अपमान, जरा, मृत्यु, दंभ, भ्रांति, मोह, अरु शोक आदि सर्व विकार देहके संयोगकरके होते हैं. जिनको देहमें अभिमान है तिनको धिःकार है और सब आपदाभी तिनको प्राप्त होती हैं; जैसे समुद्रमें नदी आयकर प्रवेश करती है, तैसे देहाभिमानमें सर्व आपदा आय प्रवेश करती हैं; जिसको देहका अभिमान नहीं सो पुरुषनमें उत्तम है अरु वंदना

करनेयोग्य है, ऐसेको मेरा नमस्कार है. अरु सर्व संपदाभी तिसको प्राप्त होती हैं. जैसे मानससरोवरमें सब हंस आय रहते हैं, तैसे जहाँ देहाभिमान नहीं रहा, तहाँ सर्व संपदा आय रहती हैं.

हे मुनीश्वर! जैसे बालक अपनी छायामें बैताल कल्पना करता है अरु तिसकरके भय पाता है; जब इसको विचारकी प्राप्ति होती है. तब बैतालका अभाव होजता है. तैसे अज्ञानकरके मुझको अहंकाररूपी पिशाचने शरीरमें दृढ आस्था बताई है, ताते सो उपाय कहो, जिसकर अहंकाररूपी पिशाचका नाश होवे अरु स्थितिरूपी फाँसी टूटे.

हे मुनीश्वर! प्रथम मुझको अज्ञानकरके संयोग था, सो अहंकाररूपी पिशाचका था तिसते अनंतर शरीरमें आस्था उपजी है. जैसे बीजते प्रथम अंकुर होता है; और फिर अंकुरते वृक्ष होता है; तैसे अहंकारते शरीरकी आस्था होती है, हे मुनीश्वर! इस अहंकाररूपी पिशाचने सब जीवनको दीन किये हैं. जैसे बालकको छायामें बैताल भासता है अरु दीनताको प्राप्त होता है, तैसे अहंकाररूपी पिशाच अविचारते सिद्ध है अरु विचार कियेते अभावको प्राप्त होता है. जैसे प्रकाशकर अंधकार नाश होजाता है; तैसे विचार कियेते अहंकार नाश होजाता है.

हे मुनीश्वर! जो शरीरमें आस्था रक्खी है सो शरीर जलके प्रवाहकी नाई स्थिर नहीं होता; ऐसा चल है, जैसे बिजूरीकी चमक स्थिर नहीं होती अरु गंधर्वनगरकी आस्था व्यर्थ है, तैसे शरीरकी आस्था करनी व्यर्थ है. हे मुनीश्वर! ऐसे शरीरकी आस्था करके अहंकार करते हैं अरु जगतके पदार्थनिमित्त यत्न करते हैं. सो महामूर्ख हैं. जैसे स्वप्न मिथ्या है तैसे यह जगत् मिथ्या है तिसको सत्य जानकर जैसे इसको यत्न करता है सो अपने बंधनके निमित्त करता है. जैसे घुरान गुफा बनती है सो अपने बंधनके निमित्त है अरु पतंग दीपककी इच्छा करताहै सो अपने नाशके निमित्त है तैसे अज्ञानी जो अपने देहका

अभिमान कर, भोगकी इच्छा करता है सो अपने नाशके निमित्त है. हे मुनीश्वर ! मैं तो इस शरीरका अंगीकार नहीं करता. इस शरीरकी अभिमान परमदुःख देनहारा है, जिसको देहाभिमान नहीं रहा तिसको भोगकी इच्छाभी न रहेगी. ताते मैं निराश हूं अरु परमपदकी इच्छा है. जिसके पायेते बहुरि संसारसमुद्रकी प्राप्ति न होवे.

इति श्रीयोगवासिष्ठे वैराग्यप्रकरणे देहनैराश्यवर्णनं नामाष्टादशः सर्गः॥ १८ ॥

एकोनविंशः सर्गः १९ ।

अथ बाल्यावस्थानिंदावर्णनम् ।

श्रीराम उवाच—हे मुनीश्वर! इस संसारसमुद्रमें जिसने जन्म पाया है तिसे बाल्यावस्था इसको प्राप्त भई है सोभी परमदुःखका मूल है. तिसमें परमदीन होजाता है. अरु जेते अवगुण इसमें आय प्रवेश करते हैं सोभी कहता हूं. अशक्तता, मूर्खता, इच्छा, चपलता, दीनता, दुःख अरु संताप, ऐते विकार इसको आय प्राप्त होते हैं. यह बाल्यावस्था महाविकारवान है अरु बालक पदार्थकी ओर धावता है, एक वस्तुका ग्रहण करना चाहता है. स्थिर नहीं रहता है फिर औरमें लग जाता है. जैसे बानर ठहरके नहीं बैठता अरु जो कोऊ ऊपर क्रोध करता है. तब अंतरते परा जलता है अरु बडी बडी इच्छा करताहै तिसकी प्राप्ति नहीं होती. फिर महादीन हो जाता है. जैसे कदली बनका हस्ती सांकरसों बांधाहुआ दीन होजाता दीन है, तैसे यह चैतन्य पुरुष बालकअवस्थाकरके दीन होजाता है. जो कछु इच्छा करता है सो विचारबिना करता है तिसकरके दुःख पाता है अरु यह गुंग अवस्था है तिसकरके कछु सिद्धि नहीं होती. कोऊ पदार्थकी प्राप्ति

होती है तिसमें क्षणमात्र सुखी रहता है, बहुरि तपने लगता है. जैसे तपती पृथ्वीपर जल डारिये तब एक क्षणभर शीतल होती है. फिर उसी प्रकारसों तपती है तैसे वहभी तपता रहता है, जैसे रात्रिके अंतमें सूर्यउदय होता है तिसकरके उलूकादि कष्टवान् होते हैं तैसे इस जीवको स्वरूपके अज्ञानकरके बाल्यावस्थामें भ्रष्ट होता है:

हे मुनीश्वर ! जो बाल्यावस्थाकी संगति करता है सोभी मूर्ख है, काहेते कि—यह विवेकरहित अवस्था है अरु सदा अपवित्र है और सदा पदार्थकी ओर धावती है. ऐसी मूढ अरु दीन अवस्थाकी मुझको इच्छा नहीं. इस अवस्थावाला पुरुष जिस पदार्थको देखता है तिसकी ओर धावता है अरु क्षणक्षणमें अपमानको पाता है. जैसे कूकर क्षणक्षणमें द्वारकी ओर धावता है अरु अपमान पोता है, तैसे बालक अपमानको प्राप्त होता है अरु बालकको सदा माता अरु पिताका भय रहता है; बांधवका सदा भय रहता है अरु आपते बडे बालकका भी भय रहता है अरु पशु पक्षीहूका भय रहता है. हे मुनीश्वर ! ऐसी दुःखरूप अवस्थाकी मुझको इच्छा नहीं. जैसे स्त्रीके नयन चंचल हैं अरु नदीका प्रवाह चंचल है, इसतेभी मन अरु बालक चंचल है, ऐसे मैं जानता हूं, अरु सब चंचलता बालकते कनिष्ठ हैं. बालक सबते चंचल हैं. जैसा मन चंचल है, तैसा बालकभी चंचल है. मनका रूप बालक है.

हे मुनीश्वर ! जैसे वेश्याका चित्त एक पुरुषमें नहीं ठरता; तैसे बालकका चित्त एक पदार्थमें नहीं ठरता, कि, इस पदार्थकरके मेरा नाश होवेगा, ऐसा विचारभी तिसको नहीं अरु इसकर मेरा कल्याण होवेगा सो विचारभी नहीं. ऐसेही परा चेष्टा करता है अरु सदा दीन रहता है अरु सुख दुःख इच्छा दोष करके तपायमान रहता है. जैसे जेठ और आषाढमें पृथ्वी तपायमान होती है, तैसे बालक तपताही शांतिको कदाचित् नहीं पाता.

अरु जब विद्या पढ़ने लगता है, तब गुरुसों बड़ा भयभीत होता है. जैसे कोऊ यमको देखके भय पावे और गरुड़को देखके जैसे सर्प भय पावे, तैसे भयभीत होजाता है.जब शरीरको कोऊ कष्ट आय प्राप्त होता है, तब बड़े दुःखको प्राप्त होता है. परंतु दुःखके निवारणमें समर्थ नहीं होता अरु सहनकोभी समर्थ नहीं.अंतरते परा जलता है अरु मुखते कछु बोल सक्ता नहीं. जैसे वृक्ष कछु नहीं बोल सक्ता अरु जैसे इस तिर्यक् योनिवाले दुःख पाते हैं अरु काहि नहीं सक्ते, अरु दुःखका निवारण नहीं करि सक्ते, न संहार कर सक्ते. अंतरते परे जलतें है, तैसे बालक गूँगा मूढ हुआ दुःख पाता है. हे मुनीश्वर! ऐसी जो बाल्यावस्था, तिसकी जो स्तुति करता है, सो मूर्ख है.

यह तो परमदुःखरूप अवस्था है,इसमें विवेक विचार कछू नहीं. एक खानेको पाता है अरु रुदन करता है, ऐसी अवगुणरूप अवस्था मुझको नहीं सुहाती है. जैसे बिजुरी अरु जलके बुदबुदे स्थिर नहीं रहते तैसे बालकहू स्थिर कदाचित् नहीं होता.

हे मुनीश्वर ! यह महामूर्ख अवस्था है इस अवस्थावाला कबहूं कहता है कि-हे पिता ! मुझको बर्फका टुकड़ा भूनि दे.कबहूं कहता है-मुझको चंद्रमा उतार दे, ये सब मूर्खताके वचन हैं. ताते ऐसी मूर्खावस्थाको मैं अंगीकार नहीं करता. जैसे दुःखका अनुभव बालकको होता है, यह हमारे स्वप्नमेंभी नहीं आया. तात्पर्य यह कि-बाल्यावस्थामें बडा दुःख है. यह बाल्यावस्था अवगुणका भूषण है सो अवगुणकरके शोभती है.ऐसी नीच अवस्थाको मैं अंगीकार नहीं करता.इसकी स्तुति करनी सो मूर्खता है.इसमें गुण कोईभी नहीं है.

इति श्रीयोगवासिष्ठे वैराग्यप्रकरणे बाल्यावस्थानिंदावर्णनं नामैकोनविंशः सर्गः ॥ १९ ॥

त्रिंशः सर्गः २० ।



अथ युवानिन्दावर्णनम् ।

श्रीराम उवाच—हे मुनीश्वर ! दुःखरूप बाल्यावस्थाके अनंतर जो युवा अवस्था आती है, सो नीचेते ऊंची चढ़ती है; सोभी उत्तम गिनेके निमित्त नहीं है, अधिक दुःखदायक है. जब युवा अवस्था आती है, तब कामरूपी पिशाच आय लगता है. सो कामरूपी पिशाच युवाअवस्थारूपी गडेलेमें आय स्थित होताहै, चित्त फिराता है अरु इच्छामें पसरता है. जैसे सूर्यके उदय हुये सूर्यमुखी कमल खिल आताहै अरु पँखुरीनको पसारताहै, तैसे युवाअवस्थारूपी सूर्य उदय होता है तब नानाप्रकारकी इच्छा स्फुरती हैं, अरु कामरूपी पिशाच इसको स्त्रीमें डार देता है, तहां परा दुःख पाता है. जैसे कोऊको अग्निके कुंडमें डारि दिया होय अरु वह दुःख पावे, तैसे कामके वश हुआ दुःखको पाता है.

हे मुनीश्वर ! जो कछु विकार हैं सो सब युवाअवस्थामें आयके, प्राप्त हुए हैं. जैसे धनवान्को देखके निर्धन सब लोक धनकी आशा करतेहैं, तैसे युवाअवस्थाको देखकर सब दोष आय, इकट्ठे होते हैं. अरु जो भोगको सुखरूप जानकर भोगकी इच्छा करता है सो परम दुःखका कारण है. जैसे मद्यका घट भरा हुआ देखनेमात्रमें सुंदर लगता है, परंतु जब उसका पान करे तब उन्मत्त होय जाय, तिस उन्मत्तता करके दीन होजाता है अरु निरादरको पाता है तैसे यह भोग देखने मात्रमें सुंदर भासता है परन्तु जब इसको भोगता है तब तृष्णाकर उन्मत्त होजाता है अरु पराधीन होय जाता है.

हे मुनीश्वर ! यह काम, क्रोध, लोभ, मोह, व अहंकार ये सब जो चोर हैं, सो युवारूपी रात्रिको देखकर लूटने लगते हैं अरु आत्मज्ञा-

नरूपी धनको चोर लेजाता है, तिसकरके यह दीन हुआ होता है. यह पुरुष आत्मानंदके वियोगकरके दीन हुआ है. हे मुनीश्वर ! ऐसी जो दुःख देनेहारी युवाअवस्था तिसका मैं अंगीकार नहीं करता. अरु शांति जो है, सो चित्त स्थिर करनेके लिये है सो चित्त युवाअवस्थामें विषयकी ओर धावता है.जैसे बाण लक्ष्यकी ओर जाता है, तब उसको विषयका संयोग होता है सो विषयकी तृष्णा निवृत्त नहीं होती अरु तृष्णाके मारे जन्मते जन्मांतररूप दुःखको पाता है. हे मुनीश्वर ! ऐसी दुःखदायक युवाअवस्थाकी मुझको इच्छा नहीं है.

हे मुनीश्वर ! जेते कछु दुःख हैं सो सब युवाअवस्थामें आयकर प्राप्त होते हैं. काम, क्रोध, लोभ, मोह,अहंकार, चपलता इत्यादिक जो दुःख हैं, सो सब युवाअवस्थामेंही स्थिर होते हैं. जैसे प्रलयकालमें सब रोग आय स्थिर होते हैं तैसे युवाअवस्थामें सब उपद्रव आय मिलते हैं और क्षणभंगुर है. जैसे बिजुरीका चमका होके मिट जाता है, जैसे समुद्रमें तरंग होते हैं अरु मिट जाते हैं, तैसे युवाअवस्था होके मिट जाती है. जैसे स्वप्नमें कोई स्त्री विकारकरके छल जाती है तैसे अज्ञानकरके युवाअवस्था छल जाती है.

हे मुनीश्वर ! युवाअवस्था जीवकी परमशत्रु है जो पुरुष इस शत्रुके शस्त्रसे बचे हैं, सो धन्य हैं. इसके शस्त्र काम, क्रोध हैं. जो इनते छूटा है, सो वज्रके प्रहारकरकेभी छेदा न जावेगा. जो इनकरके बांधा हुआ है सो पशु है.

हे मुनीश्वर!युवावस्था देखनेमें तो सुंदर है परन्तु अंतरते तृष्णाकरके जर्जरीभूत है.जैसे वृक्ष देखनेमें तो सुंदर होय अरु अंतरते घुन लगाहुआ है, तैसे युवावस्था जो भोगके निमित्त यत्न करती है सो भोग आपात रमणीय है. कारण यह कि, जबलग इंद्रिय अरु विषयका संयोग है, तबलग अविचारित भला लगता है, अरु जब वि-

योग हुआ तब दुःख होता है. ताते भोगकरके मूर्ख प्रसन्न होते हैं अरु उन्मत्त होते हैं. तिनको शांति नहीं होती. अरु अंतरते सदा तृष्णा रहती है. स्त्रीमें चित्तकी आसक्ति रहती है. जब इष्ट वनिताका वियोग होता है, तब तिसके स्मरणसे जलता है. जैसे वनका वृक्ष अग्नि करके जलता है तैसे युवावस्थामें इष्टवियोगकरके जीव जलता है. जैसे उन्मत्त हस्ती सांकरकरके बंधन पाता है, तब स्थिर होता है, कहूं जाय नहीं सक्ता; तैसे कामरूपी हस्ती है, तिसको सांकररूप युवा-अवस्था बंधन करती है अरु युवावस्थारूपी नदी है, तिसमें इच्छा-रूपी तरंग उठते हैं सो कदाचित् शांतिको नहीं पाते हैं.

अरु हे मुनीश्वर ! यह युवावस्था बड़ी दुष्ट है. कोऊ बड़ा बुद्धिवान् होवे अरु सदा निर्मल प्रसन्न होवे; एते गुणकरके संपन्न होवे, तिसकी बुद्धिकोभी युवावस्था मलिन कर डालती है. जैसे निर्मल जलकी बड़ी नदी होवे, अरु जब वर्षाकाल आवे, तब मलीन होय जावे, तैसे युवावस्थामें बुद्धि मलीन हो जाती है.

हे मुनीश्वर ! शरीररूपी वृक्ष है, तिसमें युवावस्थारूपी वल्ली प्रगट होती है; सो पुष्ट होती है, तिसपर चित्तरूपी भँवरा आय बैठता है; अरु तृष्णारूपी तिसकी सुगंधकरके उन्मत्त होता है अरु सब विचार भूल जाता है. जैसे जब प्रबल पवन चलता है, तब सूखे पत्रको उड़ाय लेजाता है अरु रहने नहीं देता; तैसे युवावस्था आवती है, तब वैराग्य संतोषादि गुणोंका अभाव करती है अरु दुःखरूपी कमलका युवावस्थारूपी सूर्य है. युवावस्थाके उदयते सब दुःख प्रफुल्लित हो आते हैं; ताते सब दुःखका मूल युवावस्था है. जैसे सूर्यके उदयते सूर्यमुखी कमल खिल आते हैं, तैसे चित्तरूपी कमल संसार-रूपी पँखुरी अरु सत्यरूपी सुगंधकरके खिल आता है. अरु तृष्णा-रूपी भौंरा तिसपर आय बैठता है अरु विषयकी सुगंध लेता है!

हे मुनीश्वर ! संसाररूपी रात्रि है, तिसमें युवावस्थारूपी तारागण प्रकाशते हैं. कारण यह जो शरीर युवावस्था करि सुशोभित होता है अरु युवावस्था शरीरको जर्जरीभाव करके हो आती है. जैसे धानका छोटा वृक्ष हरा तब लग रहता है, जबलग उसको फूल नहीं आया; जब फूल आते हैं, तब सूखनेको लगता है, अरु अन्नके कण परिपक्व होते हैं तब अन्नके छोटे वृक्ष जर्जरभावको पाते हैं, उसकी हरियाली नहीं रह सक्ती. तैसे जबलग जवानी नहीं आई, तवलग शरीर सुंदर कोमल रहता है. जब जवानी आई तब शरीर क्रूर हो जाता है. फेर परिपक्व होकर क्षीण होजाता है. अरु वृद्ध होता है.

ताते हे मुनीश्वर ! ऐसी दुःखकी मूलरूप युवावस्था है तिसकी मुझको इच्छा नहीं. जैसे समुद्र बड़े जलकरके पूर्ण है, तरंगको पसारता है अरु उछलता है तोभी मर्यादाका त्याग नहीं करता. ईश्वरकी आज्ञा मर्यादामें रहनेकी है अरु लोककी मर्यादा मेटके चलती है, अरु इस अवस्थावालोंको अपना विचार नहीं रहता. जैसे अंधकारमें पदार्थका ज्ञान नहीं होता, तैसे युवावस्थामें शुभ अशुभका त्याग नहीं होता. जिसको विचार नहीं रहा तिसको शांति कहांसे होवे ? सदा व्याधितापमें जरा रहता है. जैसे जलविना मच्छको शांति नहीं होती, तैसे विचारविना सदा पुरुष जलता रहता है.

जब युवावस्थारूपी रात्रि आती है, तब कामपिशाच आयके गर्जता है. तिसकरके इसको यही संकल्प उठते हैं. जो कोऊ कामी पुरुष आवे, तिसके साथमें यही चर्चा करे—हे मित्र ! वह कैसी सुंदर है ? अरु कैसे उसके कटाक्ष हैं ? सो किस प्रकार मोंको प्राप्त होय ? हे मुनीश्वर ! इस इच्छाके साथ वह सदा जरता रहता है. जैसे मरुस्थलकी नदीको देख मृग दौरता है अरु जलकी अप्राप्तिकरके जलता है,तैसे कामी पुरुष विषयकी वासनाकरके जलता है अरु शांति नहीं पाता है.

हे मुनीश्वर ! मनुष्यजन्म उत्तम है, परंतु जिनकी अभाग्य है तिनको, विषयते आत्मपदकी प्राप्ति नहीं होती· जैसे चिंतामणि कोईको प्राप्त होवे, तो तिसका निरादर करे और उनको जाने नहीं और डारि देवे, तैसे जिन पुरुषोंने मनुष्यशरीर पाय कर, आत्मपद नहीं पाया, सो बड़े अभागी हैं· अरु मूर्खताकरके अपने जीवनेको व्यर्थ खोय डारते हैं अरु युवावस्थामें परमदुःखका क्षेत्र अपने निमित्त बोता है अरु जेते विकार युवावस्थामें हैं, सो आयके इसको प्राप्त होते हैं. मान, मोह, मद इत्यादि विकारोंकरके पुरुषार्थका नाश करता है. हे मुनीश्वर ! ऐसे युवावस्था बड़े विकारको प्राप्त करती है· जैसे नदी वायुसों अनेक तरंग पसारती है, तैसे युवावस्था चित्तके अनेक कामको उठाती है. जैसे पंखी पंखोंकर, बहुत उड़ता है, जैसे सिंह भुजाके बलसों पशुको मारनेको दौड़ता है, तैसे चित्त युवावस्थाकरके विक्षेपकी ओर धावता है.

हे मुनीश्वर ! समुद्रका तरना कठिन है. काहेते कि—तामें जल अथाह है अरु विस्तारभी बड़ा है अरु तिसमें मच्छ, कच्छ, मगर बड़े देहधारी रहते हैं. ऐसे दुस्तर समुद्रका तरना सो मैं सुगम मानता हूं. परंतु युवावस्थाका तरना महाकठिन है; कारण यह कि, युवावस्थामें निर्दोष रहना कठिन है; ऐसी संकटवारी जो युवावस्था है, तिसमें चलायमान नहीं होते सो पुरुष धन्य हैं अरु वंदना करनेयोग्य है. हे मुनीश्वर ! यह युवावस्था चित्तको मलीन कर डारती है. जैसे जलकी बावरी है, तिसके निकट राख काटे रहे होय, सो पवन चलनेते सब आय बावरीमें गिरें, तैसे पवनरूपी युवावस्था दोषरूपी धूर काटनेको चित्तरूपी बावरीमें डारके, मलीन कर देती है. ऐसे अवगुणकरके पूर्ण जो युवावस्था, तिसकी इच्छा मुझको नहीं है.

हे युवावस्था ! मेरेपर यही कृपा करनी, जो तेरा दर्शन नहीं होवे; तेरा आवना मैं दुःखका कारण मानता हूं. जैसे पुत्रके मरणका संकट

पिता शोष नहीं सकता, अरु सुखका निमित्त नहीं देखता; तैसे तेरा आना मैं सुखका निमित्त नहीं देखता. ताते मुझपर दया करनी, जो अपना दर्शन न होवे.

हे मुनीश्वर ! युवावस्थाका तरना महाकठीन है. जो कोऊ यौवनवान् हो, सो नम्रतासंयुक्त होवे, और शास्त्रके गुण, वैराग्य, विचार, संतोष, शांति, इनकरके संपन्न होवे सो दुर्लभ है. जैसे आकाशमें वन होता आश्चर्य है, तैसे युवावस्थामें वैराग्य, विचार, शांति और संतोष पाना यह बड़ा आश्चर्य है. ताते मुझको सोई उपाय कहो, जिसकरके युवावस्थाके दुःखकी मुक्ति हो जाय अरु आत्मपदकी प्राप्ति होय.

इति श्रीयोगवासिष्ठे वैराग्यप्रकरणे युवानिंदावर्णनं नाम विंशः सर्गः ॥ २० ॥

एकविंशः सर्गः २१ ।



अथ स्त्रीनिंदावर्णनम् ।

हे मुनीश्वर ! जिस कामविलासके निमित्त स्त्रीकी वांछा करता है, सो स्त्री अस्थि, मांस, रुधिर, मूत्र और विष्ठाकरि पूर्ण है; इसीकी पूतरी बनी हुई है. जंत्रीकी बनी पूतरी होती है, सो तागेसों अनेक चेष्टा करती है; तैसे यह अस्थि-मांसादिककी पुतरीमें कछु और नहीं है. जो विचारकर नहीं देखता तिसको रमणीय दीखती है. जैसे पर्वतके शिखर दूरते सुंदर अरु निकटते असार हैं, पड़े पत्थरही दीखते हैं, तैसे स्त्री वस्त्र अरु भूषणसों सुंदर भासती है अरु जो अंगको भिन्न भिन्न विचार कर देखो तो सार कछु नहीं है. जैसे नागनीके अंग बहुत कोमल होते हैं, परंतु उसका स्पर्श करो तो काटके मार डारती है, तैसे जो कोई स्त्रीको स्पर्श करते हैं, तिनको नाश कर

डारती है; जैसे विषकी वेलि देखनेमात्र सुंदर लगती है, परंतु स्पर्श कियेते मार डारती है; जैसे हस्तीको जंजीरसे बांधो तब जिस द्वारपै रहता है, तहांही स्थिर रहता है; तैसे अज्ञानीका जो चित्तरूपी हस्ती है, सो कामरूपी जंजीरसे बँधा हुआ स्त्रीरूपी एक स्थानमें स्थित रहता है; वहांते कहूं जाय नहीं सक्ता और जब हस्तीको महावत अंकुशका प्रहार करता है. तब बंधनको तोरके निकस जाता है, तैसे यह चित्तरूपी मूर्ख हस्ती है सो महावतरूपी गुरुके उपदेशरूपी अंकुशका वारंवार प्रहार पाता है, तब सोभी निर्बंधन हो जाता है.

हे मुनीश्वर ! कामी पुरुष जो स्त्रीकी वांछा करता है सो अपने नाशके निमित्त करता है; जैसे कदलीवनका हस्ती, कागज़की हस्तिनी देखकर, छल पायके बंधनमें आता है, ताते परमदुःख पाता है; तैसे परमदुःखका मूल स्त्रीका संग है. हे मुनीश्वर ! जैसे वनके दाहकी अग्नि सबको जलावती है, तैसे स्त्रीरूपी अग्नि तिससे अधिक है; काहेते ? जो उस अग्निके स्पर्श कियेते तप्त होते हैं; और स्त्रीरूपी अग्नि तो स्मरणमात्रमें जलाती है. और जो सुख रमणीय दिखाता है सो आपातरमणीय है. जब स्त्रीके सुखका वियोग होता है, तब मुर्देकी नाई हो जाता है. तिस काल (स्त्रीसंयोगकाल) में भी शव (मुर्दा) जैसा हो जाता है.

हे मुनीश्वर ! यह तो अस्थि, मांस, और रुधिरका पिंजरा है, सो अग्निमें भस्म होजायगा अथवा पशुपक्षीको खानेका आहार होयगा. जिसको देखकर पुरुष प्रसन्न होताहै, तिसके प्राण आकाशमें लीन हो जाते हैं, ताते इस स्त्रीकी इच्छा करनी सो मूर्खता है. जैसे अग्निकी ज्वालाके ऊपर श्यामता है, तैसे स्त्रीके शीशऊपर श्याम केश हैं; जैसे अग्निके स्पर्श कियेते जलता है, तैसे स्त्रीके स्पर्श कियेते पुरुष जलते हैं. ताते जलन दोनोंमें तुल्य है. हे मुनीश्वर! इस पुरुषको नाश करनहारी स्त्रीरूपी अग्नि है, जो स्त्रीकी इच्छा करते हैं सो महामूर्ख अज्ञानी हैं. सो अपने नाशके

निमित्त इच्छा करतेहैं. जैसे पतंग अपने नाशकेनिमित्त दीपकी इच्छा करते हैं, तैसे कामी पुरुष अपने नाशके निमित्त स्त्रीकी इच्छा करते हैं.

हे मुनीश्वर! स्त्रीरूपी विषकी बेलि है, अरु हस्त पाँवके अग्र तिसके पत्र हैं, अरु भुजा डार्ली हैं, और अस्थिरूप गुच्छे हैं, नेत्रादिक इंद्रिय तिसके फूल हैं अरु कामीपुरुषरूपी भौंरे आय बैठते हैं अरु कामरूपी धीवरने स्त्रीरूपी जाल पसारा है, तिसपर कामी पुरुषरूपी पक्षी आय फँसते हैं. कामरूपी धीवर तिसको फँसायकर परमकष्ट प्राप्त करता है. ऐसे दुःखके देनहारी स्त्रीकी जो वांछा करते हैं, सो महामूर्ख हैं.

हे मुनीश्वर! स्त्रीरूपी सर्पिणी है, जब तिसका फुंकारा निकसता है, तब तिसके निकट कमलफूल जब जल जाते हैं, ऐसी स्त्रीरूपी सर्पिणी है तिसका इच्छारूप फुंकारा जब निकसता है तब वैराग्यरूपी कमल जल जाते हैं अरु जब सर्पिणी डसती है तब विष चढ़ताहै और स्त्री-रूपी सर्पिणीकी चितौनी करी तब अंतरते आपही विष चढ़ जाता है.

हे मुनीश्वर! जैसे व्याध छलकर मच्छीको फँसाता है, तैसे कामी पुरुष मच्छीवत् सुंदर स्त्रीरूपी जाल देखके फँसता है, और स्नेहरूपी तागेसों कामी पुरुष बंधन पाय, खैंचाया चला जाता है. फिर तृष्णारूपी छूरीसों काम मार डारता है. हे मुनीश्वर! ऐसे दुःखके देनहारी स्त्रीकी मुझको इच्छा नहीं. अरु कामरूपी पारधी है, तिसते रागरूपी इंद्रि-यसों जाल बिछाय कामी पुरुषरूपी मृगको आसक्त कर डारता है. अरु स्त्रीतो स्नेहरूपी डोरी है; तिसकर कामी पुरुषरूप बेलसों बँधा है अरु स्त्रीका मुखरूपी जो चंद्रमा है तिसको देखकर, कामी पुरुष रूप कम-लिनी खिल आती है; जैसे चंद्रमुखी कमल चंद्रमाको देखकर प्रसन्न होते हैं और सूर्यमुखी नहीं होते, तैसे यह कामी पुरुष भोगढूकर प्रसन्न होते हैं अरु ज्ञानवान् प्रसन्न नहीं होते हैं. जैसे नकुल सर्पको बिलमेंते निकासके मारता है, तैसे कामी पुरुषको स्त्री आत्मानंद-

मेंते निकालके मार डारती है. जब स्त्रीके निकट जाता है, तब उसको भस्म कर डारती है. जैसे सूखे तृण अरु घृतको अग्नि भस्म कर डारती है, तैसे कामी पुरुषको स्त्रीरूपी नागिनी भस्म कर डारती है.

हे मुनीश्वर! स्त्रीरूपी जो रात्रि है, तिसका स्नेहरूपी अंधकार है, तिसमें काम-क्रोधादिक उलूक अरु पिशाच हैं. हे मुनीश्वर! जो स्त्री-रूपी खड्गके प्रहारते युवारूपी संग्रामते बचा है, सो पुरुष धन्य है, तिसको मेरा नमस्कार है. स्त्रीका संयोग परमदुःखका कारण है, ताते मुझको इसकी इच्छा नहीं. हे मुनीश्वर! जो रोग होता है, तिसके अनुसार औषधि करता है, तब रोग निवृत्त होता है. अरु कोऊ कुपथ्य दिये वाका प्रबल होता है अरु रोग बढ़ जाता है, ताते मेरे रोगके अनुसार औषधि करो.

सो मेरा रोग सुनिये. जरा अरु मृत्यु यह मुझको बड़ा रोग है, तिसके नाशकी औषधि मुझको दीजिये और स्त्रियादिक जो भोग हैं, सो सब इस रोगके वृद्धिकर्ता हैं. जैसे अग्निमें घृत डारिये, तब वह बढ़ जाती है, तैसे भोगसों जरा-मृत्युआदि रोग बढ़ते हैं; ताते इसरोगकी निवृत्तिका औषध करो, नहीं तो सबका त्याग कर वनमें जाय रहूंगा.

हे मुनीश्वर! जिसके स्त्री है तिसको भोगकी इच्छा भी होती है और जिसके स्त्री नहीं तिसको स्त्रीकी इच्छाभी नहीं. जिसने स्त्रीका त्याग किया है तिसने संसारकाभी त्याग किया है, सोई सुखी है. संसारका बीज स्त्री है, ताते मुझको स्त्रीकी इच्छा नहीं, मुझको सोई औषधि दीजिये जिसते जरा मृत्यु आदि रोगोंकी निवृत्ति हो.

इति श्रीयोगवासिष्ठे वैराग्यप्रकरणे स्त्रीनिंदावर्णनं नामैकविंशः सर्गः ॥ २१ ॥

द्वाविंशः सर्गः २२।

अथ जरावस्थानिंदावर्णनम्।

श्रीराम उवाच—हे मुनीश्वर ! बाल्यावस्था तो महाजड है अरु अशक्त है. और जब युवावस्था आती है, तब बाल्यावस्थाको ग्रहण कर लेती है. तिसको अनंतर वृद्धावस्था आती है, तब शरीर जर्जरीभूत होजाता है अरु बुद्धि क्षीण होजाती है; बहुरी मृत्युको पाता है. हे मुनीश्वर ! इसप्रकार अज्ञानीका जीवना व्यर्थ है, कछु अर्थकी सिद्धि नहीं होती है. जैसे नदीके तटपर वृक्ष होते हैं सो जलके प्रवाह करके जर्जरीभूत होजाते हैं, तैसे वृद्धावस्थामें शरीर जर्जरीभूत होजाता है, जैसे पवनसों पत्र उड़ जाता है, तैसे वृद्धावस्थामें शरीर नाश पाता है. जेते कछु रोग हैं, सो सब वृद्धावस्थामें आय प्राप्त होते हैं, अरु शरीर कृश होय जाता है. अरु स्त्रीपुत्रादिक सब वृद्धका त्याग करदेते हैं जैसे पक्के फलको वृक्ष त्याग देता है, तैसे वृद्धको कुटुंब त्याग देता है, अरु देख२ हँसते हैं. जैसे बावरेको देखते हँसके बोलते हैं कि इसकी बुद्धि सब जाती रही; जैसे कमलफूलनके ऊपर बर्फ पड़ता है अरु कमल जर्जरीभूत होते हैं, तैसे जरावस्थामें पुरुष जर्जरीभावको प्राप्त होता है. अरु शरीर कुबरा होजाता है, केश श्वेत होजाते हैं; शक्ति क्षीण होजाती है. जैसे चिरकालका बड़ा वृक्ष होता है, तिसमें घुन होता है, तैसे शक्ति कछु रहती नहीं.

हे मुनीश्वर! और हू सब प्रकृति क्षीण होजाती है, परंतु एक आसक्तिमात्र रहती है, जैसे बडे वृक्षपै उलूक आय रहते हैं तैसे इसमें क्रोधशक्ति आय रहती है; और शक्ति सब क्षीण होजाती हैं. हे मुनीश्वर ! जरावस्था दुःखका घर है. जब जरा अवस्था आती है. तब सब दुःख इकठे होते हैं; तिनकर महादीन होजाते हैं अरु युवावस्थाका जो कामका बल रहता है, सो जरामें क्षीण होजाता है अरु इंद्रियोंकी

आसक्ति घट जाती है, तिसते चपलताका अभाव होजाता है. जैसे पिताके निर्धन हुवे पुत्र दीन होजाता है, तैसे शरीर निर्बल हुवे इंद्रियहू निर्बल होजाती हैं और एक तृष्णा उन्मत्त हो बढ जाती है.

हे मुनीश्वर ! जब जरारूपी रात्रि आती है, तब खाँसीरूपी गीदड़ी आय शब्द करती है अरु आधिव्याधिरूपी उलूक आय निवास करते हैं. हे मुनीश्वर! ऐसी जो नीच वृद्धावस्था है, तिसकी मुझको इच्छा नहीं. यह देह जरा आयेते कूबरी होय जाती है. जैसे पके फलनसों वृक्ष झुक जाता है, तैसे जराके आयेते देह कूबरी होजाती है. जो युवावस्थामें स्त्रीपुत्रादिक चाहते थे, अरु टहल करतेथे, सो सब उसको त्याग देते हैं. जैसे, वृद्ध बैलको बैलवारा त्याग देता है, तैसे इसको बंधु त्याग देते हैं, और देखके हँसते हैं अरु अपमान करते हैं. तिनको ऊंटकी नाई भासता है. हे मुनीश्वर! ऐसी जो नीच अवस्था है तिसकी मुझको इच्छा नहीं. अब जो कछु कर्तव्य मुझको कहो सो मैं करूं.

इस शरीरकी तीनों अवस्थाओंमें कोऊ सुखदाई नहीं है; क्योंकि, बाल्यावस्था महामूढ है अरु युवावस्था महाविकारवान् है अरु जरा-अवस्था महादुःखका पात्र है. बाल्यावस्थाको युवावस्था ग्रहण कर लेती है अरु युवावस्थाको जरावस्था ग्रहण कर लेती है अरु जरा अवस्थाको मृत्यु ग्रहण कर लेता है. यह अवस्था सब अल्पकालकी हैं. इनके आश्रयकरके मेरेको कहां सुख होना है? ताते मुझको सोई उपाय कहो, जिसकर इस दुःखसे मैं मुक्त होजाऊँ.

हे मुनीश्वर! जब जरा अवस्था आती है, तब मरनाभी निकट आता है. जैसे, संध्याके आये रात्रि तत्काल आय जाती है और जो संध्याके आये दिनकी इच्छा करते हैं सो महामूर्ख हैं, तैसे जराके आये जीवनेकी आशा रखनी सो महामूर्खता है. हे मुनीश्वर! जैसे बिल्ली चितौनी करती है, जो चूहा आवे तो पकर लेऊँ, तैसे मृत्यु चितवती है कि जरा

अवस्था आवे तो मैं इसका ग्रहण कर लेऊँ अरु जरा अवस्था मानो कालकी सखी है. रोगरूपी मशालेकर शरीररूपी मासको सुखाती है तब काल जो इसका स्वामी है सो आयकर, भोजन करलेता है, अरु शरीररूपी घर है, तिसका स्वामी काल है. जब काल घरमें आवे, तब तिसके आगे तीन पटरानी आती हैं. पहिली अशक्तता; दूसरी अंगमें पीड़ा, और तीसरी खासी सो शीघ्र श्वासको चलावती हैं अरु श्वेत केश होते हैं सो चमरकी नाईं झुलते हैं ऐसी जो कालकी सहेली हैं सो प्रथमही आई प्रवेश करती हैं अरु जरारूपी कलगी शरीरको बनाती है तब जो वाका स्वामी कालहैसो आय प्रवेश करताहै

हे मुनीश्वर! जो परमनीच अवस्था है सो जराकी है सो जब आती है तब शरीर जर्जरीभूत कर देती है, कँपानेको लागती है अरु शरीरको निर्बल कर देती है अरु क्रूर कर देती है जैसे कमलपर बर्फकी वर्षा होवे अरु जर्जरीभूत होय जाय तैसे शरीरको जर्जरीभूत करडारती है. जैसे बनमें बाघिन आयके शब्द करती है. अरु मृगका नाश करती है. तैसे खासीरूपी बाघिन आयके मृगरूपी बलका नाश करती है.

हे मुनीश्वर! जब आती है तब मृत्यु प्रसन्न होती है. जैसे चंद्रमाके उदयते कमलिनी खिल आती है तैसे मृत्यु प्रसन्न होती है. अरु यह जरा अवस्था बडी दुष्ट है बडे बडे योद्धा हुए हैं तिनकोभी इसने दीन कर दिया है. यद्यपि बडे शूरमाओंने संग्राममें शत्रुओंको जीते हैं, सो उनकोहू जराने जीतलिये हैं अरु जिन्होंने बडे पर्वत चूर्ण कर डारे हैं तिनकोहू जरापिशाचिनीने महादीन कर न दिये हैं यह जरारूपी जो राक्षसी है, तिसने सबको दीन कर दिये हैं सो सबको जीतनेवारी है.

हे मुनीश्वर! यह जरा शरीरको अग्निकी नाईं लगती है. जैसे अग्नि वृक्षको लगता है अरु धूम निकलता है, तैसे शरीररूपी वृक्षमें जरारूपी अग्नि लगके, तृष्णारूपी धुवा निकसताहै. जैसे डब्बेमें बड़े रत्न

रहते हैं, तैसे जरारूपी डब्बेमें दुःखरूपी अनेक रत्न रहते हैं, अरु जरारूपी वसंतऋतु है, तिसकरके शरीररूपी वृक्ष दुःखरूपी रसकरके पूर्ण होता है. जैसे हस्ती सांकरसों बँधा हुआ दीन होजाता है तैसे जरारूपी सांकर करेक बँधाहुआ पुरुष दीन हो जाता है, अरु अंग सब शिथिल होजाते हैं. बल क्षीण हो जाता है. अरु इंद्रियांभी निर्बल हो जाती हैं अरु शरीर जर्जरीभावको प्राप्त होता है; परंतु तृष्णा नहीं घटती है; नित्य बढ़ती चली जाती है. जैसे रात्रि आती है तब सूर्यमुखी कमल सब मूँद जाते हैं तब पिशाचिनी आय, विचरने लगती है अरु प्रसन्न होती है, तैसे जरारूपी रात्रिके आयेते सब शक्तिरूपी कमल मूँद जाते हैं अरु तृष्णारूपी पिशाचिनी प्रसन्न होती है.

हे मुनीश्वर ! जैसे गंगाके तटपर वृक्ष रहते हैं, सो गंगाजलके वेगसों जर्जरीभूत होजाते हैं, तैसे जो आयुरूपी प्रवाह चलता है, तिसके वेगकर शरीर जर्जरीभूत हो जाता है. जैसे मांसके टुकड़ेको देख, आकाशते उड़ती चील नीचे आय ले जाती है, तैसे जरा अवस्थामें शरीररूपी मांसको काल ले जाता है. हे मुनीश्वर ! यह तो कालका ग्रास बना हुआ है. जैसे सुंदर वृक्षको हस्ती खाय जाता है तैसे जरा अवस्थावारे शरीरको काल देखके भोजन कर जाता है.

इति श्रीयोगवासिष्ठे वैराग्यप्रकरणे जरावस्थानिन्दानिरूपणं नाम द्वाविंशः सर्गः ॥ २२ ॥

त्रयोविंशः सर्गः २३ ।

अथ कालापवादवर्णनम् ।

श्रीराम उवाच—हे मुनीश्वर ! संसाररूपी गर्त है, तिसमें अज्ञानी नर गिरा है. सो संसाररूपी गर्त अल्प है अरु अज्ञानी तो बड़ा हो

गया है: संकल्प-विकल्पकी आधिक्य ताते बडे हैं अरु जो ज्ञानवान् पुरुष हैं सो संसारको मिथ्या जानते हैं· फिर संसाररूपी जालमें फँसते नहीं हैं, अरु जो अज्ञानी पुरुष हैं सो संसारको सत्य जानकर, संसारकी आस्थारूपी जालमें फँसता है, अरु संसारके भोगकी वाछा करता है सो ऐसे–जैसे दर्पणमें प्रतिबिंब देखकर बालक पकरनेकी इच्छा करता है, तैसे अज्ञानी संसारको सत्य जानकर जगत्के पदार्थकी वांछा करता है, कि यह मेरेको होवे; यह मेरेको नहीं होवे अरु यह जो सुख है सो नाशात्मक है· अभिप्राय यह कि, जो आते हैं अरु जाते हैं सो स्थिर नहीं रहते हैं· इनका काल ग्रहण करता है· जैसे पके अनारको चूहा खाय जाता है, तैसे सब पदार्थोंको काल खाता है:

हे मुनीश्वर ! जेते कछु पदार्थ हैं, सो कालग्रसित हैं, बड़े बड़े सुमेरु जैसे गंभीर बलवारे पुरुषोंको ग्रास कालने किये हैं: जैसे सर्पको नकुल भक्षण करजाता है, तैसे बडे बलीका ग्रास काल करजाता है, अरु जगत्‌रूपी एक गूलरका फल है, तिलका जो मज्जा है, सो ब्रह्मा, दिक हैं, सो फलका जो वृक्ष है अरु तिसका जो वन है सो ब्रह्मरूप है, तिस ब्रह्मरूप वनमें जेते कछु वन हैं सो इसका आहार है, सबका, भक्षण काल करजाता है·

हे मुनीश्वर ! यह काल बड़ा बलिष्ठ है; जो कछु देखनेमें आता है, सो सब इसने ग्रास कर लिया है; तब औरकी कहा कहानी है? और हमारे जो बड़े ब्रह्मादिक तिनकाभी काल ग्रास करजाता है, जैसे, मृगका ग्रास सिंह कर लेता है और काल किसी करके जाना नहीं जाता· छिन, घरी, प्रहर, दिन, मास और वर्षादिककर जानिय सो काल है: और कालकी मूर्त्ति प्रगट नहीं है, ऐसा अप्रगटरूप है अरु किसीकी स्थिति होने नहीं देता, अरु एक वेलि कालने पसारी है और तिसकी त्वचा रात्रि है अरु फूल तिसका दिन है अरु जीवरूपी भौंरे तिसपर आय बैठते हैं.

हे मुनीश्वर! जगतरूपी गूलरका फल है, तिसमें जीवरूपी मच्छर बहुत रहते हैं, तिस फलका भक्षण काल कर जाता है. जैसे अनारका भक्षण तोता करता है, तैसे काल भक्षण करता है. अरु जगत्रूपी वृक्ष है अरु जीवरूपी तिसके पत्र हैं, तिसका कालरूपी हस्ती भक्षण कर जाता है अरु शुभअशुभरूपी भैंसेनको कालरूपी सिंह छेदछेदके खाता है॰

हे मुनीश्वर ! यह काल महाक्रूर है, सो किसीपर दया नहीं करता; सबका भोजन कर जाता है. जैसे मृग सब फूलनको खाय जाता है, तिसके कोऊ रहता नहीं है, परंतु एक कमल उसते बचे हैं. सो कमल कैसा है? शांति अरु मैत्री तिसके अंकुर हैं अरु चेतनामात्र प्रकाश है, इस कारणते वह बचा है, सो कालरूपी मृग इसको पहुँच नहीं सकता. इससे प्राप्त हुवा कालभी लीन होजाता है और जेता कछु प्रपंच है, सो सब कालके मुखमें है. ब्रह्मा, विष्णु, रुद्र, कुबेर आदिकर सब मूर्ति कालकी धरी हुई हैं॰ फिर तिनकोभी अंतर्ध्यान करदेता है॰ हे मुनीश्वर ! उत्पत्ति, स्थिति अरु प्रलय सब कालते होते हैं॰ अनेक महाकल्पकाहू ग्रहण करलेता है, अरु अनेक बेर करेगा, अरु कदाचित् होनहारीहू नहीं॰ जैसे अग्नि घृतकी आहुतिनसो तृप्त नहीं होता, तैसे जगत् अरु सब ब्रह्मांडका भोजन करतेहू काल तृप्त नहीं होता, अरु इसका ऐसा स्वभाव है, जो इंद्रको दरिद्री कर देता है अरु दरिद्रीको इंद्र कर देता है और सुमेरुको राई बनाता है अरु राईका सुमेरु करता है॰ सबते बडे ऐश्वर्यवारेको नीच कर डारता है, सबते नीचको उंचा कर डारता है, अरु बूँदको समुद्र कर डारता है अरु समुद्रको बूँद करता है ऐसी शक्ति कालमें है॰ अरु जीवरूपी जो मच्छ है, तिसको शुभाशुभ कर्मरूपी छूरेसों छेदता रहता है॰ फिर कैसा है ? जो कालकूपका चक्र है, जीवरूपी हंडीको शुभ अशुभ कर्मरूपी रस्सीसों बांधकर ले फिरता है॰ फिर कैसा है ? जीवरूपी वृक्षको रात्रि अरु दिनरूपी कुल्हारा कर छेदता है॰

हे मुनीश्वर ! जेता कछु जगद्विलास भासता है, सो सबका ग्रहण काल कर लेवेगा अरु जीवरूपी रत्नका काल डब्बा है, सो अपने उदरमें डारता जाता है और खेल करता है, अरु चंद्रसूर्यरूपी गेंदको कबहूं उर्ध्व उछालता है, कबहू नीचे डारता है, अरु जो महापुरुष है सो उत्पत्तिप्रलयमें जे पदार्थ हैं, तिनमें स्नेह किसीके साथ नहीं करते; तिसका नाश करनेको काल समर्थ नहीं. जैसे मुंडोंकी माला महादेवजी गरेमें धरते हैं, तैसे यहभी जीवोंकी माला गरेमें डारता है.

हे मुनीश्वर ! जो बड़े बड़े बलिष्ठ हैं, तिनकोभी काल ग्रहण कर लेता है: जैसे समुद्र बड़ा है, तिसका वडवाग्नि पान करलेता है और जैसे पवन भोजपत्रको उड़ाता है, तैसा कालका बल है. किसीकी सामर्थ्य नहीं, जो इसके आगे स्थित रहे:

हे मुनीश्वर ! शांतिगुणप्राधान्य जो देवता हैं, अरु रजोगुणप्राधान्य जो बड़े राजा हैं अरु तमोगुणप्राधान्य जो दैत्य राक्षस हैं, तिनमें कोऊ समर्थ नहीं, जो इसके आगे स्थित होवे. जैसे टोकनीमें अन्न अरु जल धरके अग्निपर चढ़ाय दियेते फिर उछलते हैं सो अन्नके दाने कड़छीकरके कबहूं ऊर्ध्व और कबहूं नीचे जाते हैं, तैसे जीवरूपी अनेक दाने जगतरूपी टोकनीमें परेहुए रागद्वेषरूपी अग्निपै चढे हैं अरु कर्मरूपी कडछीकरके कबहूं ऊर्ध्व जाता है, कबहूं नीचे जाता है: हे मुनीश्वर ! यह काल किसीको स्थिर होने नहीं देता. महाकठोर है, दया किसीपर नहीं धरता: इसका भय मुझको रहता है, ताते सोई उपाय मुझको कहो, जिसकारके मैं कालतें निर्भय होजाऊं:

इति श्रीयोगवासिष्ठे वैराग्यप्रकरणे कालापवादनिरूपणं नाम त्रयोविंशः सर्गः।

चतुर्विंशतितमः सर्ग. २४।

अथ कालविलासवर्णनम् ।

श्रीराम उवाच—हे मुनीश्वर ! यह काल बड़ा बलिष्ठ है. जैसे राजाके पुत्र शिकार खेलने जाते हैं, तब बनमें बडे पशु पक्षी देखते हैं और मारते हैं, तैसे यह संसाररूपी बन है, तिसमें प्राणीमात्र पशु-पक्षी हैं. जब कालरूपी राजपुत्र तिसमें शिकार खेलने आता है तब सब कालरूपी राजपुत्र तिसकोही मारता है.

हे मुनीश्वर ! यह काल महाभैरव है, वह सबका ग्रास कर लेता है. प्रलयमें सबका प्रलय कर डारता है, अरु इसकी जो चंडिका शक्ति है, तिसका बडा उदर है, अरु कालिका सबका ग्रास करती है, पीछे नृत्य करती है. जैसे वनके मृगको सिंह अरु सिंहिनी भोजन करते हैं, और नृत्य करते हैं. तैसे जगतरूपी बनमें जीवरूपी मृगका भोजन करके काल अरु कालिका नृत्य करते हैं. बहुरि इनते जगत्का प्रादुर्भाव होता है: नानाप्रकारके पदार्थनको रचते हैं. पृथ्वी, बगीचे बावरी-आदि सब पदार्थ इनहीते उत्पन्न होते हैं अरु सुंदर जीवकीहू उत्पत्ति इनते होती है और एक समयमें उनका नाश भी कर देती है: सुंदर समुद्र रचके, फिर वामें अग्नि लगाय देती है अरु सुंदर कमलको बनायके फिर वाके ऊपर बर्फकी बरसा करती है; इत्यादि नाना पदार्थनको रचिके तिनका नाश करती है: जहां बडे स्थान बसते हैं तिनको उजड कर डारती है फिर उजाडमें बस्ती कर धरती है अरु नाशभी करती है. स्थिर रहने किसीको नहीं देती: जैसे बागमें बानर आयके, वृक्षको ठहरने नहीं देता तैसे कालरूपी वानर किसी पदार्थको स्थिर रहने नहीं देता.

हे मुनीश्वर ! इस प्रकारसों सब पदार्थ कालसों जर्जरीभूत होते हैं.

तिसका मैं आश्रय किस रीतसों करूं ? मुझको तो नाशरूप भासता है, ताते अब मुझको किसी जगतके पदार्थकी इच्छा नहीं.

इति श्रीयोगवासिष्ठे वैराग्यप्रकरणे कालविलासवर्णनं नाम चतुर्विंशतितमः सर्गः ॥ २४ ॥

पञ्चविंशतितमः सर्गः २५।

अथ कालविलासवर्णनम् ।

श्रीराम उवाच—हे मुनीश्वर ! इस कालका महापराक्रम है- इसके तेजके सन्मुख रहनेको कोऊ समर्थ नहीं. क्षणमें ऊंचको नीच कर डारता है अरु नीचको ऊंच कर डारता है, तिसका निवारण कोऊ कर नहीं सक्ता. सब इसीके भयके परे कंपते हैं. यह महा- भैरव है, सब विश्वका ग्रास कर लेता है, अरु इसकी चंडिकारूप शक्ति है सो बलवान् है. नदीरूप है, तिसका उलंघन कोऊ नहीं कर सक्ता है अरु महाकालरूप काली है, तिसका बडा भयानक आ- कार है, अरु कालरूप जो रुद्र है, तिनते अभिन्नरूपी कालिका है सो सबका पान कर लेती है, पीछे भैरव अरु भैरविनी नृत्य करते हैं.

सो वह कालकालिका कैसी है ? जिसका आकाशमें बडा शीश है, अरु जिसके पातालमें चरण हैं, दशोंदिशा जिसकी भुजा हैं, सप्त समुद्र जिसके हाथमें कंकण हैं, संपूर्ण पृथ्वीरूपी तिसके हाथमें पात्र हैं, तिसके ऊपर जीव हैं सो भोजनयोग्य हैं, हिमालय अरु सुमेरु पर्वत दोनों कानमें बडे रत्न हैं; चंद्रमा, सूर्य जिसके लोचन हैं, अरु सब तारागण वाके मस्तकमें बिंदु हैं, अरु हाथमें त्रिशूल मुशल—आदि शस्त्र हैं अरु जिसके हाथमें तंद्रा फांसा है, तिसकरके जीवोंको मारती है. ऐसी जो कालिका देवी है, सो जीवका ग्रास करके महाभैरव

जो रुद्र है, तिनके आगे नृत्य करती है. अरु 'अट्ट अट्ट' ऐसा शब्द करती है अरु जीवका भोजन करके उनकी रुंडमाला गलेमें धारण करती है; सो भैरवके आगे नृत्य करती है. अरु भैरव कैसे हैं? कि जिनके सन्मुख रहनेकी शक्ति कोऊमें नहीं है अरु जहां उजार है तहां छिनमें बस्ती करड़ालते हैं अरु जहां बस्ती होवे तहां छिनमें उजार करते हैं. इसीते तिनका नाम दैव कहते हैं अरु तिनको कृतांतभी कहते हैं. काहते कि, बड़े २ पदार्थ होते हैं अरु तिनका नाशभी करते हैं अरु स्थिर किसीको रहने नहीं देते; तिसते तिनका नाम कृतांत है अरु नित्यरूपीहू यही हैं. जो इस आदि धरा है सोई करता अरु कर्मरूप है. काहेते कि-परिणाम जिसका अनित्यरूप है, इसीते इसका कर्म नाम है; सो कैसे नाश करता है? जब अभावरूपी धनुष्य हाथमें धरता है तिसकर रागदोषरूपी बाण चलता है, तिस बाणते जर्जरीभूत करके, नाश करता है अरु उत्पत्ति-नाशमें उसको यत्नभी कछु करना नहीं पडता है. इसका यह खेल कैसा है? जैसे बालक मृत्तिकाकी सेना बनाता है, फिर उठायकर, नाशभी करदेता है, तैसे कालको उपजावने अरु नाश करनेमें यत्न करना नहीं पडता है. हे मुनीश्वर! काल‌रूपी धीवर है. तिसने क्रियारूपी जाल पसारा है, तिसविषे जीवरूपी पक्षी पडे फँसते हैं, सो फँसे हुए शांतिको नहीं प्राप्त होते हैं. हे मुनीश्वर! यह तो सब नाशरूप पदार्थ हैं. इनमें आश्रय किसका करना, जिसकरके सुखी होवे. स्थावर जंगम जगत् सब कालके मुखमें हैं. यह सब नाशरूप मुझको दृष्टिमें आवे हैं, ताते जो निर्भय पद होय सो मुझसे कहो.

इति श्रीयोगवासिष्ठे वैराग्यप्रकरणे कालविलासवर्णनं नाम पञ्चविंशतितमः सर्गः ॥ २५ ॥

षड्विंशतितमः सर्गः २६ ।

कालविलासवर्णनम्।

श्रीराम उवाच—हे मुनीश्वर! जेते कछु पदार्थ भासते हैं सो सब नाशरूप हैं, ताते किसकी इच्छा करूं और कौनको आश्रय करूं? इनकी इच्छा करनी मूर्खता है. अरु जेती कछु चेष्टा अज्ञानी करता है सो सब दुःखके निमित्त है अरु जीवनेमें अर्थकी सिद्धि कछु नहीं है. काहेते? जो बालकअवस्था होती है, तब मूढता रहती है; विचार कछु नहीं रहता. अरु जब युवा अवस्था आती है, तब मूर्खताकरके विषयोंको सेवते हैं अरु मान--मोहादिविकारोंसे मोहही जाते हैं. तामें भी विचार कछु नहीं होता अरु स्थिर भी नहीं रहते; फिर दीनका दीन रहिके, विषयकी तृष्णा करता है; शांतिको नहीं पाता है.

हे मुनीश्वर! आयुष्य जो है सो महाचंचल है अरु मृत्यु तो निकट है, वाको अन्यथा भाव नहीं होता है. हे मुनीश्वर! जेते कछु भोग हैं, सो रोगही हैं अरु जिसको संपदा जानते हैं, सो आपदा है अरु जिसको सत्य कहते हैं सो असत्यरूप है अरु जिन स्त्रीपुत्रादिकोंको मित्र जानते हैं, सो सब बंधनके कर्ता हैं अरु इंद्रियें जो हैं सो महाशत्रुरूप हैं. सो सब मृगतृष्णाके जलवत् हैं अरु यह देह है सो विकाररूप है अरु मन महाचंचल है और सदा अशांतरूप है अरु अहंकार जो है सो महानीच है. इसनेही दीनताको प्राप्त किया है; इसकरके जेते कछु पदार्थ इसको सुखदायक भासते हैं, सो सब दुःखके देनेहारे हैं, तिसकरके इसको कदाचित् शांति नहीं होती; ताते मुझको इनकी इच्छा नहीं यद्यपि देखने मात्र सुंदर भासते हैं, तोभी इसमें सुख कछु नहीं. सो पदार्थ स्थिर रहनेका नहीं. जैसे समुद्रमें नानाप्रकारके तरंग भासते हैं. सो सब वडवाग्निकरके नाश होते हैं तैसे यह पदार्थभी नाशको पाते हैं तो मैं अपनी आयुविषे कैसे आस्था करूं?

हे मुनीश्वर! बडे समुद्र जो दृष्टि आते हैं अरु सुमेरु-आदि बडे पदार्थ हैं सो सब नाशको पाते हैं; तब हम सरीखेकी कहा वार्ता है? और बडे बडे दैत्य राक्षसहू होके, नाश पाय गये हैं, तो हमसरीखेकी कहा वार्ता है? अरु देवता, सिद्ध, गंधर्व हुए हैं सो सब नाशको पाते हैं तिनकी नाम संज्ञाभी नहीं रहती तब हमसरीखेकी कहा वार्ता? पृथ्वी, जल अरु दाहकशक्ति धरनहारे जो अग्नि अरु पवन हैं सो वीर्यसहित सब नाश होय जायँगे, कछु इनकी सत्ताभी न रहेगी, तो हमसरीखेकी कहा वार्ता? अरु यम, कुवेर, वरुण, इंद्र, बडे तेजवारे हैं सो सब नाश पावेंगे तो हम सरीखेकी कहा कहनी है?और तारामंडल जो दृष्टि आतेहैं सो सब गिर पडेंगे-जैसे सूखे पात वृक्षते वायुसों गिरजाते हैं, तैसे तारे गिरते हैं, तब हमसरीखेकी कहा वार्ता? हे मुनीश्वर! ध्रुव जो स्थिर भासताहै सो भी अस्थिर होयगा अरु चंद्रमा अमृतमय मंडलका दृष्टिमें आता है, और सूर्य अखंड मंडल है जिनका ऐसा जो प्रकाशसंयुक्त दृष्टि आताहै सो सब नाश हो जावहींगे, तो हमसरीखेकी कहा वार्ता है ? औरकीहू कहा वार्ता है ? यह जो बडे ईश्वर जगतके अधिष्ठाता हैं तिनकाभी अभाव हो जाता है. परमेष्ठी जो ब्रह्मा हैं, तिनकाभी अभाव हो जाता है; हरि जो विष्णु सोभी हरे जायँगे; महाभैरवरूप जो रुद्र, सोभी शून्य हो जायँगे, तो हमसरीखोंकी कहा वार्ता करनी ? अरु काल जो सबका भक्षण करनेहारा है, सोभी टूक टूक होके नाशको प्राप्त होवेगा, अरु कालकी स्त्री जो नीती है सोहू अनीतिताको प्राप्त होवेगी· अरु सबका आधार जो आकाश है, सोभी नाश होजायगा; तो हमसरीखेकी कहा वार्ता ? अरु जेता कछु जगत् अर्थकरके सिद्ध होताहै सो सब नाश हो जावेगा; कोऊहू स्थिर रहनेका नहीं तब हम किसकी आस्था करें ? अरु किसका आश्रय करें ? यह जगत सब भ्रममात्र है, अज्ञानीकी इसमें आस्था होती है और हमारी नहीं है· कि–जगत्भ्रम कैसे उत्पन्न भया है

अरु मैं इतना जानता हूं कि, संसारमें इतने दुःखी होते हैं, सो अहंकारने किये गये हैं.

हे मुनीश्वर!इसका जो परमशत्रु अहंकार है, इसकरके भटकता फिरता है: जैसे जेवरीमें बाँधा हुआ पतंग कबहूं ऊर्ध्व, कबहूं नीचे जाता है; स्थिर कबहूं नहीं रहता: तैसे जीवहू अहंकार करके कबहूं ऊर्ध्व और कबहूं अधः जाता है,स्थिर कबहूं नहीं होता.जैसे अश्वारूढ रथके ऊपर बैठके सूर्य आकाशमार्गमें भ्रमता है, तैसे यह जीव भ्रमता है; स्थिर कदाचित् नहीं होता. हे मुनीश्वर! यह जीव परमार्थ सत्यस्वरूपते भूलाहुआ भटकता है अरु अज्ञानकरके संसारमें आस्था करता है अरु भोगहूको सुखरूप जानकर, तिसमें तृष्णा करता है और जिनको सुखरूप जानता है, सो रोगसमान है और विषकरके पूर्ण सर्प जैसे हैं, सो जीवके नाश करनहारे हैं और जिनको सत्य जानता है सो असत्य है. सब कालके मुखमें ग्रसे हुए हैं.

हे मुनीश्वर! विचारबिना अपना नाश आपही करता है, काहेते कि, इसका कल्याण करनेहारा बोध है. जो सत्य विचारबोधके शरण जाय तो कल्याण होवे और जेते पदार्थ हैं सो स्थिर कोऊ नहीं: इनको सत्य जानना दुःखके निमित्त है. हे मुनीश्वर! जब तृष्णा आती है, तब आनंद अरु धैर्यको नाश करदेती है, जैसे वायु मेघका नाश कर डालता है, तैसे तृष्णा नाश कर डालती है. ताते मुझको सोई उपाय कहो, जिसकर जगत्का भ्रम मिट जावे अरु अविनाशी पदकी प्राप्ति होवे. इस भ्रमरूप जगत्की आस्था मैं नहीं देखता; ताते इच्छा चाहे तैसी करो, परंतु सुख दुःख इसीको होते हैं सो होंगे; मिटनेके नहीं. भावे पहारकी कंदरामें बैठो, भावे कोटमें बैठो; परंतु जो होनेका है सो मिथ्या नहीं होवे है इस निमित्त यत्न करना मूर्खता है.

इति श्रीयोगवासिष्ठे वैराग्यप्रकरणे कालविलासवर्णनं नाम षड्विंशतितमः सर्गः ॥ २६ ॥

सप्तविंशतितमः सर्गः २७।

अथ सर्वपदार्थाभाववर्णनम्।

श्रीराम उवाच-हे मुनीश्वर! यह जो नानाप्रकारके सुंदर पदार्थ भासते हैं, सो सब नाशरूप हैं, इनकी आस्था मूर्ख करते हैं, यह तो मनकी कल्पना करके रचे हुए हैं. तिनमें किसकी आस्था करूं?

हे मुनीश्वर! अज्ञानी जीवका जीना व्यर्थ है; काहेते? जो जीनेते उनका अर्थ सिद्ध कछु नहीं होता. जब कुमारअवस्था होती है, तब मूढ बुद्धि होती है तिसमें विचार कछु नहीं होता. जब युवावस्था आती है, तब कामक्रोधादिक विकार उत्पन्न होते हैं, तिसकरके सदा ढापे रहते हैं. जैसे जालमें पक्षी बँध जाता है अरु आकाशमार्गको देख नहीं सक्ता है, तैसे कामक्रोधादिककरि ढँपाहुआ विचारमार्गको देख नहीं सक्ता. जब वृद्धावस्था आती है, तब शरीर जर्जरीभूत हो जाता है अरु महादीन ह्वै बहुरि शरीरकोभी त्याग देता है. जैसे कमलके ऊपर बर्फ पड़ता है, तब तिसका भौंरा त्याग करता है, तैसे जब शरीररूपी कमलको जराका स्पर्श होता है,तब उसको जीवरूपी भौंरा त्यागदेताहै.

हे मुनीश्वर! यह शरीर तबलग सुंदर है, जबलग वृद्धावस्था प्राप्त नहीं होती. जैसे चंद्रमाका प्रकाश राहुदैत्यने आवरण नहीं किया तबलग रहता है, जब राहुदैत्य आवरण करता है, तब प्रकाश नहीं रहता है, तैसे जराअवस्थाके आये युवाअवस्थाकी सुंदरता जाती रहती है. हे मुनीश्वर! जराके आयेते शरीर कृश होजाता है अरु तृष्णा बढ़ जाती है. जैसे वर्षाकालमें नदी बढ़ जाती है, तैसे जराअवस्थामें तृष्णा बढ़ जाती है अरु जो पदार्थकी तृष्णा करता है सो पदार्थभी दुःखरूप है; तृष्णाकरके आपही दुःख पाता है.

हे मुनीश्वर! तृष्णारूपी समुद्र है, तिसमें चित्तरूपी बेड़ा पड़ा है;

रागदोषरूपी मच्छ कबहूं ऊर्ध्व जाते हैं, कबहूं नीचे आते हैं, स्थिर कदाचित् नहीं रहते. हे मुनीश्वर ! कामरूपी वृक्ष है, सो वृक्षमें तृष्णारूपी लता लगती है, तिसमें विषरूपी फूल हैं, जब जीवरूपी भौंरा तिसके ऊपर बैठता है, तब विषरूपी वेलिसों मृतक हो जाता है. हे मुनीश्वर ! तृष्णारूपी एक बड़ी नदी है, तिसमें राग-दोषादिक बडे मच्छ रहते हैं, तिस नदीमें पडेहुए जीव दुःख पाते हैं अरु जो संसारकी इच्छा करता है, सो नष्ट होजाता है.

हे मुनीश्वर ! उन्मत्त हस्ती अरु तुरंगके समूह ऐसा जो रणरूपी समुद्र तिसको तर जाते हैं, तिसकोभी मैं शूर नहीं मानता परंतु जो इंद्रियरूपी समुद्र, तिसमें मनोवृत्तिरूपी तरंग उठते हैं, ऐसे समुद्रको जो तरजाता है, तिसको शूर मानता हूं. जिसके परिणाममें दुःख होवें, तैसी क्रिया अज्ञानी जीव आरंभ करते हैं और जिसके परिणाममें सुख है, तिसका आरंभ नहीं करते हैं, और कामके अर्थको धारण करते हैं, ऐसे आरंभ कियेते शरीरकी शांति और सुखकी प्राप्ति नहीं होती. ऐसेही कामनाकरके सदा जलते रहते हैं, अनात्म पदार्थकी तृष्णा करते हैं, सो शांतिको कैसे प्राप्त होवें ?

हे मुनीश्वर ! यह तृष्णारूपी नदी है, तिसमें वड़ा प्रवाह है, तिसके किनारे वैराग्य अरु संतोष दोनों वृक्ष खड़े हैं, सो तृष्णानदीके प्रवाहते वे दोनोंका नाश होता है. हे मुनीश्वर ! तृष्णा बड़ी चंचल है, किसीको स्थिर होने नहीं देती. अरु मोहरूपी एक वृक्ष है; तिसके चहूँफेरे स्त्रीरूपी वेलि है, सो विषकरके पूर्ण है, तिसपर चित्तरूपी भौंरा आय बैठता है, तब स्पर्शमात्रते नाश पाता है. जैसे मोरका पुच्छ हिलता रहता है, तैसे अज्ञानीका चित्त चंचल रहता है सो मनुष्य पशुसमान है. जैसे पशु दिनको जंगलमें जाय, आहार करते चलते फिरते हैं, अरु रात्रिको आय, घरमें खूंटासों बंधन पाते हैं-

तैसे मूर्ख मनुष्यहू दिनको घर छोड़के व्यवहारमें फिरते हैं अरु रात्रि-को आय, अपने घरमें स्थिर होते हैं, ताते परमार्थकी सिद्धि कछु नहीं होती, जीवना वृथा गमाते हैं.

बाल्यावस्थामें शून्य रहते हैं अरु युवा अवस्थामें कामकरि उन्मत्त होते हैं; सो कामकरके चित्तरूप उन्मत्त हस्ती स्त्रीरूपी कंदरामें जाय स्थिर होते हैं, सोभी क्षणभंगुर हैं. बहुरि वृद्धावस्था होती है, तिस करके शरीर कृश होजाता है; जैसे बर्फते कमल जर्जरीभावको प्राप्त होता है, तैसे जराकरके शरीर जर्जरीभावको प्राप्त होता है अरु सब अंग क्षीण होजाते हैं अरु एक तृष्णा बढ़जाती है.

हे मुनीश्वर ! यह पुरुष महापशु है, सो आकाशके फूल लेनेकी इच्छा करता है, जैसे बड़े पर्वतपर चढ़कर आकाशका फूल लेनेकी इच्छा करता है, सो फिर बडी कंदरा अरु वृक्षमें गिर पडता है तैसे यह जीव मनुष्यरूपी पर्वतपर आय रहा है अरु आकाशके फूलरूपी जगतके पदार्थनकी इच्छा करता है, सो नीचेको गिर पड़नेको है सो रागदोष-रूपी कंटकवृक्षमें जाय पडेगा. हे मुनीश्वर ! जेते कछु जगतके पदार्थ हैं सो सब आकाशके फूलकी नाईं नाशवान् हैं इनमें आस्था करनीसो मूर्खता है यह तो शब्दमात्र जैसा है तिसते अर्थसिद्धि कछु नहीं होती. अरु जो ज्ञानवान् पुरुष हैं, तिनको विषयभोगकी इच्छा नहीं रहती, काहेते जो आत्माके प्रकाशकर इसको मिथ्या जानते हैं हे मुनीश्वर ! ऐसे ज्ञानवान् पुरुष दुर्विज्ञेय हैं. हमको तो स्वप्नमें भी नहीं भासते हैं और यह विरक्तात्मा दुर्लभ हैं; जिनको भोगकी इच्छा नहीं है सर्वदा ब्रह्मकी स्थितिकरके भासते हैं, ऐसे पुरुषको संसारकी इच्छा कछु नहीं रहती; काहेते जो यह पदार्थ सब नाशरूप हैं, हे मुनीश्वर ! पर्वतको जिस ओर देखिये तहां पत्थरोंकरके पूर्ण दृष्टि आता है अरु पृथ्वी पूर्णमृत्तिका करि दृष्टि आती है अरु वृक्ष काष्ठकरि पूर्ण दृष्टि

आता है. समुद्र जलकर पूर्ण दृष्टि आताहै; तैसे शरीर, अस्थि, मांसकर पूर्ण भासता है. ये सब पदार्थ पांच तत्त्वकरि पूर्ण हैं और नाशरूप हैं, ऐसा रूप ज्ञानी जानके, किसीकी इच्छा नहीं करता.

हे मुनीश्वर ! यह जगत् सब नाशरूप है, देखते नाशको पाता है, तिसमें मैं किसका आश्रयकरके सुख पाऊं? जब युगकी सहस्र चौकडी होती है, तब ब्रह्माका एक दिन होता है, तिस दिनके क्षय हुएते सब जगत्का प्रलय होता है, बहुरी ब्रह्माहू कालकर नाश होजाता है अरु ब्रह्माहू जितने होगये हैं, तिनकी संख्या नहीं होती: असंख्य ब्रह्मा नाश होगये हैं, तो हमसरीखेकी कहा वार्ता करनी है ? हम कोऊ भोगकी वासना नहीं करते, क्योंकि सब चलरूप हैं; कछु स्थिर रहनेके नहीं, सब नाशरूप हैं, इनकी आस्था मूर्ख करते हैं, तिनके साथ हमको कछु प्रयोजन नहीं: जैसे मृग मरुस्थलको देख, जलपान करनेको दौडता है, अरु शांतिको नहीं पाता, तैसे मूर्ख जीव जगत्के पदार्थनको सत्य मानकर, तृष्णा करता है, परंतु नहीं पाता: काहेते कि सब असाररूप हैं: अरु—

जो स्त्री, पुत्र कलत्र भासतेहैं, सो जबलग शरीर नष्ट नहीं हुआ तबलग भासते हैं: जब शरीर नष्ट हो जायगा तब जाननेमें भी न आवेगा कि, कहाँ गया अरु कहांते आया था? जैसे तैल अरु बत्तीकर दीपक प्रकाशता है, तब बड़ा प्रकाशवान् दृष्टि आता है. पाछे जब बुझ जाता है, तब जाना नहीं जाता कि, कहां गया: तैसे बत्तीरूप बांधव हैं और तिसविषे स्नेहरूपी तेल है, तिसकर शरीर भासता है. जब शरीररूपी दीपकका प्रकाश बुझ जाता है तब जाना नहीं जाता कि, कहां गया: हे मुनीश्वर ! यह बंधुका मिलाप है सो जैसे तीर्थयात्राको संग चलेजाते होवें, सो सब एक क्षणमें वृक्षकी छायाको नीचे बैठते हैं; फिर न्यारे न्यारे हो जाते हैं: तैसे बांधवोंका मिलाप है:

जैसे उस यात्रामें स्नेह करना मूर्खता है, तैसे इनमेंभी स्नेह करना मूर्खताहै

हे मुनीश्वर ! अहंममताकी जेवरीके साथ बांधे हुए घटीयंत्रकी नाईं सब भ्रमते फिरते हैं, तिनको शांति कदाचित् नहीं होती. देखने मात्र तो चेतन दृष्टि आता है, परंतु पशु अरु बंदर इनते श्रेष्ठ हैं; जिनकी संमति देहइंद्रियनके साथ बाँधी हुई है, अरु आगमापायी है. इन्होंमें आस्था रखनी सो महामूर्खता है उनको आत्मपदकी प्राप्ति होनी कठिन है. जैसे पवनकर वृक्षके पान टूटके उड़ जाते हैं फिर उनको वृक्षके साथ लगना कठिन है, तैसे जो देहादिकके साथ बांधे हुए हैं तिनको आत्मपद पाना कठिन है.

हे मुनीश्वर ! जब आत्मपदते विमुख होता है तब जगत्के भ्रमको देखता है अरु जब आत्मपदकी ओर आता है, तब संसार इसको बड़ा विरस लगता है, और ऐसा पदार्थ जगत्में कोऊ नहीं कि, जो स्थिर रहेगा. जो कछु पदार्थ हैं, सो नाशको प्राप्त होते हैं, तातें मैं किसकी आस्था करूं ? और किसका आश्रय करूं ? सब नाशवंत भासते हैं, वह पदार्थ मुझको कहो, जिसका नाश न होवे.

इति श्रीयोगवासिष्ठे वैराग्यप्रकरणे सर्वपदार्थाभाववर्णनं नाम सप्तविंशतितमः सर्गः ॥ २७ ॥

अष्टाविंशतितमः सर्गः २८ ।

अथ जगद्विपर्ययवर्णनम् ।

श्रीराम उवाच—हे मुनीश्वर ! जेता कछु स्थावर जंगम जगत् दीखता है; सो सब नाशरूप है, कछुभी स्थिर रहनेका नहीं. जो खाईं थी सो जलकर पूर्ण हो गई है अरु जो बड़े जलकरके समुद्र पूर्ण दीखते थे, सो खाईरूप है गये अरु जो सुंदर बड़े बगीचे थे, सो आकाशकी नाईं शून्य होगये, अरु जो शून्य स्थान थे सो सुंदर वृक्ष हुए बन

कर दृष्टि आते हैं. जहां बस्ती थी तहा उजार होगई है अरु जहां उजार थी तहां वस्ती हो गई है. अरु जहां गढ़ले थे; तहां पर्वत हो गये हैं अरु जहां बड़े पर्वत थे, तहां समान पृथ्वी हो गई है. हे मुनीश्वर ! इसप्रकार पदार्थ देखते २ विपर्यय हो जाते हैं स्थिर नहीं रहते. बहुरि मैं किसका आश्रय करूं ? किसके पानेका यत्न करूं ? यह पदार्थ तो सब नाशरूप हैं. अरु जो बड़े बड़े ऐश्वर्यकर संपन्न थे अरु जो बड़े कर्त्तव्य करते थे, और बड़े वीर्यवान् बड़े तेजवान हुये थे, सोभी मरणको प्राप्त हो गये हैं, तब हमसरीखेकी कहा वार्ता है? सब नाश होते हैं, तब हमारेभी घड़ी पलमें चल जाना है, रहना किसीको नहीं.

हे मुनीश्वर ! यह पदार्थ चंचलरूप है, सो एकरस कदाचितहू नहीं रहता; एक क्षणमें कछु होजाते हैं, दूसरे क्षणमें कछु हो जाते हैं. एक क्षणमें दरिद्री हो जाते हैं, दूसरे क्षणमें संपादनवान् हो जाते हैं. एकक्षणमें जीवते दृष्टि आते हैं, दूसरे क्षणमें मर जाते हैं एक क्षणमें मरेभी जी उठाते हैं. इस संसारकी स्थिरता कवहूं नहीं होती. ज्ञानवान् इसकी आस्था नहीं करते. एक क्षणमें समुद्रके प्रवाहके ठिकाने मरुस्थल हो जाते हैं अरु मरुस्थलमें जलके प्रवाह हो जाते हैं ! हे मुनीश्वर ! इस जगत्का आभास स्थिर नहीं रहता. जैसे, बालकका चित्त स्थिर नहीं रहता, जैसे नट स्वांगको धरता है, सो कबहूं कैसा, कबहूं कैसा; सो एक स्वांगमें नहीं रहता, तैसे जगत पदार्थ अरु लक्ष्मी एकरस नहीं रहते. कबहूं पुरुष स्त्री हो जाता है; कबहूं स्त्री पुरुष हो जाती है; अरु मनुष्य पशु हो जाता है; पशु मनुष्य हो जाता है और स्थावरका जंगम अरु जंगमका स्थावर हो जाता है; मनुष्य देवता हो जाता है और देवता मनुष्य हो जाता है. इस प्रकार घटीयंत्रकी नाई जगत्की लक्ष्मी स्थिर नहीं रहती. कबहूं ऊर्ध्वको जाती है; कबहूं अधोभागको जाती है; स्थिर कबहू नहीं रहती; सदा भटकती रहती है.

हे मुनीश्वर! जेते कछु पदार्थ दृष्टिमें आते हैं, सो सब नष्ट हो जानेके हैं. कैसेहू स्थिर रहनेके नहीं. ये सब नदियां हैं सो सब वडवाग्निमें लय होय जायँगी; तैसे जेते कछु पदार्थ हैं सो सब अभावरूप वडवाग्निको प्राप्त होवेंगे. अरु बडे बलिष्ठहू मेरे देखते लीन होगये हैं. अरु जो बडे सुंदर स्थान सो शून्य हो गये हैं अरु जो सुंदर ताल, बगीचे, मनुष्य करि संपूर्ण, ऐसे स्थान सो शून्य होगये हैं, अरु जो मरुस्थलकी भूमिका सो सुंदरको प्राप्त भई है अरु घट पट हो गये हैं, वरके शाप हो जाते हैं शापके वर हो जाते हैं इसप्रकार हे विप्र ! जो जगत् दृष्टिमें आता है कबहूं संपदा, कबहूं आपदा दृष्टिमें आवती है अरु महाचपल दृष्टि आवत हैं. हे मुनीश्वर! ऐसे सब अस्थिररूप पदार्थ हैं, तिनका विचारबिना मैं कैसे आश्रय करूं अरु किसकी इच्छा करूं ? सब नाशरूप हैं. और-

जो यह सूर्य प्रकाशकर दृष्टिमें आता है, सोभी अंधकाररूप हो जायगा अरु अमृतकर पूर्ण जो चंद्रमा दृष्टिमें आता है, सोभी शून्य हो जायगा अरु सुमेरु आदिक जो पर्वत दृष्टि आते हैं, सो सब नाश होयँगे और सब लोक नाश होजायँगे. तातें हे मुनीश्वर ! और किसीकी क्या कहनी है ? ब्रह्मा, विष्णु, रुद्र, जो जगत्के ईश्वर हैं, सोभी शून्य होजाँयगे, तो हमसरीखेका कहा वार्ता कहनी है ? जेता कछु जगत् दृष्टि आता है सो स्त्री, पुत्र, बांधव, ऐश्वर्य, वीर्य, तेजकरके नाना प्रकारके जीव जो भासते हैं, सो सब नाशरूप हैं, बहुरि मैं किस पदार्थका आश्रय करूं और किसकी इच्छा करूं ?

हे मुनीश्वर ! जो पुरुष दीर्घदर्शी हैं, तिनको तो सब पदार्थ विरस होगये हैं; वे किसी पदार्थकी इच्छा नहीं करते. काहेते? तिनको सब पदार्थ नाशरूप भासते हैं और अपनी आयुको बिजुरीके चमत्कारवत् देखते हैं. जैसे बिजुरीका चमत्कार होता है, तैसी शरीरकी आयु है. जिसको अपनी आयुष्यकी अप्रतीति होती है, सो किसीकी इच्छा

करते नहीं. जैसे किसीको बलिदानके अर्थ पालते हैं, तब वह खाने, पीने, भोगनेकी इच्छा नहीं करता. तैसे जिसको अपना मरना सन्मुख भासता है, तिसकोभी किसी पदार्थकी इच्छा नहीं रहती. ये सब पदार्थ आपही नाशरूप हैं; तो हम किसका आश्रयकर सुखी होवें ? जैसे कोऊ पुरुष समुद्रमें मच्छके आश्रयकरके कहे कि-मैं इसपर बैठके समुद्रके पार जाऊंगा अरु सुखी होऊंगा. सो मूर्खताकरके डूबही मरेगा. तैसे जिस पुरुषने इस पदार्थका आश्रय लिया है अरु अपने सुखके निमित्त जानता है सो नाशको प्राप्त होवेगा.

हे मुनीश्वर ! जो पुरुष जगतको विचारता रहता है, तिसको यह जगत् रमणीय भासता है अरु रमणीय जानके, नानाप्रकारके कर्म करता है अरु जो नानाप्रकारके संकल्पोंकरके, जगत्में भटकते हैं, कबहूं ऊपर, कबहूं नीचे आते हैं अरु स्थिर नहीं रहते; तैसे यह जीव भटकते फिरतेहैं. स्थिर कबहूं नहीं रहते. अरु जिस पदार्थकी इच्छा करते हैं, सो कालके ग्रासरूप हो गये हैं, जैसे बनमें अग्नि लगती है तब सब इंधनादिकोंको जारती है, तैसे जेते कछु पदार्थ हैं, सो सब इंधनरूपी हैं, जगत् वनं है, तिसको कालरूपी अग्नि लगी है, तिसने सबको ग्रस लिया है. बहुरि जो इस पदार्थकी इच्छा करते हैं सो महामूर्ख है, अरु-

जिनको आत्मविचार प्राप्त है, तिनको यह जगत् भ्रमरूप भासता है, अरु जिसको आत्मविचारकी प्राप्ति नहीं है, तिसको यह जगत् रमणीय भासता है अरु जगतको देखते नाश हो जाते हैं स्वप्नपुरीकी नाई संसारकी मैं कैसे इच्छा करूं ? यह तो दुःखके निमित्त है. जैसे मिठाईमें विष मिलाया है, तिसका भोजन करनेवाले मृत्युको प्राप्त होते हैं, तैसे विषय भोगनेवाले पुरुष नाशको प्राप्त होते हैं.

इति श्रीयोगवासिष्ठे वैराग्यप्रकरणे जगद्विपर्ययवर्णनं नामाष्टाविंशतितमः सर्गः ॥ २८ ॥

एकोनत्रिंशत्तमः सर्गः २९ ।

अथ सर्वांतप्रतिपादनम् ।

श्रीराम उवाच—हे मुनीश्वर! इस संसारमें भोगरूपी अग्नि लगी है, तिसकरके सब जलते हैं. जैसे ताल्में हाथीके पाँवसों कचर कमलचूर्ण होजाता है, तैसे भोगसों कचर, मनुष्य दीन होजाते हैं. तैसे काम क्रोध दुराचारसों शुभ गुण नष्ट होजाते हैं, जैसे कंटारीके पत्तेमें अरु फलमें कांटे होजाते हैं, तैसे विषयकी वासनारूपी कंटक आय लगते हैं.

हे मुनीश्वर! यह जगत सब नाशरूपी है, किसी पदार्थका स्थिर रहना नहीं है. वासनारूपी जाल अरु इंद्रियेंरूपी गांठी हैं. तिसमें पुरुष कालसों आय फँसा है, सो बडे दुःखको प्राप्त होवेगा. हे मुनीश्वर! वासनारूपी सूतमें जीवरूपी मोती गुथे हुवे हैं अरु मनरूपी पटवा आय, गुथकर चैतन्यरूपी आत्माको गलेमें डालता है. जब वासनारूपी तागा टूट पडा तब यह भ्रमभी निवृत्त होगा. हे मुनीश्वर! इसको भोगकी इच्छा है सो बंधनका कारण है, भोगकी इच्छा करके भटकता है, शांतिको प्राप्त नहीं होता है, ताते मुझको किसी भोगकी इच्छा नहीं. न राज्यकी इच्छा है, न घरकी और न बनकी इच्छा है. न मरनेकरके दुःख मानता हूं, न जीनेकरके सुख मानताहूं. किसी पदार्थका सुख नहीं. सुख जो होना सो आत्मज्ञानकर होना है; अन्यथा किसी पदार्थकर होता नहीं. जैसे सूर्यके उदयहुएबिना अंधकारका नाश नहीं होता, तैसे आत्मज्ञानबिना संसारके दुःखका नाश नहीं होता, ताते सोई उपाय मुझको कहो, जिसकर मोहका नाश होकर मैं सुखी होऊं.

हे मुनीश्वर! भोगको भोगनहारा जो अहंकार है, सो मैंने त्याग दिया है, फिर भोगकी इच्छा कैसी होवे? हे मुनीश्वर! इस विषयरूप सर्पने जिसका स्पर्श किया है, तिसका नाश होजाता है, अरु सर्प

जिसको काटता है, सो एकवेर इसको मार डालता है अरु विषयरूपी सर्प जिनको काटते हैं, सो अनेकजन्मपर्यंत मारतेही चले जाते हैं, ताते परमदुःखका कारण विषयभोग है, याते विषयरूपी परमविष है, अरु वज्रकरके शरीरका चूर्ण होना सोभी मैं सहूंगा; परंतु विषयका भोगना मरेसों कैसेहू सहा नहीं जाता. यह मुझको दुःखदायक दृष्टिमें आता है; ताते सोई उपाय मुझको कहो, जिसकर मेरे हृदयते अज्ञानरूपी अंधकारका नाश होवे, अरु जो न कहोगे तो मैं अपनी छातीपर धीरजरूपी शिला धरके बैठ रहूंगा, परंतु भोगकी इच्छा न करूंगा.

हे मुनीश्वर! जेते कछु पदार्थ हैं, सो सव नाशरूप हैं. जैसे विजुरीका चमत्कार हो, छिप जाता है अरु अंजलीमें जल नहीं ठहरता, तैसे विषयभोग अरु आयुष्य नाश हो जाते हैं, ठहरते नहीं. जैसे कंठकीर मच्छी दुःख पाती है, तैसे भोगकी तृष्णा कर जीव दुःख पाते हैं ताते मुझको किसी पदार्थकी इच्छा नहीं. जैसे किसीने मरीचिकाके जलको सत्य जान, जलपानकी इच्छा करी और दौडा सो जल पाता नहीं, ताते मैं किसी पदार्थकी इच्छा नहीं करता.

इति श्रीयोगवासिष्ठे वैराग्यप्रकरणे सर्वांतप्रतिपादनं नामैकोनत्रिंशत्तमः सर्गः ॥ २९ ॥

त्रिंशत्तमः सर्गः ३० ।

अथ वैराग्यप्रयोजनवर्णनम् ।

श्रीराम उवाच—हे मुनीश्वर! संसाररूपी गढेमें अरु मोहरूपी कीचमें मूर्खका मन गिर जाता है, तिसकर बडा दुःख पाता है, शांतवान् कबहूं नहीं होता, जब जरा अवस्था आती है, तब सर्व शरीर जर्जरीभूत होकर काँपने लगता है, जैसे पुरातन वृक्षके पत्र पवनकर

हिलते हैं, तैसे जराअवस्थाकर अंग हिलते हैं, अरु तृष्णाकी वृद्धि हो जाती है. जैसे नीमका वृक्ष ज्यों ज्यों वृक्ष होता है, त्यों त्यों कटुता बढ़ती है, तैसे तृष्णा बढ़ती है.

हे मुनीश्वर ! जिस पुरुषने देह इंद्रियादिकनका आश्रय अपने सुख निमित्त लिया है, सो मूर्ख संसाररूपी अंधकूपमें गिरता है, निकस नहीं सक्ता अरु अज्ञानीका चित्त भोगका त्याग कदाचित् नहीं करता है. हे मुनीश्वर ! जगत्के पदार्थमें मेरी बुद्धि मलीन हो गई है. जैसे वर्षा कालमें नदी मलीन होती है, जैसे मार्गशीर्षमासमें मंजरी सूख जाती है, तैसे जगतकी शोभा देखते विरस हो जाती है. जैसे जगत्का पदार्थ मूर्खको रमणीय भासता है, जैसे पानीका गढ़ा तृणकरि आच्छादित होता है अरु मृगके बालक तिस तृणको रमणीय जानकर खाने जाते हैं,फिर गिर जाते हैं तैसे यह मूर्ख भोगको रमणीय जान भोगते, गिर परे हैं फिर महादुःख पाते हैं. जैसे मृग मृगतृष्णाकर उड़ता है, सो सुखी नहीं होता,तैसे यह मृगतृष्णारूप संसारके पदार्थनके ऊपर मनरूपी मृग उडनहार कैसे सुखी होवे ?

हे मुनीश्वर ! जगत्के पदार्थनसों मेरी बुद्धि चंचल होगई है; ताते सोई उपाय कहो, जिसकर पर्वतकी नाईं मेरी बुद्धि निश्चल होवे. पद कैसाहै?किजिससे परमानंदके यत्नमें रहतेहैं अरु निर्भय,निराकार पद, जिसके पायेते संसार कुछभी नहीं रहता है, बहुरि पाना कछु नहीं रहता है; तैसे संपूर्ण जगतकी नाना प्रकारकी रचना सब दब जाती है; तिस पदके पानेका उपाय मुझको कहो. हे मुनीश्वर ! ऐसे पदते मेरी बुद्धि शून्य है, ताते मैं शांतिवान् नहीं होता.यह संसार अरु संसारके कर्म मोहरूप हैं इसमें पडेहुए पुरुष शांतिको प्राप्त नहीं होते, अरु—

जनकादिक संसारमें रहेहुये कमलकी नाईं निर्लेप रहते हैं, तैसे शांतिवान् संसारमें निर्लेप रहते हैं, सो जैसे कोऊ कीचसों पूर्ण होय अरु कहे कि--मुझको कीचका स्पर्श नहीं हुआ, तैसे राजाके विक्षेपरूपी

कीचमें पड़ेहुए शांतिवान् कैसे निर्लेप रहे हैं, तिसकी समुझ कहा है? सो कृपा कर कहो. अरु तुम जैसे जो संतजन हैं सो विषयको भोगते दृष्टि आते हैं अरु जगतकी चेष्टा सब करते हैं, सो निर्लेप कैसे रहते हैं, सो युक्ति कहो. जैसे तुम जलकमलवत् रहते हो सो कहो. यह बुद्धि तो मोहकरि मोही जाती है. जैसे तालमें हस्ती प्रवेश करता है और पानी मलीन हो जाता है, तैसे मोहकरि बुद्धि मलीन हो जाती है. ताते सोई उपाय कहो. जिसकर बुद्धि निर्मल होवे. यह संतोषमें बुद्धि स्थिर कबहूं नहीं रहती. जैसे, मूलसों कुल्हाडेकर काटा वृक्ष स्थिर नहीं होता, तैसे वासनासो कटी बुद्धि स्थिर नहीं रहती. हे मुनीश्वर ! संसाररूपी विषूचिका मुझको लगी है, ताते सोई उपाय कहो, जिसकर दृश्यका नाश होवे. इसने मुझको बडा दुःख दिया है. अरु आत्मज्ञान कब प्रकाश होय? जिसके उदय हुए मोहरूपी अंधकारका नाश होवे. हे मुनीश्वर ! जैसे बादरसों चंद्रमा आच्छादित हो जाता है, तैसे बुद्धिकी मलीनताकर मैं आच्छादित हुआ हूं, ताते सोई उपाय कहो, जिसकर आवरण दूर होवे अरु—

जो आत्मानंद सो नित्य है, जिसके पायेते बहुरि पाना कछु नहीं रहता, इसते संपूर्ण दुःख नष्ट हो जाते हैं अरु अंतर शीतल हो जाता है ऐसा जो पद है, तिसकी प्राप्तिका उपाय मुझसे कहो, हे मुनीश्वर ! आत्मज्ञानरूपी चंद्रमाकी मुझको इच्छा है, जिसके प्रकाशकर बुद्धिरूपी कमलिनी खिल आती है अरु जिसकी अमृतरूपी किरनकर वृत्ति तृप्त होती है, सो कहो. हे मुनीश्वर ! अब मुझको गृहमें रहनेकी इच्छा नहीं, अरु वनविषे जानेकी भी इच्छा नहीं: मुझको तो इसी पदकी इच्छा है, जिसके पायेते भीतर शांति होय जाय.

इति श्रीयोगवासिष्ठे वैराग्यप्रकरणे वैराग्यप्रयोजनवर्णनंनाम त्रिंशत्तमः सर्गः ॥ ३० ॥

एकत्रिंशत्तमः सर्गः ३१।

अथ रामप्रश्नवर्णनम्।

श्रीराम उवाच—हे मुनीश्वर! जो जीवनेकी आस्था करते हैं, सो मूर्ख हैं. जैसे पत्रपर जलकी बूँद ठहरती नहीं, तैसे आयुष्यहू क्षणभंगुर है, जैसे वर्षाकालमें दर्दुर बोलते हैं, तब उनका कंठ चञ्चल सदा फरकता रहता है तैसे आयुर्दाय छिन छिनमें चंचल हो जाती है. जैसे शिवजीके कपालमें चंद्रमाकी रेख कछुसी है, तैसा यह शरीर है. हे मुनीश्वर जिसको इसकी आस्था है, सो महामूर्ख है, यह तो कालका ग्रास है, जैसे बिल्ली चूहेको पकड लेती है, तैसे सबको काल पकड लेता है. जैसे बिल्ली चूहेको सँभाल करने नहीं देती, तैसे सबको काल अचानक ग्रहण कर लेता है अरु किसीको भासता नहीं.

हे मुनीश्वर! जब अज्ञानरूपी मेघ आय गर्जता है, तब लोभरूपी मोर प्रसन्न होयके नृत्य करता है, जब अज्ञानरूपी मेघ वर्षा करता है, तब दुःखरूपी मंजरी बढने लगती है अरु लोभरूपी बिजुरी छिन छिनमें नष्ट होय हो जाती है अरु तृष्णारूपी जालमें फँसेहुए जीवनरूपी पक्षी परे दुःख पाते हैं, शांतिकी प्राप्ति नहीं होती.

हे मुनीश्वर! यह जगत्‌रूपी बडा रोग लगा है तिसके निवारण करनेका कौनसा पदार्थ है? जो पानेयोग्य है. जिसकर भ्रमरूपी रोग निवृत्त होवे सोई उपाय कहो. यह जगत् मूर्खको रमणीय दीखता है. ऐसा पदार्थ पृथ्वीपर अरु आकाशमें अरु देवलोकमें अरु पातालमें कोऊ नहीं, जो ज्ञानवान्‌को रमणीय दीखे. ज्ञानवान्‌को सब भ्रमरूप भासता है अरु अज्ञानी जगतमें आस्था करता है. हे मुनीश्वर! चंद्रमामें जो कलंक है तिसकर शोभा सुंदर नहीं लगती. जब कलंक दूर हो जाय तब सुंदर लगे; तैसे मेरे चित्तरूपी चंद्रमामें कामरूपी कलंक लगा है तिसकर उज्ज्वल नहीं भासता. ताते सोई उपाय कहो, जिसकर कलंक दूर होजाय.

हे मुनीश्वर ! यह चित्त बहुत चंचल है. स्थिर कदाचित् नहीं होता. जैसे अग्निमें डारदिया पारा उडजाता है, तैसे चित्तभी स्थिर नहीं होता. विषयकी तरफ सदा धावता है; ताते सोई उपाय कहो जिसकर चित्त स्थिर होवे. और संसाररूपी वनमें भोगरूपी सर्प रहते हैं. सो जीवको दंश करते हैं. तिससों बचनेका उपाय कहो अरु जेती कछु क्रिया हैं, सो रागद्वेषके साथ मिली हुई हैं ताते सोई उपाय कहो जिसकर राग-द्वेषका प्रवेश न होय. तैसे यह संसारमें परे हैं तिनको तृष्णारूपी जलका स्पर्श न होय ऐसा उपाय कहो. जिससे इनको राग-द्वेषका स्पर्श न होय. अरु मनमें जो मननरूपी सत्ता है, सो मुक्तिसों दूर होती है; अन्यथा दूर नहीं होती. सो निवृत्तिके अर्थ आप मेरेको मुक्ति कहो और आगे जिसको जिस प्रकार निवृत्ति हुई है.सो कहो. अरु जिसप्रकार तुह्मारे अंतरमें शीतलता हुई है सो कहो. हे मुनीश्वर ! जैसे तुम जानते हो सो कहो अरु जो तुह्मारे विद्यमान वह मुक्ति नहीं पाई, तब मैं तो नहीं जानता. तो मैं सब त्यागकर निरहंकार हो रहूंगा. जबलग वह मुक्ति मुझको न प्राप्त होगी तबलग मैं भोजन नहीं करूंगा. अरु जलपानभी नहीं करूंगा अरु स्नानादिक क्रियाभी नहीं करूंगा. संपदाका कार्यभी नहीं करूंगा और आपदाका कार्यभी नहीं करूंगा. निरअहंकार होऊंगा, और ये न मेरी देह और न मैं देही. सब त्याग करके बैठि रहूंगा. जैसे कागजके ऊपर मूर्ति चित्रित होती है, तैसे हो रहूंगा. श्वास आते जाते आपही क्षीण हो जायँगे. जैसे तेलबिना दीपक बूझता है तैसे अर्थबिना देहनिर्वाण होय जायगा. तब महाशांतिको प्राप्त होऊंगा.

वाल्मीकिरुवाच—हे भरद्वाज ! ऐसे कहि करि रामजी चुप होय रहे. जैसे बडे मेघको देखके मोर शब्द करके चुप होजाते हैं.

इति श्रीयोगवासिष्ठे वैराग्यप्रकरणे रामप्रश्नो नाम
एकत्रिंशत्तमः सर्गः ॥ ३१ ॥

द्वात्रिंशत्तमः सर्गः ३२ ।

अथ नभश्चरसाधुवादवर्णनम् ।

वाल्मीकिरुवाच–हे पुत्र! जब इसप्रकार रघुवंशरूपी आकाशके रामचंद्ररूपी चंद्रमा बोले, तब सबही मौन होगये अरु सबके रोम खडे हो आये. मानो रोमहू खडे होकर रामजीके वचन सुनते हैं अरु जेते कछु सभामें बैठे थे सो सब निर्वासनारूपी अमृतके समुद्रमें मग्न होगये वसिष्ठ, वामदेव, विश्वामित्र–आदि जो मुनीश्वर थे और जेते जयंत, धृष्टि आदिक जो मंत्री थे और राजा दशरथ अरु जेते मंडलेश्वर थे और जेते चाकर नौकर थे और माता कौशल्या–आदिक सब मौन होगये. अर्थात् यह तो अचल होगये अरु पींजरेमें पक्षी जो थे, सोभी मौन होगये अरु बगीचेमें पशुआदि थे सोभी मौन होगये अरु चारा तृण खाते रहि गये. अरु जो पक्षी आलयमें बैठे थे, सोभी सुनकर मौन होगये अरु आकाशके पक्षी जो निकट थे, सोभी स्थिर होगये अरु आकाशमें जो देव, सिद्ध, गंधर्व, विद्याधर और किन्नर थे सोभी आय सुनने लगे अरु फूलोंकी वर्षा करनेलगे, सब धन्य धन्य शब्द करने लगे. और फूलोंकी वर्षा भई सो मानों बर्फकी वर्षा होती अरु क्षीरसमुद्रके तरंग उछलते आवते होंय. अरु मोतीकी मालाकी वृष्टि आवत होय और जैसे माखनके पिंड उडते होंय, इसप्रकार आधी घडीपर्यंत फूलनकी वर्षा भई अरु बडी सुगंध आय पसरी. अरु फूलोंपर भौंरे फिरने लगे और बडा विलास तिस कालमें होरहा अरु 'नमो नमः' शब्द करने लगे.

सिद्धा ऊचुः–हे कमलनयन रघुवंशी! आकाशमें चंद्रमारूप आप रामजी! तुम धन्य हो-तुमने बडे श्रेष्ठ स्थान देखे हैं अरु बहुत प्रकारके वचन सुने हैं; याते जैसे आप बचन कहे हैं, ऐसे वचन कबहूं नहीं सुने. ये वचन सुनके हमारा जो देवतानका अभिमान था, सो सब निवृत्त भया. आपका अमृतरूपी वचन सुनकर, हमारी बुद्धि पूर्ण होगई है;

हे रामजी ! जैसे वचन तुमने कहे हैं, ऐसे वचन बृहस्पतिहू कहनेको समर्थ नहीं, तुह्मारे वचन परमानंदके करनेहारे हैं, ताते तुम धन्य हो.

इति श्रीयोगवासिष्ठे वैराग्यप्रकरणे नभश्चरसाधुवाद-
वर्णनं नाम द्वात्रिंशत्तमः सर्गः ॥ ३२ ॥

त्रयस्त्रिंशत्तमः सर्गः ।

अथ नभश्चरमहीचरसंमेलनवर्णनम् ।

वाल्मीकिरुवाच—हे भरद्वाज ! ऐसे वचन देवता कहके, विचार करत भये, कि—रघुका कुल पूजने योग्य है; तिसमें रामजीने बडे उदार वचन मुनीश्वरके विद्यमान कहे हैं. अब जो मुनीश्वरका उत्तर होयगा, सोभी श्रवण करना चाहिये. जैसे फूलोंके ऊपर भौंरा स्थिर होते हैं, तैसे व्यास, नारद, पुलह, पुलस्त्य आदि सब साधु सभामें आय स्थित भये. तब वसिष्ठ, विश्वामित्र—आदि मुनीश्वर उठके खडे हुये अरु तिनकी पूजा करने लगे. प्रथम पूजा राजा दशरथ करी; फिर नाना प्रकारसों सबने उनकी पूजा करी और यथायोग्य आसनके ऊपर बैठे. सो कैसे हैं ? जो नारद बहुत सुंदर मूर्तिबारे हाथमें वीणा लेयके बैठे अरु श्याममूर्ति व्यासजी आय बैठे और नाना-प्रकारके रंगसों रंजित वस्त्र पहिरे हुए, मानो तारामें महाश्याम घटा आई है, ऐसे अरु दुर्वासा, वामदेव, पुलस्त्य अरु बृहस्पतिके पिता अंगिरा, अरु भृगु, और मैं हूं तहां था. और ब्रह्मर्षि, राजर्षि, देवर्षि, देवता, मुनीश्वर सब आयके सभामें स्थित हुए. किसीके बडी जटा हैं, कोईने मुकुट पहरे हैं, किसीने रुद्राक्षकी माला पहरी है, किसीने मोतीकी माला पहरी है, किसीके कंठमें रत्नकी माला पहरी है और हाथमें कमंडलु, मृगछाला, किसीके महासुंदर वस्त्र ऐसे बडे २ तपस्वी आयके बैठे. तामें कोऊ राजसी स्वभावके, कोऊ सात्विक स्वभावके ऐसे बडे बडे आये अरु सब विद्वान् वेद पढनेहारे प्राप्त हुए. और

किसीका सूर्यवत्, किसीका चंद्रमावत्, किसीका तारावत् ऐसे बडे प्रकाशवारे, पुरुषार्थपर यत्न करनेहारे, सो यथायोग्य आसनपै स्थित भये, और मोहनी मूर्त्ति रामजी अरु दीन स्वभाववारे हाथ जोरके, सभामें बैठे, तिनकी सब पूजा करत भये. वे सब कहते हैं कि-हे रामजी ! तुम धन्य हो. और-

नारद सबसे विद्यमान कहत भये कि-हे रामजी ! तुमने बडे विवेक अरु वैराग्यके वचन कहे सो सबको प्यारे लगे; सबके कल्याण करनेहारे हैं और परमबोधके कारण हैं. हे रामजी ! तुम बडे बुद्धिमान् उदारात्मा दृष्टि आवते हो. अरु महावाक्यका अर्थ तुमते प्रगट होता है ऐसा उज्ज्वल पात्र साधुमें और अनंतमें तपस्वीमें कोऊक होते हैं अरु जेते कछु मनुष्य हैं सो सब पशु जैसे दृष्टिमें आते हैं. क्योंकि, जिसको संसारसमुद्रके पार होनेकी इच्छा है और जो पुरुषार्थपर यत्न करते हैं सोई मनुष्य हैं. हे साधो ! वृक्ष तो बहुत होते हैं, परंतु चंदनका वृक्ष विरला होता है, तैसे शरीरधारी बहुत हैं, परंतु ऐसा कोऊ होता है और सब अस्थिमांसके पुतरे साथ मिलेहुए भटकते फिरते हैं. सो जैसी जंत्रीकी पुतरी होती है, तैसे अज्ञानी जीव हैं. और हस्ती तो बहुत हैं, परंतु जिसके मस्तकमेंते मोती निकसता है, सो विरला है. तैसे मनुष्य तो बहुत हैं, परंतु पुरुषार्थपर यत्न करनेहारे कोऊ होते हैं. ऐसे पात्रको थोरे अर्थ कहाभी बहुत होजाता है, जैसे तेलकी बुँद थोरी जलमें डारी, विस्तारको पाती है तैसे थोरे वचनसो आपके हियेमें बहुत होतेहैं. आपकी बुद्धि बहुत विशेष है अरु दीपक जैसी प्रकाशवारी है अरु बोधका परमपात्र है और कहनेमात्रते आपको शीघ्र ज्ञान होवेगा अरु हमारे विद्यमान आपको ज्ञान होवेगा, ऐसा निश्चय करि जानना.

इति श्रीयोगवासिष्ठे वैराग्यप्रकरणे नभश्चरमहीचरसंमेलनवर्णनं नाम त्रयस्त्रिंशत्तमः सर्गः ॥ ३३ ॥

समाप्तमिदं योगवासिष्ठे वैराग्यप्रकरणम् ॥ १ ॥

ॐ

श्रीपरमात्मने नमः ।

अथ श्रीयोगवासिष्ठे

मुमुक्षुप्रकरणप्रारंभः ।

प्रथमः सर्गः १ ।

अथ शुकनिर्वाणवर्णनम् ।

वाल्मीकिरुवाच—हे साधो ! ये जो वचन हैं सो परमानंदरूप हैं अरु कल्याणके कर्ता हैं. इनमें श्रवणकी प्रीति तब उपजती है जब अनेक जन्मके वडे पुण्य आय इकठे होते हैं. जैसे कल्पवृक्षके फलको वडे पुन्यसों पाते हैं, तैसे जिसके बडे पुण्य कर्म इकट्ठे आय होते हैं, तिसकी प्रीति इन वचनोंके श्रवणमें होती है; अन्यथा प्राप्ति नहीं होती. ये वचन परमबोधके कारण हैं. हे भरद्वाज ! इसप्रकार जब नारदजीने कहा तब विश्वामित्रजी बोले—

विश्वामित्र उवाच—हे ज्ञानवानोंमें श्रेष्ठ रामजी ! जेता कछु जाननेयोग्य था सो तुमने जाना है, इसते जानना और नहीं रहा अरु तिसमें विश्राम पावनेनिमित्त कछुक मार्जन करना है. जैसे अशुद्ध आदर्शकी मलिनता दूर करी होय, तब मुख स्पष्ट भासता है, तैसे कछु उपदेशकी तुमको अपेक्षा है. हे रामजी ! तुम्हारे जैसे भगवान् व्यासजीके पुत्र शुकदेवजी भये हैं, सोभी वडे बुद्धिमान् थे तिन्होंने जो जाननेयोग्य था सो जाना है अरु विश्रामके निमित्त तिनकोभी अपेक्षा थी सो विश्रामको पाय शांतिवान् भये हैं.

श्रीराम उवाच—हे भगवन् ! शुकदेवजी कैसे बुद्धिमान् अरु

ज्ञानवान् थे ? उनको कैसी विश्रामकी अपेक्षा थी ? फिर वे कैसे विश्रामको पावते भये, सो कृपा करिके कहो.

श्रीविश्वामित्र उवाच—हे रामजी ! अंजनके पर्वतकी नाईं जिनका आकार है, ऐसे जो भगवान् व्यासजी वे स्वर्णके सिंहासनपर राजा दशरथके पास बैठे हैं अरु सूर्यकी नाईं प्रकाशवान् जिनकी कांति है तिनके पुत्र शुकदेवजी हैं सो सब शास्त्रोंके वेत्ता थे, सत्यको सत्य जानते थे, असत्यको असत्य जानते थे, सो शांतिरूप और परमानंदरूप आत्मामें विश्राम न पाते तब उनको विकल्प उठा कि, जिसको मैंने जाना है सो न होवेगा. काहेते कि, मुझको आनंद नहीं भासता है, सो संशयको धरके, एक कालमें व्यासजी सुमेरु पर्वतकी कंदरामें बैठे थे, तिनके निकट आयकर, कहत भये कि, हे भगवन् ! यह संसार सब भ्रमात्मक कहांसे भया है ? वाकी निवृत्ति कैसे होयगी ? और आगे कोईको इसकी निवृत्ति भई है, सो कहो.

हे रामजी ! इसप्रकार जब शुकदेवजीने कहा, तब विद्वतशिरोमणि जो वेदव्यासजी हैं, सो तत्काल उपदेश करत भये. तब शुकदेवजीने कहा कि, हे भगवन् ! जो कछु तुम कहो हो, सो तो मैं आगेसों जानता हूं, इसकर मुझको शांति प्राप्त नहीं होती.

हे रामजी ! जब इसप्रकार शुकदेवजीने कहा तब सर्वज्ञ जो वेदव्यासजी हैं, सो विचार करतभये, कि, मेरे वचनकर इसको शांति प्राप्त न होवेगी; क्योंकि अब पितापुत्रका संबंध भासता है. ऐसे विचार करके व्यासजी कहत भये, कि हे पुत्र ! मैं सर्वतत्त्वज्ञ नहीं. तू राजा जनकके निकट जा, वे सर्वतत्त्वज्ञ हैं अरु शान्तात्मा हैं, उनसों तेरा मोह निवृत्त होवेगा.

हे रामजी ! जब इसप्रकार व्यासजीने कहा, तब शुकदेवजी उहांसो चले तब जो मिथिला नगरी राजा जनककी थी, तिसमें आ-

-यकर राजा जनकके द्वारपै स्थित भये. तब द्वारपालने जायकर राजा जनकको कहा, कि—व्यासजीके पुत्र शुकदेवजी आय खडे हैं. तब राजाने जाना, कि--इनको जिज्ञासा है. तब कहा खडे रहो. तदा खडेही रहे. इसीप्रकार द्वारपालने जाय कहा. तब सात दिन खडे रहते बीत गये, तब राजाने फेर पूंछा शुकदेवजी खडे हैं, कि चलते रहे हैं? तब द्वारपालने कहा कि, खडे हैं. तब राजाने कहा आँगनमें ले आओ; तब आँगनमें ले आये. वहांभी सात दिन खडे रहे. बहुरि राजाने पूंछा कि--शुकदेवजी हैं? तब द्वारपालने कहा कि—खडे हैं. तब राजाने कहा अंतःपुरमें ले आओ; उनको नानाप्रकारके भोगाओ. तब अंतः--पुरमें ले गये, वहां स्त्रियनके पास सात दिन खडे रहे. तब राजाने द्वारपालसे पूँछा कि, तिनकी दशा कैसी और आगे कहां दशा थी ? तब द्वारपालने कहा जो आगे निरादर करके न शोकवान् हुए थे अरु अब भोगकर न प्रसन्न हुए हैं; इष्ट--अनिष्टमें समान हैं. जैसे मंद पवनकरके मेरु चलायमान नहीं होवे, तैसे यह बडे भोगका निरादरकर चलायमान नहीं भये. जैसे पपीहाको मेघके जलबिना, नदी तालाबआदिके जलकी इच्छा नहीं होती, तैसे उनको किसी पदार्थकी इच्छा नहीं. तब राजाने कहा इहां ले आओ. तब सो ले आया.

जब शुकदेवजी आये, तब राजा जनकने उठके खडे होय प्रणाम किया, फिर दोऊ बैठ गये. तब राजाने कहा कि--हे मुनीश्वर! तुम किसी निमित्त आये हो ? तुमको कहा वांछा है ? सो कहो. किसकी प्राप्ति मैं कर देऊं ?

श्रीशुक उवाच—हे गुरु ! यह संसारका आडंबर कैसे उत्पन्न हुआ है और फिर कैसे शांत होवेगा सो तुम कहो.

विश्वामित्र उवाच—हे रामजी ! जब इसप्रकार शुकदेवजीने कहा तब राजा जनकने यथाशास्त्र उपदेश जो कछु व्यासजीने

कहा था, सोई कहा. बहुरि शुकदेवजीने कहा कि–हे भगवन् ! जो कछु रूप कहोहो, सोई हमारे पिताजीने कहाथा अरु सोई शास्त्र कहते हैं और विचारसों मैंहू ऐसे जानता हूं, कि, यह संसार अपने चित्तमें उत्पन्न होता है अरु चित्तका निर्वेद हुए भ्रमकी निवृत्ति होती है. फिर विश्राम मुझको नहीं प्राप्त होता है.

जनक उवाच—हे मुनीश्वर ! जो मैंने कहा है अरु जो तुम जानते हो, इसते और उपाय कछु है ऐसा जानना नहीं अरु कहनाभी नहीं. यह संसार चित्तके संवेदनकर हुआ है. जब चित्त फुरनेते रहित होता है, तब भ्रम निवृत्त हो जाता अरु आत्मतत्त्व नित्य शुद्ध है, अरु परमानंद स्वरूप है. केवल चैतन्य है. तिसका अभ्यास करो, तब तुम विश्रामको पावोगे अरु तुम मुक्तस्वरूप हैं. काहेते कि, तुम्हारा यत्न आत्माकी ओर है, दृश्यकी ओर नहीं; ताते तुम बडे उदारात्मा हो, हे मुनीश्वर ! तुम मोको व्यासते अधिक जान, मेरे पास आये हो; और तुम मेरेसेभी अधिक हो; काहेते कि, हमारी चेष्टा बाहिरते दृष्टि आवती है और तुम्हारी चेष्टा बाहरते कछुभी नहीं अरु अंतरते हमारी कछुभी नहीं.

विश्वामित्र उवाच—हे रामजी ! जब इसप्रकार राजा जनकने कहा, तब शुकदेवजी निस्संग, निष्प्रयत्न, निर्भय होकर चले. सुमेरु पर्वतकी कंदरामें जाय निर्विकल्प समाधि दश सहस्र वर्ष ताईं करी. बहुरि निर्वाण हो गये. जैसे तेलबिना दीपक निर्वाण हो जाता है, तैसे निर्वाण हो गये. जैसे समुद्रमें बूँद लीन होजाते हैं, जैसे सूर्यका प्रकाश संध्याकालमें सूर्यके पास लीन हो जाता है, तैसे कल्पनारूप कलंकको त्यागकर ब्रह्मपदको प्राप्त भये.

इति श्रीयोगवासिष्ठे मुमुक्षुप्रकरणे शुकनिर्वाणवर्णनं नाम प्रथमः सर्गः ॥ १ ॥

द्वितीयः सर्गः २ ।

अथ विश्वामित्रोक्तिवर्णनम् ।

विश्वामित्र उवाच—हे राजा दशरथ ! जैसे शुकदेवजी शुद्ध बुद्धिवारे थे, तैसे रामजीभी हैं. जैसे शांतिके निमित्त उनको कछुक मार्जन कर्त्तव्य था, तैसे रामजीको विश्रामके निमित्त कछुक मार्जन चाहिये, काहेते कि--आवरण करनहारे भोग हैं; सो इच्छा तिनते निवृत्त भईहै अरु जो कछु जाननेयोग्य था सो जाना है; अब हमको कछुक युक्ति करनी है, तिसकरके उनको विश्राम होवेगा. जैसे शुकदेवजीको थोडेसे मार्जनकरके शांतिकी प्राप्ति भई थी, तैसे इनकोभी होवेगी.

हे राजन् ! अब रामजीको भोगकी इच्छा स्पर्श नहीं करती. जैसे ज्ञानवान्को आध्यात्मिक--आदि दुःख स्पर्श नहीं करते तैसे रामजीको भोगकी इच्छा स्पर्श नहीं करती. भोगकी इच्छा सबको दीन करती है, इसकाही नाम बंधन है;अब भोगकी वासनाका क्षय करना इसकाही नाम मोक्ष है, ज्यों ज्यों भोगकी इच्छा करता है, त्यों त्यों लघु हो जाता है अरु ज्यों ज्यों भोगकी वासना क्षय होती है, त्यों त्यों गरिष्ठ होता है. जबलग इसको आत्मानंद प्रकाश नहीं होता, तब विषयकी वासना दूर नहीं होती; जब आत्मानंद प्राप्त होता है, तब विषयवासना कोऊ नहीं रहती. जैसे मरुस्थलमें लताकी उत्पत्ति नहीं होती, तैसे ज्ञानवान्को विषयवासनाकी उत्पत्ति नहीं होती.

हे साधो ! ज्ञानवान् जो विषयभोगका त्याग करता है, सो किसी फलकी इच्छा करके नहीं करता; स्वभावसेही ज्ञानवान्की विषयवासना उठजाती है. जैसे सूर्यके उदय हुए अंधकारका अभाव हो जाता है, तैसे रामजीको अब किसी भोगपदार्थकी इच्छा रही नहीं, अब विदितवेद हुए हैं. अब आप विश्रामकी इच्छा चाहते हैं, ताते जो कहें, सोई करो, जिसकर विश्रामवान् होय.

हे राजन् ! यह जो भगवान् वसिष्ठजी हैं, इनकी युक्तिकरके शांत होवेंगे अरु आगेभी सो रघुकुलके गुरु हैं,इनके उपदेशद्वारा आगेभी रघुवंशी ज्ञानवान् भये हैं. जो सर्वज्ञ हैं अरु साक्षिरूप हैं और त्रिकालज्ञ हैं और ज्ञानके सूर्य हैं, इनके उपदेशकर रामजी आत्मपदको प्राप्त होवेंगे.

हे वसिष्ठजी ! वह ब्रह्मका उपदेश तुम्हारे स्मरणमें है क्योंकि, जब तुम्हारा हमारा विरोध हुआ था,तब उन्होंने उपदेश किया और जो सब ऋषीश्वर अरु वृक्षकरि पूर्ण हैं, ऐसा जो मंदराचल उस पर्वतमें आयकर ब्रह्माजीने संसारवासनाके नाशनिमित्त उपदेश किया था अरु तुम्हारा हमारा विरोध था; तिसके निमित्त अरु और जीवोंके कल्याणनिमित्त जो उपदेश किया था,अब वही उपदेश तुम रामजीको करो.येभी निर्मल ज्ञानपात्र हैं अरु ज्ञानभी वही है अरु विज्ञानभी वही है अरु निर्मल युक्ति वही है, कि, शुद्धपात्रमें अर्पण होवे; अरु जिसमें पात्रबिना उपदेश नहीं सुहाता है अरु जिसमें शिष्यभाव न होवे अरु विरक्तता न होवे; ऐसा जो अपात्र मूर्ख होवे, तिसको उपदेश करना व्यर्थ है. अरु जो विरक्त होवे अरु शिष्यभाव न होवे, तउभी उपदेश नहीं करना अरु दोनोंकरि संपन्न होवे तब करना. पात्रबिना उपदेश व्यर्थ होता है अर्थात् अपवित्र हो जाता है. जैसे गौका दूध महापवित्र है परन्तु श्वानकी त्वचामें डारिये, तब वह अपवित्र हो जाता है; तैसे अपात्रको उपदेश करना व्यर्थ है. हे मुनीश्वर ! जो शिष्य वैराग्यकरि संपन्न होता है अरु उदार आत्मा है, सो तुम्हारे उपदेशके योग्य है, तुम कैसे हो कि—वीतराग हो, भय अरु क्रोधते रहित हो.परमशांतिरूप हो सो तुम्हारे उपदेशको पात्र रामजी हैं.

वाल्मीकिरुवाच—इसप्रकार जब विश्वामित्रने कहा तब नारद अरु व्यासादिकने साधु साधु करके कहा अर्थात् भला, भला, कहा. तब राजा दशरथके पास बडे २ प्रकारके साधु बैठे हुए थे.

वसिष्ठ उवाच—ब्रह्माजीके पुत्र वसिष्ठजीने तिनसे कहा- हे मुनीश्वर! जो कछु तुमने आज्ञा करी है, सो हमने मानी है. ऐसा समर्थ कोऊ नहीं जो संतकी आज्ञा निवारण करे. हे साधो! जेते कछु राजा दशरथके पुत्र हैं, तिन सबके हृदयमें जो अज्ञानरूपी तम है सो मैं ज्ञानरूपी सूर्यकर निवारण करूंगा. जैसे सूर्यके प्रकाशकर अंधकार दूर होता है. हे मुनीश्वर ! जो कछु ब्रह्माजीने उपदेश किया था सो मुझको अखंड स्मरण है सो उपदेश करूंगा; जिसकर रामजी निःसंशय पदको प्राप्त होवेंगे.

वाल्मीकिरुवाच—इसप्रकार वसिष्ठने विश्वामित्रसे कहा, ताके अनंतर मोक्षका उपाय सब रामजीको कहत भये.

इति श्रीयोगवासिष्ठेमुमुक्षुप्रकरणे विश्वामित्रोक्तिवर्णनं
नाम द्वितीयः सर्गः ॥ २ ॥

तृतीयः सर्गः ३।

अथ असंख्यसृष्टिप्रतिपादनवर्णनम् ।

वसिष्ठ उवाच—हे रामजी ! कमलज जो ब्रह्माजी, तिन्होंने मुझको जो कछु जीवके कल्याणनिमित्त उपदेश किया है, सो भले प्रकार मेरे स्मरणमें आता है, सो अब तुमको कहता हूं.

श्रीराम उवाच—हे भगवन् ! कछुक प्रश्न करनेका अवसर आया है. अब एक संशयको दूर करो, मोक्षउपाय जो कहते हो, सो सब तुम कहोगे, परंतु यह जो तुमने कहा कि,—शुकदेवजी विदेहमुक्त होगये तो भगवान् व्यासजी जो सर्वज्ञ हैं सो विदेहमुक्त क्यों न हुये ?

वसिष्ठ उवाच—हे रामजी ! जैसे सूर्यकिरणसों त्रसरेणु उड़त

देख पडती हैं, तिनकी संख्या कछु नहीं होती. तैसे परमसूर्यके संवद्-नरूपी किरणनमें त्रिलोकरूपी त्रसरेणु हैं सो असंख्य हैं और अनंत होकर मिट जाते हैं अरु और अनंत होते हैं और अनंत त्रिलोकी ब्रह्मसमुद्रमें होवेंगे; तिनकी संख्या कछु नहीं.

श्रीराम उवाच-हे भगवन्! जो आगे व्यतीत होगये हैं और आगे जो होवेंगे तिनकी संख्या केती है? अरु वर्त्तमानको तो जानता हूं.

वसिष्ठ उवाच-हे रामजी! अनंतकोटि त्रिलोकीके गण उपजे हैं, अरु मिटगये हैं अरु कई होवे हैं अरु कई होवेंगे, गिननेकी संख्या कछु नहीं. काहेते कि, जीव असंख्य हैं अरु जीवजीवप्रति अपनी अपनी सृष्टि है जब यह जीव मृतक हो जाते हैं तब उसी स्थानमें अपने अंतवाहक संकल्परूपी पूरविषे इसका बांधव भास आता है, अरु इसी स्थानमें परलोक भास आता है. पृथ्वी, आप, तेज, वायु आकाश, पंचभूत भासते हैं. अरु नानाप्रकारकी वासनानके अनुसार अपनी अपनी सृष्टि भास आती है. बहुरि जब उहांते मृतक होता है, तब वही सृष्टि भास आती है, नामरूपसंयुक्त वही जाग्रत् सत्य होकर भास आती है. बहुरि जब वहांते मरता है तब इस पंचभूत सृष्टिका अभाव होजाता है और अवर भासती है अरु तहांके जो जीव होते हैं तिनकोभी इसीप्रकार अनुभव होता है इसीप्रकार एक एक जीवकी सृष्टि होती है अरु मिट जाती है तिसकी संख्या कछु नहीं, तब ब्रह्माकी सृष्टीकी संख्या कैसे होवे?

जैसे जो पुरुष फेर लेता है अरु तिसको सब पदार्थ भ्रमते दृष्टि आवते हैं. अरु जैसे नौकामें बैठे हुए नदीतटके वृक्ष चलते दृष्टि आते हैं. जैसे नेत्रके दोषकर आकाशमें मोतीनकी माला दृष्टि आती है; जैसे स्वप्नमें सृष्टि भासती है तैसे जीवको भ्रमकरके यह लोक परलोक भासता है. वास्तवते जगत कछु उपजाही नहीं एक अद्वैत परमात्मतत्त्व

अपने आपविषे स्थित है, तिसविषे द्वैतभ्रम अविद्याकरके भासता है, जैसे बालकको अपनी परछाईंमें बैताल भासता है अरु भयको पाता है, तैसे अज्ञानीको अपनी कल्पना जगद्रूप होय भासती है.

हे रामजी ! यह व्यासदेव बत्तीसवेर मेरे देखनेमें आये हैं. तिनमें दश तो एक आकाररूप हैं अरु एकही जैसी क्रिया अरु एकही जैसे निश्चय हुए हैं. अरु दूसरे दशभी समानही हुये हैं अरु बारह विलक्षण आकार, विलक्षणक्रियाचेष्टावारे हुये हैं. जैसे समुद्रमें तरंग होते हैं, तामें कई सम अरु कई विलक्षण उपजते हैं, तैसे व्यास हुये हैं. अरु सम जो दश हुये हैं. तिनमें दश व्यास यही हैं अरु आगेभी अष्टबेर यही होवेंगे बहुरि महाभारत कहेंगे. बहुरि नौमीबेर ब्रह्मा होकर विदेह मुक्त होवेंगे अरु हमभी होवेंगे अरु वाल्मीकिभी होवेंगे अरु भृगुभी होवेंगे अरु बृहस्पतिके पिता अंगिराभी होवेंगे इत्यादिक औरभी होवेंगे

हे रामजी ! एक सम होते हैं, एक विलक्षण होते हैं, अरु मनुष्य देवता, तिर्यगादिक जीव कई वेर समान होते हैं, कई बेर विलक्षण होते हैं, कई जीव समान आकार आगे जैसे कुल क्रियासहित होते हैं, अरु कई संकल्प करें उडते फिरते हैं. आना, जाना, जीना, और मरना स्वप्नभ्रमकी नाईं दीखता है. अरु वास्तवते कोऊ न आता है, न जाता है, न जन्मता है, न मरता है. यह भ्रम अज्ञानसों भासता है. विचार कियेते कछु निकसता नहीं. जैसे कदलीका थंभ देखनेमें बडा पुष्ट आता है, फिर खोल देखो तो सार कछु नहीं निकसता; तैसे जगद्भ्रम अविचार करके सिद्ध है, विचार कियेते कछु भासता नहीं.

हे रामजी ! जो पुरुष आत्मसत्तामें जागा है, तिसको द्वैतभ्रम नहीं भासता है; वह आत्मदर्शी सदा शांत आत्मा परमानंदस्वरूप है अरु सब कालनाते रहित है. ऐसे जीवन्मुक्तको कोई चलाय नहीं सक्ता ऐसे जो व्यासदेवजी हैं तिनको सदेहमुक्ति अरु विदेहमुक्तिकी कोऊ

कलना नहीं. सदा अद्वैतरूप है. हे रामजी ! जीवन्मुक्तको सब सर्वात्मा पूर्ण भासता है अरु स्वस्वरूप भासता है. स्वरूपसार शांतिरूप अमृतकरि पूर्ण है, अरु निर्वाणमें स्थित है.

इति श्रीयोगवासिष्ठे मुमुक्षुप्रकरणे असंख्यसृष्टिप्रतिपादनं नाम तृतीयः सर्गः ॥ ३ ॥

चतुर्थः सर्गः ४ ।

अथ पुरुषार्थोपक्रमवर्णनम् ।

वसिष्ठ उवाच—हे रामजी ! जीवन्मुक्ति अरु विदेहमुक्तिमें भेद कछु नहीं. जैसे स्थिर जल है, तौभी जल है, अरु तरंग फिरते हैं, तौभी जल है, तैसे जीवन्मुक्ति अरु विदेहमुक्तिमें भेद कछु नहीं. हे रामजी ! जीवन्मुक्ति अरु विदहमुक्तिका अनुभव तुमको प्रत्यक्ष नहीं भासता. काहेते, जो स्वसंवेद्य है, अरु तिनमें जो भेद भासता है, सो असम्यग्दर्शीको भासता है. ज्ञानवान्‌को भेद कछु नहीं भासता है.जो वायु स्पंदरूप होता है सोभी वायु है, अरु निष्पंदरूप होता है सोभी वायु है, उसके चलते निश्चयविषे भेद कछु नहीं, पर अवर जीवको स्पंद होती है, तो भासती है अरु निष्पंद होती है तो नहीं भासती है. तैसे ज्ञानवान् पुरुषको जीवन्मुक्ति अरु विदेहमुक्तिमें भेद कछु नहीं. वह सदा अद्वैत कलनाते रहित है. जब जीवको उसका शरीर भासता है, तब जीवनन्मुक्त कहते हैं; जब शरीर अदृश्य होता है; तब विदेहमुक्त कहते हैं, अरु उसको दोऊ तुल्य हैं.

हे रामजी ! अब प्राकृत प्रसंगको सुनो, जो श्रवणका भूषण है कि जो कछु सिद्ध होता है सो अपने पुरुषार्थकर सिद्ध होता है, पुरुषार्थविना सिद्ध कछु नहीं होता.और जो कहते हैं कि, जो दैव करेगा सो होवे-

गा सो मूर्खता है. यह चंद्रमा हृदयको शीतल अरु उल्लासकर्ता भासता है, सो इसमें शीतलता पुरुषार्थकर हुई है. हे रामजी ! जिस अर्थको प्रार्थना करे अरु यत्न करे तिसमें फिरे नहीं तो अवश्यकर जरूर पाता है. और पुरुषयत्न किसका नाम है सो श्रवण करो. संतजन अरु सत्यशास्त्रके उपदेशरूप उपायकर तिसके अनुसार चित्तका विचरना हो सो पुरुषमें यत्न है. तिसके इतर जो चेष्टा करता है, तिसका नाम उन्मत्त चेष्टा है, अरु जिस निमित्त यत्न करता है सोई पाता है. एक जीव था, सो पुरुषार्थपर यत्न करते इंद्रकी पदवी पाई, त्रिलोकीका पति होय सिंहासनपर आरूढ हुवा. हे रामचंद्र ! आत्मतत्त्वमें जो चैतन्य स्पंद, इस स्पंदरूप होकर, स्फूर्ति है, सो अपने पुरुषार्थकर ब्रह्माके पदको प्राप्त भई है, ताते देखो जिसको कछु सिद्धता प्राप्त हुई सो अपने पुरुषार्थकर हुई है. केवल चैतन्य जो आत्मतत्त्व है तिसमें चित्तसंवेदन, यही स्पंदरूप है, यह चैतन्य संवेदन अपने पुरुषार्थकरके गरुडपर आरूढ हो, विष्णुरूप होता है; अरु यह चैतन्यसंवेदन अपने पुरुषार्थकरके रुद्ररूप भयो है अरु अर्द्धांगमें पार्वतीको धरे रहे हैं अरु मस्तकमें चंद्रमाको धरे हैं अरु नीलकंठ परमशांतरूप हैं, ताते जो कछु सिद्ध होता है सो पुरुषार्थकर होता है.

हे रामजी ! पुरुषार्थ करके सुमेरुका चूर्ण किया चाहे, तौभी कर सक्ता है. जैसे पूर्वदिनमें दुष्कृत किया होय अरु अगले दिनमें सुकृत करे, तब दुष्कृत दूर हो जाता है. जो अपने हाथद्वारा चरणाम्र तभी ले नहीं सक्ता, पुरुषार्थ करे तो वही पृथ्वी खंड खंड करनेको समर्थ होता है.

इति श्रीयोगवासिष्ठे मुमुक्षुप्रकरणे पुरुषार्थोपक्रमो नाम चतुर्थः सर्गः ॥ ४ ॥

पंचमः सर्गः ५ ।

अथ पुरुषार्थवर्णनम् ।

वसिष्ठ उवाच—हे रामजी ! जो चित्त कछु वाछा करता है अरु शास्त्रके अनुसार पुरुषार्थ नहीं करता सो सुखसो न पावेगा. उसकी उन्मत्त चेष्टा है अरु पुरुषार्थभी दो प्रकारका है-एक शास्त्र अनुसार है और एक शास्त्रविरुद्ध है. जो शास्त्रको त्याग कर अपनी इच्छाके अनुसार विचारता है सो सिद्धताको न पावेगा; अरु जो शास्त्रके अनुसार पुरुषार्थ करता है, सो सिद्धताको प्राप्त होवेगा, अरु दुःखभी न होवेगा. अनुभवते स्मरण होता है अरु स्मरणते अनुभव होता है, सो दोनों इसहीते होते हैं. दैव तो कछु न हुवा.

हे रामजी ! और दैव कोऊ नहीं· इसका किया इसको प्राप्त होता है: परंतु जो बलिष्ठ होता है सो तिसके अनुसार विचरता है. जो पूर्वके संस्कार बलि होते हैं तो उसको जय होती है. अरु जो विद्यमान पुरुषार्थ वलि होता है तब उसको जीति लेते हैं. जैसे एक पुरुषके दो बेटे हैं अरु जो तिनको लडावता है, तो दोनों विषे जो बली होता है, तिसकी जय होती है,परंतु दोनों उसके हैं; तैसे दोनों कर्म इसके हैं,जो पूर्वका संस्कार बली होता है तो इसकी जय होतीहै.

हे रामजी! यह जो सत्संग करता है अरु सत्शास्त्रहूका विचार करता है· बहुरि पक्षीकी नाईं संसारवृक्षहूकी ओर उडता है, तो पूर्वका संस्कार बली है. तिसकरि स्थिर हो नहीं सक्ता, ऐसे जानकर तुम पुरुषप्रयत्नका त्याग नहीं करो,जो पूर्वके संस्कारते अन्यथा नहीं होता पूर्वका संस्कार बलीभी होवे. परंतु जब सत्संग करे अरु सत्शास्त्रहूका दृढ अभ्यास होवे, तो पूर्व संस्कारको पुरुषप्रयत्न जीत लेता है; जैसे पूर्वके संसारमें दुष्कृत किया है, आगे सुकृत किया है तो अगलेका

अभाव हो जाता है; सो पुरुषप्रयत्न होता है. सो पुरुषार्थ क्या है ? अरु तिसकर सिद्ध क्या होता है ? सो श्रवण करके ज्ञानवान् जो संत हैं अरु सत्शास्त्र जो ब्रह्मविद्या है, तिसके अनुसार प्रयत्न करना, तिसका नाम पुरुषार्थ है. अरु पुरुषार्थकरके पानेयोग्य आत्मा है, जिसकरि संसारसमुद्रते पार होवे.

हे रामजी ! जो कछु सिद्ध होता है, सो अपने पुरुषार्थकरि होता है, दूसरे दैव कोऊ नहीं. जो शास्त्रके अनुसार पुरुषार्थको त्याग करि कहता है कि—जो जो कछु करना है, सो दैव करैगा, सो मनुष्यमें गर्दभ है, तिसका संग न करना; उसकी संगति दुःखका कारण है. इस पुरुषको प्रथम तो यह कर्त्तव्य है कि अपने वर्णाश्रमविषे शुभ आचारको ग्रहण करे अरु अशुभका त्याग करे, बहुरि संतका संग, अरु सत्शास्त्रका विचार करे और तिसके विचार करे अपने गुणदोषहूका विचार करे कि दिन अरु रात्रिमें शुभ क्या करता हूं अरु अशुभ क्या करता हूं, आगे गुण अरु दोषहूका साक्षीभूत होकर जो संतोष, धीरज वैराग्य, विचार अरु अभ्यासगुण हैं, तिनको बढावे. अरु जो दोष विपरीत हैं, तिनका त्याग करे. जब ऐसे पुरुषार्थको अंगीकार करैगा, तब परमानंद आत्मतत्त्वको प्राप्त होवेगा. तातें--

हे रामजी ! वनके घायल हुए मृगकी नाईं नहीं होना, जो घास, तृण, पातको रसीला जानके पार चुगता है; तैसे स्त्री, पुत्र, बांधव और धनादिकविषे मग्न हो रहना, सो नहीं होना; इनते विरक्त होना. दंतके साथ दंतहूको चबाय करि, संसारसमुद्रको पार होनेका यत्न करना. अरु बलते बंधनको तोडिकरि निकस जाना, जैसे सिंह बलकरके पिंजरेमेंते निकस जाता है, सोई पुरुषार्थ है.

हे रामजी ! जिसको कछु सिद्धताकी प्राप्ति हुई है, सो अपने पुरुषार्थकर हुई है, पुरुषार्थविना नहीं होती. जैसे प्रकाशविना पदार्थका

ज्ञान नहीं होता. जिन पुरुषोंने अपना पुरुषार्थ त्याग दिया है; अरु दैवके आश्रय हुये हैं; कि, हमारा दैव कल्याण करेगा, सो न होवेगा. जैसे पत्थरसों तेल निकासा चाहे, सो नहीं निकसता; तैसे उनका कल्याण दैवते न होवेगा. हे रामजी! तुम तो दैवका आश्रय त्याग कर, अपने पुरुषार्थका आश्रय करो.

जिसने अपना पुरुषार्थ त्यागा है, तिसको सुंदर कांति लक्ष्मी त्याग जाती है. जैसे वसंतऋतुकी मंजरी वसंतऋतुके गयेते विरस हो जाती है तैसे उनकी कांति लघु होजाती है; जिस पुरुषने ऐसा निश्चय किया है, कि हमारा पालनेहारा दैव है, सो पुरुष ऐसा है, जैसे कोऊ अपनी भुजाको सर्प जानके भय, पायके, दौरते हैं और जानते नहीं कि, यह अपनी भुजा है; तैसे अपने पुरुषार्थको त्यागके दैवका आश्रय लेता है; अरु भयको पाता है.

पुरुषार्थ नाम उसका है, कि, संतहूका संग अरु सत्शास्त्रोंका विचार करके, तिनके अनुसार विचारना. जो तिनको त्यागके, अपनी इच्छाके अनुसार विचरते हैं, सो सुखको नहीं पावेंगे; न सिद्धताको पावेंगे. अरु जो शास्त्रके अनुसार विचरते हैं, सो इहांभी सुख पावेंगे अरु आगेभी सुख पावेंगे, तैसेई सिद्धताको पावेंगे. ताते संसाररूपी जालविषे नहीं गिरना, सो पुरुषार्थ है. संतनहूके संग अरु सत्शास्त्रके अर्थ हृदयरूपी पात्रमें लिखना; बोधरूपी लेखनी करनी अरु विचाररूपी स्याही करनी जब ऐसे पुरुषार्थकरि लिखेगा, तब संसाररूपी जालमें न गिरेगा.

हे रामजी! जैसे यह आदिनीति हुई है, जो पट है सो पटही है, जो घट है सो घटही है; घट है सो पट नहीं और पट है सो घट नहीं; तैसे यहभी नीति हुई है कि, अपने पुरुषार्थबिना परमपदकी प्राप्ति नहीं होती.

हे रामजी! जो संतहूकी संगति करता है अरु सत्शास्त्रभी विचारता है अरु उनके अर्थमें पुरुषार्थ नहीं करता, तिसकरि सिद्धता प्राप्त

नहीं होती; तैसे अमृतके निकटही बैठा होवे अरु पान कियेबिना अमर नहीं होता, तैसे अभ्यास किये बिना सिद्धता प्राप्त नहीं होती. हे रामजी! अज्ञानी जीव अपना जन्म व्यर्थ खोते हैं. देखो--जब बालक होते हैं, तब मूढ़ अवस्थामें लीन रहते हैं, युवा अवस्थामें विकारहूको सेवते हैं, अरु जरामें जर्जरीभूत होते हैं; इसीप्रकार जीवना व्यर्थ खोते हैं, अरु जो अपना पुरुषार्थ त्याग करके, दैवका आश्रय लेते हैं, सो अपने हंता होते हैं, सुखको नहीं पावेंगे. हे रामजी! जो पुरुष व्यवहारविषे अरु परमार्थविषे आलसी हुये हैं अरु परमार्थको त्यागके, मूढ़ होरहे हैं, सो दीन हुए हैं मानों वे पशु हैं, अरु दुःखको प्राप्त हुये हैं; यह मैंने विचार करके देखा है; ताते पुरुषार्थका आश्रय करो. सतसंग अरु सत्शास्त्ररूपी आदर्श करके अपने गुणकरके दोषको देखके दोषका त्याग करो; अरु शास्त्रका सिद्धांत जो है तिसका अभ्यास करो, जब दृढ़ अभ्यास करोगे, तब शीघ्रही आनंदवान् होगे.

वाल्मीकिरुवाच—जब इस प्रकार वसिष्ठजीने कहा तब सायंकालका समय हुआ; सब स्नानके निमित्त उठके खड़े भये और परस्पर नमस्कार करके अपने २ घरको गये; बहुरि रात्रि व्यतीत भये, सूर्यकिरणके साथ आय स्थित भये.

इति श्रीयोगवासिष्ठे मुमुक्षुप्रकरणे पुरुषार्थवर्णनं नाम पंचमः सर्गः ॥५॥

षष्ठः सर्गः ६ ।

अथ परमपुरुषार्थवर्णनम् ।

वसिष्ठ उवाच—हे रामजी! इसका जो पूर्वका किया पुरुषार्थ है, तिसका नाम दैव है और दैव कोऊ नहीं, जब यह सतशास्त्रका विचार कर पुरुषार्थ करे, तब पूर्वके संस्कारको जीत लेता है. पुरुष जिस इष्टको पानेका इस शास्त्रद्वारा यत्न करेगे तिसको अवश्यमेव उ

पुरुषार्थते पावेगा; अन्यथा कछु नहीं होता, न हुआ है, और न होवेगाः पूर्व जो कोऊ पाप किया होता है, तिसका फल जब दुःख पाता है, तब मूर्ख कहता है कि-हाय दैव ! हाय कष्ट ! हाय कष्ट !

हे रामजी ! इसका जो पुरुषार्थ पूर्वका है, तिसका नाम दैव है और दैव कोऊ नहीं; और जो कोऊ दैव कल्पते हैं, सो मूर्ख हैं; अरु जो पूर्वजन्मके सुकृत करके आया होता है, वही सुकृत सुख होयके देता है. जो पूर्वका सुकृत बली होता है तो उसहीकी जय होती है. जो पूर्वका दुष्कृत बली होता है अरु शुभका पुरुषार्थ करता है; सतसंग अरु सत्शास्त्रहूका विचार श्रवण करता है, तो पूर्वके संसारको जीत लेता है. जैसे प्रथम दिन पाप किया होवे; दूसरे दिन बडा पुण्य करे, तो पूर्वका पाप निवृत्त होजाताहै. तैसे जब इहां दृढ पुरुषार्थ करे, तो पूर्वके संस्कारको जीत लेता है. ताते जो कछु सिद्ध होता है, सो इसको पुरुषार्थकरके सिद्ध होता है, कि, एकत्र भाव करि प्रयत्न करना इसीका नाम पुरुषार्थ है. जिसका यत्न एकत्र भाव होयके करेगा. तिसको अवश्यमेव प्राप्त होवेगा. जो पुरुष और दैवको जानके, अपना पुरुषार्थ त्याग बैठा है, सो दुखको पावेगा, शांतिवान् कबहूं न होवेगा.

हे रामजी ! मिथ्या दैवके अर्थको त्यागके, तुम अपने पुरुषार्थका अंगीकार करो. जो संतजन अरु सत्शास्त्रहूके वचन अरु युक्तिके साथ यत्न करके आत्मपदको अभ्यास करके प्राप्त होना इसीका नाम पुरुषार्थ है. प्रकाश करके जैसे पदार्थहूका ज्ञान होता है, तैसे पुरुषार्थ करं आत्मपदकी प्राप्ति होती है. जो पूर्वके कियेसे बडा है; पापी होता है अरु इहां दृढ पुरुषार्थ कियेते उसको जीत लेता है, जैसे बड़ा मेघ होता है, अरु तिसका पवन नाश करता है अरु जैसे बर्षदिनहूका क्षेत्र पका होता है अरु बर्फ तिसका नाश कर देता है, तैसे पूर्वका संस्कार पुरुषप्रयत्नकरके नाश होता है.

हे रामजी ! श्रेष्ठ पुरुष सोई है, जाने सत्संग अरु सत्शास्त्रद्वारा बुद्धिको तीक्ष्ण करके, संसारसमुद्र तरनेका पुरुषार्थ किया है. अरु जिनहू सत्संग अरु सत्शास्त्रद्वारा बुद्धि तीक्ष्ण नहीं करी अरु पुरुषार्थको त्याग बैठे हैं, सो पुरुष नीचते नीच गतिको पावेंगे. अरु जो श्रेष्ठ पुरुष हैं, सो अपने पुरुषार्थ करके परमानंदपदको पावेंगे जिसके पायेते बहुरि दुःख नहीं होता अरु जो देखनेकरि दीन होते हैं अरु सत्संगति अरु सत्शास्त्रके अनुसार पुरुषार्थ करते हैं, सो उत्तम पदवीको प्राप्त होते दृष्टि आते हैं. हे रामजी ! जिस पुरुषने पुरुषप्रयत्न किया है, तिसको सब संपदा आय प्राप्त होती है अरु परमानंदकरिके पूर्ण हो रहते हैं. जैसे रत्नहूकरि समुद्र पूर्ण है, तैसे वह परमानंदकरके पूर्ण हुए हैं. ताते जो श्रेष्ठ पुरुष हैं, सो अपने पुरुषार्थद्वारा संसारके बंधनते निकस जाते हैं; जैसे केसरी (सिंह) अपने बलसों पिंजरेते निकस जाता है.

हे रामजी ! यह पुरुष और कछु न करे तब यह करे कि—अपने वर्णाश्रमके अनुसार विचरे अरु सार पुरुषार्थ करे. जो संतहू अरु शास्त्रहूका आश्रय होवे तिसके अनुसार पुरुषार्थ करे, तब सब बंधनते मुक्त होवेगा अरु जिसने अपने पुरुषार्थका त्याग किया है, किसी और दैवको मानके कहता है कि—वह मेरा कल्याण करेगा, सो जन्ममरणको प्राप्त होवेगा.

हे रामजी! इस जीवको संसाररूपी विशूचिका रोगहै, तिसको दूर करनेका उपाय मैं कहता हूं. संतजन अरु सत्शास्त्रहूके अर्थविषे दृढ भावना करनी; जो कछु तिनहूते सुना है, तिसका वारंवार अभ्यास करना और सब कल्पना त्यागके एकान्त होके तिसका चिंतन करना, तब इसको परमपदकी प्राप्ति होवेगी, अरु द्वैतभ्रम निवृत्त हो जावेगा, अद्वैतरूप पडा भासेगा, इसकाही नाम पुरुषार्थ है.

इति श्रीयोगवासिष्ठे मुमुक्षुप्रकरणे परमपुरुषार्थवर्णनं नाम षष्ठःसर्गः॥६॥

सप्तमः सर्गः ७ ।

अथ पुरुषार्थप्राधान्यसमर्थनवर्णनम् ।

वसिष्ठ उवाच–हे रामजी ! अन्य पुरुषार्थकरके इसको आध्यात्मिक–आदि ताप आय प्राप्त होते हैं; तिसकरि शांतिको नहीं पाता. तुम रोगी नहीं होना; अपने पुरुषार्थद्वारा जन्ममरणके बंधनते मुक्त होवो. और कोई दैव मुक्त नहीं करनेका; अपने पुरुषार्थद्वारा संसारबंधनते मुक्त होना है. जिस पुरुषने अपने पुरुषार्थका त्याग कियाहै अरु किसी और दैवको मानिकरि, तिसके परायण हुआ है, तिसका धर्म अर्थ, और काम नष्ट हो जावेगा, अरु नीचते नीच गतिको प्राप्त होवेगा.

हे रामजी ! शुद्ध चैतन्य जो इसका अपना आप है, अरु वास्तवरूप है, तिसके आश्रय जो आदिचित्तसंवेदन स्फूर्ति है, जो अहंमम संवेदन होके, फुरने लगती है बहुरि इंद्रिय अहंस्फूर्ति है. जब यह स्फुरना संत अरु शास्त्रके अनुसार होवे, तब वह पुरुष परमशुद्धताको प्राप्त होता है. अरु जो संत और शास्त्रके अनुसार न होवे, तब वासनाके अनुसार भावअभावरूप जो भ्रमजाल है तिसविषे परा घटीयंत्रकी नाईं भटकता है, शांतिवान् कबहूं नहीं होता.

हे रामजी ! जिस किसीको सिद्धता प्राप्त हुई है, तब अपने पुरुषार्थकर हुई है, बिन पुरुषार्थ सिद्धताको प्राप्त न होवेगा. जब किसी पदार्थको ग्रहण करना होता है, तब भुजा पसारिये तो ग्रहण करना होता है. अरु जो किसी देशको प्राप्त होना होवे सो जब चले तब जाय पहुँचिये, अन्यथा नहीं होता, ताते पुरुषार्थबिना सिद्ध कछु नहीं होता. जो कोऊ कहता है, दैव करेगा सो होवेगा, सो मूर्ख है. हे रामजी! और दैव कोऊ नहीं, इस पुरुषार्थका नाम दैव है. यह दैवशब्द मूर्खहीका चलाया है, जो किसी कष्टके साथ दुःख पाया, तिसको कहते हैं, दैवका किया है, सो और तो दैव कोऊ नहीं.

हे रामचंद्र ! जो अपना पुरुषार्थ त्यागके, दैवके आश्रय हो रहेगा, सो सिद्धताको प्राप्त न होवेगा, काहेते कि--अपने पुरुषार्थ विना सिद्धता किसीको प्राप्त नहीं होती. अरु बृहस्पतिजीने जो दृढ पुरुषार्थ किया है तब सब देवतावोंके राजा इंद्रके गुरु हुयेहैं अरु शुक्रजी अपने पुरुषार्थद्वारा सर्व दैत्यनके गुरु हुये हैं, अरु और जो समान जीव हैं तिनविषे जिस पुरुषने प्रयत्न किया है सो पुरुष उत्तम हुवा है. जिसको जाते सिद्धता प्राप्त भई है, सो अपने पुरुषार्थकरि भई है अरु जिन पुरुषोंने संत अरु शास्त्रहूके अनुसार पुरुषार्थ नहीं किया, सो मेरे देखते देखते वड़े राजा अरु प्रजा अरु धनने और विभूतिते क्षीण हो गये हैं, अरु नरकहू विषे परे जलते हैं. जिसकरके कछु अर्थसिद्धि होवे, तिसका नाम पुरुषार्थ है. अरु जिसकरके अनर्थसिद्धिहोवे, तिसका नाम अपुरुषार्थ है.

हे रामजी ! इन पुरुषको कर्तव्य यही है, कि--सतशास्त्र अरु संतहूका संग करि बुद्धि तीक्ष्ण करे अरु शुभगुणोंको पुष्ट करे, दया, धीरज, संतोष वैराग्यके अभ्यासकरके बुद्धि तीक्ष्ण करे, अरु तीक्ष्ण बुद्धि करके, इसको पुष्ट करे. जैसे वडे तालते मेघ पुष्ट होता है, वहुरि वर्षा करके मेघ तालको पुष्ट करता है, तैसे शुभ गुणकरके बुद्धि पुष्ट होती है अरु पुष्टबुद्धिकरि शुभगुण पुष्ट होते हैं.

हे रामजी ! जो बाल्यावस्थाते लेकरि अभ्यास किया होता है, उसको शुद्धता प्राप्त नहीं होती है. अर्थात् दृढ अभ्यासविना शुद्धता प्राप्त नहीं होती है, जो किसी देश अथवा तीर्थ जाना होवे, तव मार्गविषे निरलस होयके चला जावे, तो जाय पहुँचेगा अरु जव भोजन करेगा तव क्षुधा निवृत्त होवेगी; अन्यथा नहीं होवेगी; अरु जव मुखविषे जिह्वाशुद्ध होवेगी तव पाठ स्पष्ट होवेगा, गूँगासों पाठ नहीं होता. ताते जो कछु कार्य सिद्ध होता है, सो अपने पुरुषार्थकर सिद्ध होता है, चुप हो रहनेते कोऊ कार्य सिद्ध नहीं होता. अरु सबही गुरु बैठे हैं, इनहूँते पूंछ

देखो आगे जो तुम्हारी इच्छा हो सो करो, अरु जो मुझसों पूछो तो सब शास्त्रका सिद्धांत कहता हूं जिसकरि सिद्धताको प्राप्त होवेंगे.

हे रामजी ! संत जो हैं ज्ञानवान् पुरुष अरु सत्शास्त्र जो है ब्रह्मविद्या इनके अनुसार संवेदन अरु मन अरु इंद्रियोंका विचारना होवे. अरु इसते विरुद्ध होवे तिसते वर्ज्य रखना. तिसकरके तुमको संसारका राग दोष स्पर्श नहीं करैगा, सबते निर्लेप रहोगे, जैसे जलते कमल निर्लेप रहता है. हे रामजी ! जिस पुरुषहूते शांति प्राप्त होवे, तिसकी भली-प्रकार सेवा करिये; काहेते कि, उसका बडा उपकार है, जो संसार-समुद्रते निकासि लेते हैं. हे रामजी ! संतजनभी वही हैं अरु सत्शा-स्त्रभी वेही हैं, कि, जिनके विचार अरु संगतिकरि संसारते चित्त उप-रत होवे, मोक्षका उपाय वही है, ताते और सब कल्पनाओंके त्यागके अपने पुरुषार्थको अंगीकार करहु तब जन्ममरणका भय निवृत्त होजावे

हे रामजी ! जब यह वांछा करता है अरु तिसके निमित्त दृढ पुरु-षार्थ करता है, तब अवश्यमेव तिसको पावे अरु जो बडे तेज अरु वि-भूतिकरके संपन्न तुमको दृष्टि आते हैं अरु सुनते हैं.सो अपने पुरुषार्थ-करि भये हैं अरु जो महाकनिष्ठ सर्प, कीटआदिक तुमको दृष्टि आवते हैं, तिनने अपने पुरुषार्थका त्याग किया है, तब ऐसे हुवे हैं.

हे रामजी ! अपने पुरुषार्थको आश्रय करो नहीं तो सर्प, कीटादिक नीच योनिको प्राप्त होवेंगे. जिस पुरुषने अपना पुरुषार्थ त्यागा है और किसी दैवका आश्रय धरा है, सो महामूर्ख है. काहेते कि, यह वार्त्ता व्यवहारमेंभी प्रसिद्ध है. अपने उद्यम कियेविना किसी पदार्थकी प्राप्ति नहीं होती, तो परमार्थकी प्राप्ति कैसे होवे ? ताते दैवको त्याग करि संतजन अरु सत्शास्त्रोंके अनुसार यत्न करहु, परमपद पानेके निमित्त जो दुःखहीते मुक्त होवेहु. हे रामजी ! जो जनार्दन विष्णुजी हैं, सो अ-वतार धरकर, दैत्यको मारते हैं अरु अवर चेष्टाभी करते हैं; परंतु पापका

स्पर्श उनको नहीं होता. काहेते, जो अपने पुरुषार्थकरके अक्षय पदको प्राप्त हुए हैं. तुमभी पुरुषार्थका आश्रय करो अरु संसारसमुद्रको तरि जावो.

इति श्रीयोगवासिष्ठे मुमुक्षुप्रकरणे पुरुषार्थप्राधान्यसमर्थन-वर्णनं नाम सप्तमः सर्गः ॥ ७ ॥

अष्टमः सर्गः ८।

अथ दैवनिराकरणवर्णनम् ।

वशिष्ठ उवाच—हे रामजी ! यह जो दैवशब्द हैं सो मूर्खोंने कल्पा है, जो दैव हमारी रक्षा करैगा, हमको दैवका आकार कोऊ दृष्टि नहीं आवता, न कोऊ दैवका काल है, न दैव कछु करताही है; मूर्ख लोग दैव दैव ऐसे कहते हैं और दैव तो कोऊ नहीं. इसके पूर्वका कर्मही दैव है.

हे रामजी ! जिन पुरुषोंने अपने पुरुषार्थका त्याग किया है, अरु जो दैवपरायण हुये हैं, कि—दैव हमारा कल्याण करेगा, सो मूर्ख है, काहेते जो अग्निविषे यह जाय पडे अरु दैव इसको निकासि लेवे, तब जानिये कि, कोऊ दैवभी है, सो तो नहीं. अरु जो दैव करता है, तो यह स्नान, दान, भोजन आदिहूका त्याग करि तूष्णीं होय वैठे, आपही दैव कर जावैगा, सोभी इसके कियेबिना नहीं होता, ताते और दैव कोऊ नहीं. अपना पुरुषार्थही कल्याणकर्त्ता है.

हे रामजी ! जो इसका किया कछु नहीं होता अरु दैवही करनेहारा होता, तो शास्त्र अरु गुरुका उपदेशभी नहीं होता, सो सत्शास्त्रके उपदेशकरके अपने पुरुषार्थद्वारा इसको वांछित पदवी प्राप्त होती है; ताते और जो कोऊ दैवशब्द हैं, सो व्यर्थ है. इस भ्रमको त्याग करके संत शास्त्रहूके अनुसार पुरुषार्थ करे, तब दुःखहूते मुक्त होवेगा. हे रामजी ! और दैव कोऊ नहीं, इसका पुरुषा जो है स्पंद, सोई दैव है.

हे रामजी! जो कोऊ और दैव करनहारा होता, तो जब इस शरीरको त्यागता है अरु शरीर जब नाश हो जाता है, क्रिया शरीरसों कछु नहीं होती; काहेते जो चेष्टा करनेहारा त्याग जाता है, तब दैव होता तौ सभी शरीरसों चेष्टा करावता. सो तो चेष्टा कछु नहीं होती. ताते जानना कि, दैवशब्द व्यर्थ है. हे रामजी! पुरुषार्थकी वार्त्ता है सो अज्ञानी जीवोंकोभी प्रत्यक्ष है. जो अपने पुरुषार्थबिना कछु होता नहीं. गोपालभी जानता है कि-जो मैं गौवोंको चराऊं नहीं, तो भूखीही रहेंगी, ताते दैवके आश्रय बैठि नहीं रहता. आपही चराय ले आता है.

हे रामजी! और दैवकी कल्पना भ्रमकरके परे करते हैं और दैव तो हमको कोऊ दृष्टि नहीं आता. हस्त, पाद, शरीर, दैवका कोऊ दृष्टि नहीं आता. अपने पुरुषार्थकरि सिद्धता दृष्टि आती है. अरु जो कोऊ आकारते रहित दैव कल्पिये तो नहीं बनता; काहेते कि, निराकार अरु साकारका संयोग कैसे होवे? हे रामजी! और दैव कोऊ नहीं, अपना पुरुषार्थ दैवरूप है. जो राजा ऋद्धिसिद्धिसंयुक्त भासते हैं, सोभी अपने पुरुषार्थकरि हुए हैं.

हे रामजी! यह जो विश्वामित्र हैं इन्होंने दैवशब्दका दूरहिते त्याग किया है सोभी अपने पुरुषार्थकरके क्षत्रियते ब्राह्मण हुए हैं अरु और जो बडे विभूतिवान् हुवे हैं, सोभी अपने पुरुषार्थकरि दृष्टि आवते हैं. हे रामजी! जो दैव पढे बिना पंडित करे तो जानिये दैवने किया, सो तो पढे बिना पंडित कहूं नहीं होता, अरु जो अज्ञानी ते ज्ञानवान् होते हैं सोभी अपने पुरुषार्थकरि होते हैं ताते और दैव कोऊ नहीं. मिथ्या भ्रमको त्याग करि, संतजन अरु सतशास्त्रहूके अनुसार संसारसमुद्र तरनेका प्रयत्न करो तुह्मारे पुरुषार्थ बिना और दैव कोऊ नहीं. जो और दैव होता तो बहुत बेर क्रियाबलभी, अपनी क्रियाको त्यागके सोई

रहता, आपे दैवही पडा करैगा, सो ऐसे तो कोऊ नहीं करता, तातें अपने पुरुषार्थबिना कछु सिद्ध नहीं होता. अरु जो इसका किया कछु न होता, तो पाप करनेहारे नरक न जाते अरु पुण्य करनेहारे स्वर्ग न जाते, परंतु पाप करनेहारे नरकमें जाते हैं अरु पुण्य करनेहारे स्वर्गमें जाते हैं तातें जो कछु प्राप्त होता है, सो अपने पुरुषार्थकरि होता है.

हे रामजी ! जो कोऊ और दैव करता है, ऐसा कहे तिसका शिर काटिए अरु दैवके आश्रय जीता रहे तो जानिये कि—कोऊ दैव है सो तो जीवता कोऊ रहे नहीं. तातें दैवशब्दको मिथ्या भ्रम जानके संतजन अरु सत्शास्त्रहूके अनुसार अपने पुरुषार्थकरि, आत्मपदविषे स्थित होउ

इति श्रीयोगवासिष्ठे मुमुक्षुप्रकरणे दैवनिवारणवर्णनं नाम अष्टमः सर्गः ॥ ८ ॥

नवमः सर्गः ९।

अथ कर्मविचारवर्णनम् ।

श्रीराम उवाच—हे भगवन्! हे सर्व धर्महूके वेत्ता! तुम कहते हो कि, और दैव कोई नहीं परंतु ब्राह्मणभी दैव है ऐसा कहते हैं और दैवका किया सब कछु होता है अरु सुखदुःखके देनेहारा दैव है यह लोकविषे प्रसिद्ध है.

श्रीवसिष्ठ उवाच—हे रामजी! मैं तुमको ऐसे कहता हूं, कि जिस करि तुम्हारा भ्रम निवृत्त होजावे; इसहीका कर्म किया हुआ है. शुभ अथवा अशुभ तिसका फल अवश्यमेव भोगना है, सो दैव कहो, पुरुषार्थ कहो और, दैव कोऊ नहीं अरु कर्त्ता, क्रिया, कर्मआदिकहू विषे तो दैव कोऊ नहीं और कोऊ दैवका स्थान नहीं रूप नहीं तो दूसरा दैव क्या कहिये ? हे रामजी ! मूर्खहूके परचावनेनिमित्त दैवशब्द कहा है जैसे आकाश शून्य है तैसे दैवभी शून्य है.

श्रीराम उवाच—हे भगवन् ! सब धर्महूके वेत्ता तुम कहते हो कि–दूसरा दैव कोऊ नहीं· सो आकाशकी नाईं शून्य है सो तुम्हारे कहनेसेभी दैव सिद्ध होता है. तुम कहते हो कि, इसके पुरुषार्थका नाम दैव है अरु जगतविषेभी दैवशब्द प्रसिद्ध है·

वसिष्ठ उवाच—हे रामजी ! हम ऐसे तुमको कहते हैं कि, जिस करि दैवशब्द तुम्हारे हृदयसों उठि जावे; अर्थात् शून्य होजावे· दैव नाम अपने पुरुषार्थका है अरु पुरुषार्थ नाम कर्मका अरु कर्म नाम वासनका है, वासना मनते होती है, अरु मनरूपी पुरुष है. जिसकी वासना करता है सोई इसको प्राप्त होता है. जो गांवको प्राप्ति होनेकी वासना करता है, सो गांवको प्राप्त होता है; जो पत्तनकी वासना करता है, सो पत्तनको प्राप्त होता हैः तातें दूसरा दैव कोऊ नहीं· पूर्वका जो शुभ अथवा अशुभ दृढ पुरुषार्थ किया तिसका परिणाम सुख, दुःख अवश्य होता है और तिसीका नाम दैव है.

हे रामजी ! तुम विचार कर देखो कि–अपना पुषार्थ कर्महूते भिन्न नहीं तो सुख, दुःख देनेहारा अरु लेनेहारा दैव कोऊ नहीं हुआ· क्योंकि, यह जो पापकी वासना करता है अरु शास्त्रविरुद्ध कर्म करता है, सो किसकरि करता है ? पूर्वका जो उसका दृढ पुषार्थ कर्म. तिसकरि यह पाप करता है. अरु जो पूर्वका पुण्य कर्म किया होता है, तो यह शुभमार्गविषे विचरता है·

राम उवाच—हे भगवन् ! जो पूर्वकी दृढ़ वासनाके अनुसार यह विचारता है, कि, मैं क्या करूं, मुझको पूर्वकी वासनाने दीन किया है, अब मुझको क्या कर्तव्य है ?

वसिष्ठ उवाच—हे रामजी ! जो कछु इसकी पूर्वकी वासना दृढ़ होरही है, तिसके अनुसार यह विचरना होता है अरु जो

सो अपने पुरुषार्थकरके पूर्वके मलिन संसारको शुद्ध करते हैं, तिनके मल दूर हो जाते हैं. सत्‌शास्त्र अरु ज्ञानहूके वचनअनुसार दृढ पुरुषार्थ करो, तव मलिन वासना दूर हो जावेगी.

हे रामजी ! पूर्वके मलिन कर्म कैसे जानिये अरु शुभ कर्म कैसे जानिये सो श्रवण करहु. जो चित्त विषयकी ओर धावे अरु शास्त्रविरुद्ध मार्गकी ओर जावे अरु शुभकी ओर न धावे, तो जानिये कि, पूर्वका कर्म कोऊ मलिन है, अरु जो संतजन अरु सत्‌शास्त्रहूके अनुसार चेष्टा करे अरु संसारमार्गते विरक्त होवे, तव जानिये कि, पूर्वका कर्म शुद्ध है. ताते हे रामजी ! तुमको दोनोंकरके सिद्धता है. जो पूर्वका संस्कार शुद्ध है, ताते तुम्हारा चित्त शीघ्रही सत्संग अरु सत्‌शास्त्रहूके वचनको ग्रहण करी लेवेगा अरु शीघ्रही तुमको आत्मपदकी प्राप्ति होवेगी अरु जो तुम्हारा चित्त इस शुभमार्गविषे स्थिर नहीं हो सके तो दृढ पुरुषार्थकरि संसारसमुद्रते पार होवो.

हे रामजी ! तुम चेतन हो, जड़ तो नहीं. अपने पुरुषार्थका आश्रय करो. मेराभी यही आशीर्वाद है जो तुम्हारा चित्त शीघ्रही शुभ आचरण विषे स्थित होवे अरु ब्रह्मविद्याका जो सिद्धांतसार है, तिसविषे स्थित होवे. हे रामजी ! श्रेष्ठ पुरुषभी वही है, जिसका पूर्वका संस्कार यद्यपि मलिनभी था; परंतु संत अरु सत्‌शास्त्रके अनुसार दृढ सो सिद्धताको प्राप्त भया है. अरु जो मूर्ख जीव हैं तिनहूने अपना पुरुषार्थ त्याग किया है, ताते संसारते मुक्त नहीं होता, पूर्वका जो कोऊ पापकर्म किया होता है तिसके मलिनताकरके पापमें धावता है, अपना पुरुषार्थ त्यागनेते अंध होजाता है अरु विशेषकरि धावता है.

जो श्रेष्ठ पुरुष है तिसको यह कर्तव्य है कि, प्रथम तो पांचों इंद्रियां वश करनी, शास्त्रअनुसार तिसको वर्त्तावनी, शुभ वासना दृढ करनी, अशुभका त्याग करना. यद्यपि त्यागनी दोनों वासना हैं. प्रथम

शुभ वासनाको इकट्ठी करनी अरु अशुभ त्याग करनी. जब शुद्ध वासनाकरके कषाय परिपक्क होवेंगे अर्थात् अंतःकरण जब शुद्ध होवेगा, तिस हृदयविषे संत अरु सत्शास्त्रका जो सिद्धांत है, तिसका विचार उत्पन्न होवेगा और ताते तुमको आत्मज्ञानकी प्राप्ति होवेगी. तिस ज्ञानद्वारा आत्माका साक्षात्कार होवेगा. बहुरि क्रिया ज्ञानकाभी त्याग होजावेगा. केवल शुद्ध अद्वैतरूप अपनाआप शेष भासेगा. ताते हे रामजी ! और सब कल्पनाका त्याग करि संतजन अरु सत्शास्त्रहूके अनुसार पुरुषार्थ करो.

इति श्रीयोगवासिष्ठे मुमुक्षुप्रकरणे कर्मविचारवर्णनं नाम नवमः सर्गः ॥ ९ ॥

दशमः सर्गः १० ।

अथ ज्ञानावतरणवर्णनम् ।

वसिष्ठ उवाच—हे रामजी ! मेरे वचनको ग्रहण करो, सो वचन बांधव जैसे है, बांधव कहिये जो तेरे परममित्र होवेंगे अरु दुःखहूते तेरी रक्षा करेंगे. हे रामजी ! यह जो मोक्षोपाय तुमको कहता हूं तिसके अनुसार तुम पुरुषार्थ करोगे तब तुम्हारा परमार्थ सिद्ध होवेगा अरु यह चित्त जो संसारके भोगकी ओर धावता है, तिस भोगरूपी खांडविषे चित्तको गिरने मत देहु. भोगको विरस जानिके त्याग देहु, वह त्याग तेरा परममित्र होवेगा, अरु त्यागभी ऐसा करहु जो बहुरि भोगहूका ग्रहण न होय.

हे रामजी! यह मोक्षोपायसंहिता है. चित्तको एकाग्र करके इसको श्रवण करो. तिसकरि परमानंदकी प्राप्ति होवेगी. प्रथम शम अरु दमको धारि, अर्थात् संपूर्ण संसारकी वासनाका त्याग करहु अरु उदारताकरके तृप्त रहना, इसका नाम शम है. अरु दम अर्थात् बाह्य इंद्रियको

वश करना. जब इसको प्रथम धारोगे तब परमतत्त्वका विचार आय उत्पन्न होवेगा. तिस विचारते विवेकद्वारा परमपदकी प्राप्ति होवेगी, जिस पदको पाय करि, बहुरि दुःख कदाचित् न होवेगा, अविनाशी सुख तुमको आय प्राप्त होवेगा ताते जो कछु मोक्षोपाय यह संहिता है तिसके अनुसार पुरुषार्थ करहु, तब आत्मपदको प्राप्त होवोगे पूर्ण जो कछु ब्रह्माजीने हमको उपदेश किया है, सो तुमको कहते हैं.

श्रीराम उवाच—हे मुनीश्वर! तुमको जो ब्रह्माजीने उपदेश किया था, सो किसकारण किया था अरु कैसे तुमने धारा सो कहो.

वसिष्ठ उवाच—हे रामचंद्र! शुद्ध चिदाकाश एक है अरु अनंत है, अविनाशी है, परमानंदरूप है, चिदानंदस्वरूप है, ब्रह्म है तिसविषे संवेदन स्पंदरूप होइ है, सो विष्णु होइ करि स्थित है, सो विष्णुजी कैसे हैं? जो स्पंद अरु निष्पंद विषे एकरस हैं. कदाचित् अन्यथाभावको नहीं प्राप्त हुए. जैसे समुद्रविषे तरंग उपजते हैं, तैसे शुद्ध चिदाकाशते स्पंदकरके विष्णु उत्पन्न हुए हैं. तिन विष्णुजीके स्वर्णवत् कर्णिकावोंवाले नाभिकमलते ब्रह्माजी प्रगट भये हैं. तिन ब्रह्माजीने ऋषि, मुनीश्वरसहित स्थावर जंगम प्रजा उत्पन्न करी, तिस मनोराज्य करि ब्रह्माजीने जगत्को उत्पन्न किया.

तिस जगत्के कोनविषे जो जंबूद्वीप, भरतखंड है, तिसविषे मनुष्यको दुःखकरि आतुर देखि करि, ब्रह्माजीको करुणा उपजी. जैसे पुत्रको देखि, पिताको करुणा उपजती है. तब तिसके सुखनिमित्त ब्रह्माजीने तप उत्पन्न किया, कि, सुखी होवे अरु आज्ञा करी कि, तप करो. तब तप करत भये, तिस तप करि स्वर्गादिकहूको जाय प्राप्त होने लगे; तिन सुखनको भोग करि, बहुरि गिरहिं, तब दुःखी रहे. ऐसे ब्रह्माजी देखि करि, सत्यवाक धर्मको प्रतिपादन करत भये, ति-

नके सुखके निमित्त आज्ञा करि तिस धर्मकी प्रतिपादना करि लोकहूको सुख प्राप्त होने लगे; तहां केताक काल सुखभोग करि; बहुरि गिरहिं; तब दुःखीके दुःखी रहे; बहुरि ब्रह्माजीने दानतीर्थादिक पुण्यक्रिया उत्पन्न करके, उनको आज्ञा करी कि, इनके सेवनेकरि तुम होहुगे. जब वह जीव उनको सेवने लगे. तब बडे पुण्यलोकहूको प्राप्त भये, अरु तिनके सुख भोगने लगे. बहुरि केताक काल अपने कर्मके अनुसार भोग भोगि गिरे; तब तृष्णाकरि बहुत सुखदुःखके अनुभव करते भये. अरु दुःखकरि आतुर हुवे; तब ब्रह्माजी देखत भये, जो जन्म अरु मरणके दुःखकरि महादीन होते हैं, ताते सोई उपाय करिये जिसकरि उनका दुःख निवृत्त होवे.

हे रामचंद्र! ब्रह्माजी विचारते भये, कि, इसका दुःख आत्मपद बिना निवृत्त नहीं होनेका; ताते आत्मज्ञानको उत्पन्न करिये, जो यह सुखी होवें. इसप्रकार विचार करि, आत्मतत्त्वका ध्यान करते भये. आत्मतत्त्वके ध्यानते संकल्प किया; तिस ध्यानके करनेते जो शुद्धतत्त्वज्ञान है, तिसकी मूर्ति होकरि मैं प्रकट भया. सो मैं कैसा हूं? ब्रह्माजीके समान हूं. जैसे उनके हाथविषे कमंडलु है, तैसे मेरे हाथविषे कमंडलु है; जैसे उनके कंठविषे रुद्राक्षकी माला है, तैसे मेरे कंठमें भी रुद्राक्षकी माला है; जैसे उनके ऊपर मृगछाला है, तैसे मेरे ऊपर मृगछाला है; इसप्रकार ब्रह्माजीका अरु मेरा समान आकार है, अरु मेरा शुद्धज्ञानस्वरूप है, मुझे जगत् कछु नहीं भासता. सुषुप्तिकी नाईं जगत् मुझको भासता है, तब ब्रह्माजीने विचार किया कि, इसको मैंने जीवोंके कल्याणनिमित्त उत्पन्न किया है; अरु यह तो शुद्धज्ञानस्वरूप है, अरु अज्ञानमार्गको उपदेश तब होवे, जब कछु प्रश्न उत्तर होवे, तब मिथ्याका विचार होवे.

हे रामजी! जीवोंके कल्याणनिमित्त मुझको ब्रह्माजीने गोदमें वि-

ठाया अरु शीशपै हाथ फेरा, तिस करि मैं शीतल होगया. जैसे चंद्र माकी किरणकरि शीतता होती है तैसे मैं शीतल भया. तब ब्रह्माजी मुझको जैसे हंसको हंस कहे, यों कहा कि-हे पुत्र! जीवोंके कल्याण-निमित्त एक मुहूर्तपर्यंत तुम अज्ञानको अंगीकार करो. श्रेष्ठ पुरुष जो सो दूसरेहूके निमित्तभी अंगीकार करते आये हैं. जैसे चंद्रमा बहुत निर्मल है, परंतु श्यामताको अंगीकार किये हैं तैसे तुमभी एक मुहूर्त्त अज्ञानको अंगीकार करो.

हे रामजी! इसप्रकार मुझको कहिकरि ब्रह्माजीने शाप दिया. कि-"तू अज्ञानी होवेगा." तब मैंने ब्रह्माजीकी आज्ञा मानि शापको अंगीकार किया. तब मेरा जो शुद्ध आत्मतत्त्व अपना आप था, तिसते मैं अन्यकी नाईं होता भया; मेरी स्वभावसत्ता मुझको विस्मरण हो गई अरु मेरा मन जागि आया. भाव अभावरूप जगत् मुझको भासने लगा. अरु आपको मैं वसिष्ठ जानत भया अरु ब्रह्माजीका पुत्र यों जानत भया. अरु नानाप्रकारके पदार्थसहित जगत् जानत भया अरु तिनकी ओर चंचल होत भया, तब मैं संसारजालको दुःखरूप जानि करि, ब्रह्माजीते पूछा भया कि-हे भगवन्! यह संसार कैसे उत्पन्न भया अरु कैसे लीन होता है? हे रामजी! जब इसप्रकार पिता ब्रह्माजीसों प्रश्न किया, तब भली प्रकार मुझको उपदेश करत भये; तिसकरि मेरा अज्ञान नष्ट होगया. जैसे सूर्यउदय हुवे तम निवृत्त होजाता है, तैसे मेरा अज्ञान निवृत्त होगया, अरु मैं शुद्धताको प्राप्त भया. जैसे आदर्शको मार्जन करता है अरु शुद्ध हो आवता है, तैसे मैं शुद्ध हुआ.

हे रामजी! मैं ब्रह्माजीसेभी अधिक होता भया, तब मुझको परमेष्ठी ब्रह्माजीने आज्ञा करी कि-हे पुत्र! जंबूद्वीप भरतखंडमें जावो तुमको सृष्टिपर्यंतविषे अधिकार है, तहां जाइकरि, जीवोंको उपदेश करहु, जिसको संसारके सुखकी इच्छा होवे, तिसको कर्ममार्गका

उपदेश करना; तिसकरि स्वर्गादिक सुख होवें. अरु संसारते विरक्त होवे और जिसको आत्मपदकी इच्छा होवे, तिसको ज्ञानउपदेश करना, ताते तुम अब भुवर्लोकविषे जाहु. हे रामजी ! इसप्रकार मेरा उपदेश अरु उपजना हुवा है अरु उसप्रकार आना हुवा है.

इति श्रीयोगवासिष्ठे मुमुक्षुप्रकरणे ज्ञानावतरणं नाम दशमः सर्गः ॥ १० ॥

एकादशः सर्गः ११।

अथ वसिष्ठोपदेशवर्णनम्।

वसिष्ठ उवाच—हे रामजी ! इसप्रकार पृथ्वीविषे मेरा आना भया. मैं कैसा हूं ? जाको आत्मज्ञानकी वांछा होवे सो पूर्ण करिवेके लिये ब्रह्माजी मुझको उत्पन्न करत भये.

श्रीराम उवाच—हे मुनीश्वर ! तिस ज्ञानकी उत्पत्तिते अनंतर जीवनकी शुद्धि कैसी भई, सो कहो.

वसिष्ठ उवाच—हे रामजी ! जो शुद्ध आत्मतत्व है तिसका स्वभावरूप संवेदन स्फूर्ति है; सो ब्रह्माजीरूप होकर, स्थित भई है. जैसे समुद्र अपनी द्रवताकरके तरंगरूप होता है, तैसे ब्रम्हाजी भये हैं. वहुरि संपूर्ण जगत्को उत्पन्न किया अरु तीनों काल उत्पन्न किये, तब केताक काल व्यतीत हुवा; अरु कलियुग आया; तिसकरि जीवोंकी बुद्धि मलीन होगई, अरु पापविषे विचरने लगे, शास्त्र वेदकी आज्ञा माननेते रहगये. इसप्रकार धर्मकी मर्यादा छिपगई अरु पाप प्रकट भया. जेती कछु राजधर्मकी मर्यादा थी, सो सब नष्ट होगई अरु अपनी इच्छाके अनुसार जीव विचरने लगे, ताते कष्ट पानेलगे, तिनको देखकर, ब्रह्माजीको करुणा उपजी, तिस दयाको धारि करि भूलोकविषे मुझको भेजा अरु कहा कि-हे पुत्र ! जायकरि, तुम धर्मकी मर्यादा स्थापन करो अरु जीवनको शुद्ध उपदेश करो. जिसको

भोगहीकी इच्छा होवे,तिसको कर्मकांडका उपदेश करना. और जप, तप, स्नान, संध्या यज्ञादिकका उपदेश करना. अरु जो संसारते विरक्त हुआ है अरु मुमुक्षु है, जाको परमपद पानेकी इच्छा है, तिसको ब्रह्मविद्याका उपदेश करना.

हे रामचंद्र! जिसप्रकार ब्रह्माजी मुझको आज्ञा करि भूमिलोकविषे भेजते भये, तैसेही सनत्कुमार नारदकोहू कहते भये, तब हम सब ऋषीश्वर इकट्ठे होकर, विचारते भये, कि, जगतकी मर्यादा किस प्रकार होवे अरु जीव शुभमार्गविषे कैसे विचरहीं ? तब हमने यह विचार किया, कि–प्रथम राज्यका स्थापन करना जो जीव तिसकी आज्ञा अनुसार विचरहीं. प्रथम दण्डकर्ता राजा स्थापन किया. सो कैसा राजा ? जो बड़ा वीर्यवान् अरु तेजमान्, बड़ा उदारआत्मा भया-तिस राजाहूको हमने आध्यात्मिक विद्याका उपदेश किया, तिसकरि परमपदको प्राप्त भया. जो परमानंदरूप अविनाशी पद है, सो ब्रह्मउपदेश तिसको भया, तब सुखी भये. इस कारणते ब्रह्मविद्याका नाम राजविद्या है. तब हमहूने वेद, शास्त्र, श्रुति, पुराणकरि धर्मकी मर्यादा स्थापन करी, सो जप तप, यज्ञ, दान, स्नान आदिक क्रियाको प्रगट कीनी. अरे जीवो ! तुम इसके सेवनेकरि सुखी होवोगे, तब सब फलको धारि करि, तिनको सेवने लगे, तामें कोऊ विरला निरहंकार-हृदय शुद्धताके निमित्त कर्म करता था.

हे रामजी ! जो मूर्ख हैं सो कामनाके निमित्त मनमें फूलके कर्म करते हैं. सो घटीयंत्रकी नाई भटकते फिरते हैं. सो कबहूं ऊर्ध्व अरु कबहूं नीचे आते हैं और जो निष्काम करते हैं तिनका हृदय शुद्ध होता है, फिर सो ब्रह्मविद्याके अधिकारी होते हैं, ताके उपदेशद्वारा आत्मपदकी प्राप्ति होती है. इस प्रकारसों जीवन्मुक्त हुवे हैं, कई राजा प्रसिद्ध हुवे हैं, सो राजाओंकी परंपरा चलावते हमारे उपदेशद्वारा ज्ञा-

नको प्राप्त भये हैं और राजा दशरथहु ज्ञानवान् भये हैं और तुमभी इसी दशाको आयके प्राप्त हुए हो, सो तुम सबते श्रेष्ठ हुए हो. जैसे तुम विरक्त आत्मा हुए हो, तैसे आगेहु स्वाभाविक विरक्त आत्मा भये हैं सो स्वभावकर देह शुद्धिकर हुये हैं इसीकारणते तुम श्रेष्ठ हो. जो कोऊ अनिष्ट दुःख प्राप्त होता है, तिसकर विरक्तता उपजती है, सो तुमको नहीं भई, तुमको सब इंद्रियनके विषय विद्यमान हैं, तैसे होते तुम्हारेको वैराग्य हुआ है, ताते तुम श्रेष्ठ हो.

हे रामजी! जो श्मशान–आदिक कष्टके स्थान कहे तिन ठिकानोंमें सबको वैराग्य उपजता है. "कछु नहीं! मरजाना है!" तिनमें जो कोऊ श्रेष्ठ पुरुष होता है, सो वैराग्यको दृढ कर रखता है और जो मूर्ख है सो फिर विषयमें आसक्त होजाता है, ताते जिनके अकारण वैराग्य उपजता है सो श्रेष्ठ है. हे रामजी! जो श्रेष्ठ पुरुष है, सो अपने वैराग्य अरु अभ्यासके बलकरके संसारबंधनते मुक्त होजाते हैं. जैसे हस्ती बंधनको तोरके अपने बलसों निकस जाता है, तब सुखी होता है तैसे वैराग्य अभ्यासके बलकर बंधनते ज्ञानी मुक्त होते हैं.

हे रामजी ! यह संसार बडा अनर्थरूप है; जिस पुरुषने अपने पुरुषार्थकरके बंधनको नहीं तोडा, तिसको रागद्वेषरूपी अग्नि जलाता है; अरु जिन पुरुषोंने अपने पुरुषार्थकरके शास्त्र और गुरुको प्रमाणकरके ज्ञान साधा है सो उस पदको प्राप्त भये हैं तिनको आध्यात्मिक आधिदैविक, आधिभौतिक ताप जलाय सक्ता नहीं. जैसे वर्षाकालमें बहुत वर्षाके होते वनको दावानल जलाय नहीं सक्ता तैसे ज्ञानीको आध्यात्मिक–आदि ताप कष्टको नहीं देते.

हे रामजी! जिन श्रेष्ठ पुरुषोंने संसारको विरस जानकर, त्याग किया है, तिनको संसारका पदार्थ गिराय नहीं सक्ता अरु जो मूर्ख हैं, तिनको गिराय देते हैं. जैसे अंध्यारी चलत पवनके वेगसों वृक्ष गिर जाते हैं परंतु कल्पवृक्ष गिरता नहीं. तैसे हे रामजी! श्रेष्ठ पुरुष वही है

जिसको संसार विरस होगया है, सो केवल आत्मतत्त्वकी इच्छा करके तिसपरायण भये हैं तिनकोही ब्रह्मविद्याका अधिकार है सोई उत्तम पुरुष है. हे रामजी! तुमभी तैसे उज्ज्वलपात्र हो. जैसे कोमल पृथ्वीमें बीज बोते हैं तैसे तुमको मैं उपदेश करता हूं और जिसको भोगकी इच्छा है और जो संसारकी ओर यत्न करता है सो पशुवत् है. श्रेष्ठ पुरुष वही है; जिसको संसार तरनेका पुरुषार्थ होता है.

हे रामजी! प्रश्न तिनके पास करिये, और तिनको जानिये किये मेरे प्रश्नका उत्तर देनेको समर्थ हैं और जिसमें उत्तर देनेकी सामर्थ्य दीखनेमें नहीं आवे, तिससों प्रश्न करना नहीं. और उत्तर देनेको जो समर्थ देखिये और तिसके वचनमें भावना न होय. तबभी तिससों प्रश्न न करिये. काहेते कि, दंभकर प्रश्न करनेमें पाप होता है, और गुरुभी उपदेश तिनको करता है, जो संसारते विरक्त, अरु केवल आत्मपरायण होनेकी श्रद्धा होवे; अरु आस्तिकभाव होवे, ऐसा पात्र देखके, उपदेश करे. हे रामजी! जो गुरु अरु शिष्य दोनों उत्तम होते हैं, तब वचन शोभते हैं. तुम उपदेशके शुद्ध पात्र हो. जेते कछु गुण शिष्यके शास्त्रमें वर्णन किये हैं सो सब तुम्हारेमें मिलते हैं. और मैं उपदेश करनेमें समर्थ हूं, ताते कार्य्य शीघ्र होवेगा.

हे रामजी! शुभगुणसाथ तुम्हारी बुद्धि निर्मल हो रही है. मेरा जो सिद्धांतका सार वचन है सो तुम्हारे हृदयमें प्रवेश कर रहेगा. जैसे उज्ज्वल वस्त्रको केशरका रंग शीघ्र चढ़ जाता है, तैसे तुम्हारे निर्मल चित्तको उपदेशका रंग लगेगा. जैसे सूर्यके उदयते सूर्यमुखी कमल खिलते हैं तैसे तेरी बुद्धि शुभगुणकर खिल आई है. हे रामजी! जो कछु शास्त्रका सिद्धांत आत्मतत्त्व मैं तुमको कहता हूं, तिसमें तुम्हारी बुद्धि शीघ्र प्रवेश करेगी. जैसे निर्मल जलमें सूर्यकी कांति प्रवेश करती है, तैसे तुम्हारी बुद्धि आत्मतत्त्वमें शुद्धता करके प्रवेश करेगी.

हे रामजी! मैं तुम्हारे आगे हाथ जोडके प्रार्थना करता हूं कि, जो

कछु मैं तुझको उपदेश करता हूं, तिसविषे तुम आस्तिकभावना करियो जो इन बचनकर मेरा कल्याण होवेगा, अरु जो तुमको धारणा न होवे तो प्रश्न मत करना, जो शिष्यको गुरुके वचनमें आस्तिक भावना होती है, तिसका शीघ्र कल्याण होता है, ताते मेरे वचनमें आस्तिक भावना करिये; और जिसकर तू आत्मपदको प्राप्त होवेगा सो मैं कहता हूं, प्रथम तो जो अज्ञानी जीवमें असत्य बुद्धि है तिसका संग त्याग कर, अरु मोक्षद्वारके जो चार द्वारपाल हैं, तिनसों मित्रभावना कर· जब तिनसों मित्रभाव होयगा, तब वह मोक्षद्वारमें पहुंचाय देयँगे; तब आत्मदर्शन तुमको होवेगा. सो द्वारपालोंके नाम श्रवण करो· शम, संतोष, विचार और सत्संग, ये चारों द्वारपाल हैं; जिन पुरुषोंने इनको वश किया है, तिसको यह शीघ्र मोक्षरूपी द्वारके अंतर कर देते हैं. हे रामजी ! जो चारों वश न होवें तो तीनको वश करो अथवा दोको वश करलो अथवा एकको वश करो. जो एक वश होवेगा, तो चारों वश हो जायँगे इन चारोंका परस्पर स्नेह है; जहां एक आता है तहां चारों आके रहते हैं. जिन पुरुषोंने इनसों स्नेह किया है सो सुखी भये हैं; और जिनने इनका त्याग किया है, सो दुःखी भये हैं. हे रामजी ! यद्यपि प्राणका त्याग होवे तोभी एक साधन तो बलकरके वश करना, एकके वश कियेते चारोंही वशी होयँगे. अरु तुम्हारी बुद्धिमें शुभ गुणोंने आयके निवास किया है, जैसे सूर्यमें सब प्रकाश आये हुवे हैं तैसे संतने अरु शास्त्रने जो निर्मल गुण कहे हैं, सो सब तुम्हारेमें मिलते हैं. हे रामजी ! अब तुम मेरे वचनके अधिकारी भये हो. जैसे चंद्रमाके उदयते चंद्रमुखी कमल खिल आते हैं, तैसे शुभगुणकर तुह्मारी बुद्धि खिलआईहै. हे रामजी ! सत्संग अरु सतशास्त्रद्वारा बुद्धिको तीक्ष्ण कियेते शीघ्र आत्मतत्त्वमें प्रवेश होता है, ताते श्रेष्ठ पुरुष वही है, जिसने संसारको विरस जानके त्याग किया है; अरु संत अरु सतशास्त्रके वचनद्वारा आत्मपद पानेका यत्न करता है, सो अविनाशी पदको प्राप्त होता है..

और जो संसारका त्याग करके, संसारकी ओर लगे हैं, सो महामूर्ख जड़ हैं. जैसे जल शीतलता करके बर्फ हो जाता है, तैसे अज्ञानी मूर्खताकरके आत्ममार्गते जड हो रहे हैं. हे रामजी ! अज्ञानीके हृदयरूपी बिलमें दुराशारूपी सर्प रहता है, सो कदाचित् शांति नहीं पाता अरु आनंदसों कबहूं प्रफुल्लित नहीं होता. अरु आशा करके सदा संकुचित रहता है. हे रामजी ! आत्मपदके साक्षात्कारमें विशेष आवरण आशाही है. जैसे सूर्यके आगे मेघका आवरण होता है, तैसे आत्मतत्वके आगे दुराशा आवरण है. जब आशारूपी आवरण दूर होवे, तब आत्मपदका साक्षात्कार होवे. हे रामजी ! आशा तब दूर होवे, जब संतकी संगति अरु सत्शास्त्रका विचार होवे.

हे रामजी! संसाररूपी एक बड़ा वृक्ष है, सो बोधरूपी खड्गकर छेदा जाता है जब सत्संग अरु सत्शास्त्रकर तीक्ष्ण बुद्धि होवे, तब संसाररूपी भ्रमका वृक्ष नष्ट हो जाता है. जब शुभ गुण होते हैं, तब आत्मज्ञान आके विराजता है. जहां कमल होते हैं, तहां भौंरे आके स्थित होते हैं. तब शुभ गुणोंमें आत्मज्ञान रहता है. हे रामजी ! शुभ गुणरूप पवनकर जब इच्छारूपी मेघ निवृत्त होता है, तब आत्मरूपी चंद्रमाका साक्षात्कार होता है. जैसे चंद्रमाके उदय हुवे आकाश शोभता है, तैसे आत्माके साक्षात्कार हुवे तेरी बुद्धि खिलेगी.

इति श्रीयोगवासिष्ठे मुमुक्षुप्रकरणे वसिष्ठोपदेशो नाम एकादशः सर्गः ॥ ११ ॥

द्वादशः सर्गः १२।

अथ तत्त्वज्ञमाहात्म्यवर्णनम् ।

वसिष्ठ उवाच—हे रामजी ! अब तुम मेरे वचनके अधिकारी हो. काहेते कि, तप, वैराग्य, विचार, संतोष--आदि जो शुभ गुण संत

अरु शास्त्रके कहे हैं, सो सब तुम्हारेमें मिलते हैं, ताते तुम मेरे वचनको सुनो, रजतमगुणको त्याग कर, शुद्ध सात्विकवान् होकर सुनो. राजस जो विक्षेप अरु तामस जो लय निद्रामें होता है सो दोऊका त्याग करके सुनो. जेते कछु जिज्ञासु गुण शास्त्रमें वर्णन किये हैं, तिन सबकर तुम संपन्न हो अरु जेते कछु गुरुके गुण शास्त्रमें वर्णन किये हैं सो सब मेरेमें हैं. जैसे रत्ननकर समुद्र संपन्न है तैसे मैं संपन्न हूं· ताते मेरे वचनके तुम अधिकारी हो और मूर्खको मेरे वचनका अधिकार नहीं. हे रामजी ! जैसे चंद्रमाके उदयते चंद्रकांतमणि द्रवीभूत होती है, तब तामेंते अमृत झरता है और पत्थरकी शिला है तिसते तामें द्रवीभूत नहीं होता है, तैसे जो जिज्ञासु होता है तिसको परमार्थ वचन लगता है अरु उपदेश करनेहारा ज्ञानवान् न होवे तो उसको आत्माका साक्षात्कार नहीं होवे· चंद्रमुखी कमलिनी निर्मल होय अरु चंद्रमा न होय तब प्रफुल्लित नहीं होती. तैसे तुम मोक्षका पात्र हो अरु मैंभी गुरु हूं; मेरे उपदेशकर तुम्हारा अज्ञान नष्ट हो जावेगा.

मैं मोक्षका उपाय कहता हूं जब तिसको तुम भले प्रकार विचारोगे, तब जेती कछु मलीन मनकी वृत्ति है तिसका अभाव होजायगा. जैसे महाप्रलयके सूर्यकर मंदराचल पर्वत जल जाता है; ताते हे रामजी! वैराग्य अरु अभ्यासके बलकर इस मनका अपने विषे लीनकर शांतात्मा होवहु· तुमने बाल्यावस्थासों लेकर अभ्यास कर रक्खा है, ताते तुम्हारा मन उपशम पायके, आत्मपदको प्राप्त होवेगा· हे रामजी! सत्संग अरु सतशास्त्रद्वारा जिन्होंने आत्मपद पाया है, सो सुखी भये हैं, फिर तिनको दुःख नहीं लगता. काहेते, जो दुःख देहाभिमानकर होता है, सो देहका अभिमान तो उन्होंने त्याग दिया है, तैसे जिसने देहका अभिमान त्याग दिया है, अरु देहका आत्मताकरके बहुरि ग्रहण नहीं करता ताते सुखी रहता है. हे रामजी ! जिन्होंने आत्माका बल धरके, विचारद्वारा आत्मपदको पाया है, सो अकृत्रिम आनंदकर

सदा पूर्ण हैं, सब जगत् तिनको आनंदरूप भासता है. अरु जो असम्यग्दर्शी हैं, तिनको जगत् अनर्थरूप भासता है. हे रामजी! संसरणरूप जो यह संसारसर्प है, सो अज्ञानीके हृदयमें दृढ होगया है, सो योगरूपी गारुडमंत्रकरके नष्ट हो जाता है अन्यथा नहीं होता. और सर्पका विष है सो एक जन्ममें मरता है अरु संसाररूपी जो विष है, तिसकरके अनेक जन्मपायके मरता चला जाता है, शांतिवान् कदाचित् नहीं होता हे रामजी! जिन पुरुषोंने सत्संग अरु सत्शास्त्रके वचनद्वारा आत्मपदको पाया है सो आनंदित भये हैं अरु अंतरबाहिर सब जगत् इनको आनंदरूप भासता है. अरु सब क्रिया करनेमें आनंदविलास है. और जिनने सत्संग अरु सत्शास्त्रका विचार त्यागा है अरु संसारके सन्मुख हैं तिसकर तिनको संसार अनर्थरूप है. सो ऐसा दुःख देता है कि, जैसे सर्पके दंशते दुःखी होते हैं अरु शस्त्रकर घायाल होते हैं अरु अग्निमें पारेकी नाई जलते हैं अरु जेवरीके साथ बँधजाते हैं अरु अंधकूपमें गिरनेते कष्ट पाते हैं तैसे संसारमें मनुष्य दुःख पाते हैं, हे रामजी ! जिन पुरुषोंने सत्संग अरु सत्शास्त्रद्वारा आत्मपदको नहीं पाया, सो ऐसे कष्ट पाते हैं. जो नरकरूपी अग्निमें जरते हैं, अरुत्रिके विष पीते हैं, पाषाण वर्षाकर चूर्ण होते हैं, कोल्हूमें पीस डारते हैं अरु शस्त्रसाथ कटते हैं, इत्यादिक जो बडे कष्ट हैं सो तिनको प्राप्त नहीं होते हैं हेरामजी ! ऐसा दुःख कोऊ नहीं जो इस जीवको प्राप्त नहीं होता. आत्माके प्रमादसों सब दुःख होते हैं, अरु जिन पदार्थोंको यह रमणीय जानते हैं, सो चक्रकी नाई चंचल हैं कबहूं स्थिर नहीं रहते. सन्मार्गको त्यागकर जो इनकी इच्छा करते हैं, सो महा दुःखको प्राप्त होते हैं, अरु जिन पुरुषोंने संसारको विरस जाना है और पुरुषार्थकी तरफ दृढ भये हैं, तिनको आत्मपदकी प्राप्ति होती है.

हे रामजी ! जिन पुरुषोंको आत्मपदकी प्राप्ति भई है, तिनको फिर दुःख नहीं होता और तिनके दुःख जो नष्ट नहीं होते, तो ज्ञानके नि-

मित्त पुरुषार्थ कोऊ नहीं करता. जो अज्ञानी हैं तिनको संसार दुःखरूप है; अरु ज्ञानीको सब जगत् आनंदरूप है. अपने आपही है, उनको भ्रम कोऊ नहीं रहता. हे रामजी! ज्ञानवान्में नानाप्रकारकी चेष्टाभी दृष्टि आती हैं, तौभी सदा शांतरूप हैं,अरु आनंदरूप है,संसारका दुःखकोऊ नहीं स्पर्श कर सक्ता; काहेते कि, तिसने ज्ञानरूपी कवच पहिरा है.

हे रामजी! ज्ञानवान्कोभी दुःख होता है. बडे बडे ब्रह्मर्षि अरु राजर्षि बहुत ज्ञानवान् भये हैं, सोभी दुःखको प्राप्त होते हैं, परंतु दुःखसों आतुर नहीं होते; क्योंकि जो ज्ञानवान्ने ज्ञानका कवच पहिरा है ताते कोऊ दुःख स्पर्श नहीं करता, सदा आनंदरूप है. जैसे ब्रह्मा, विष्णु और रुद्र, नानाप्रकारकी चेष्टा करते जीवको दृष्टि आवते हैं, अरु अंतरते सदा शांतरूप हैं इसप्रकार औरभी जो ज्ञानवान् उत्तम पुरुष हैं सो शांतरूप हैं,तिनको कर्त्ताका अभिमान कोऊ नहीं फुरता.हे रामजी! अज्ञानरूपी जो मेघ है तिसकर मोहरूपी कुडाला वृक्ष है, सो ज्ञानरूपी शरत्कालकरके नष्ट होजाता है, ताते स्वसत्ताको प्राप्त होवे है अरु सदा आनंदकर पूर्ण है. हे रामजी! जो कछु क्रिया करते हैं, सो तिनको विलासरूप है, अरु सब जगत् आनंदरूप है अरु शरीररूपी रथ, इंद्रियरूपी अश्व और मनरूपी रस्सी, तासों अश्वको खैंचता है, अरु बुद्धिरूपी रथवाही है, तिस रथमें यह पुरुष बैठा है, अरु इंद्रियरूपी अश्व इसको खोटे मार्गमें डारते हैं. अरु ज्ञानवान्के इंद्रियरूपी अश्व हैं सो ऐसे हैं कि, जहां जाते हैं. तहां आनंदरूप हैं किसी ठौरमें खेद नहीं पाता. सब क्रियामें उनको विलास है, सर्वदा आनंदकर तृप्त रहते हैं.

इति श्रीयोगवासिष्ठे मुमुक्षुप्रकरणे तत्त्वज्ञमाहात्म्यं नाम

द्वादशः सर्गः ॥ १२ ॥

त्रयोदशः सर्गः १३।

अथ शमवर्णनम्।

वसिष्ठ उवाच—हे रामजी ! इसी दृष्टिको आश्रयकर जो हृदय पुष्ट होवे, बहुरि संसारके इष्ट अनिष्ट कर्मकर चलायमान न होवे जिन पुरुषोंको इसप्रकार आत्मपदकी प्राप्ति भई है सो परमआनंदित भये हैं, शोकके कर्त्ता नहीं हैं. न याचना करता है. उपाधिते रहित परम शांतिरूप अमृतकर पूर्ण होय रहे हैं, सो पुरुष नानाप्रकारकी चेष्टा करते दृष्टि आते हैं, परंतु कछु नहीं करते. जहां उनके मनकी वृत्ति जाती है, तहां आत्मसत्ता भासती है, सो आत्मानंदकर पूर्ण होय रहे हैं. जैसे पूर्णमासीका चंद्रमा अमृतकरि पूर्ण रहता है, तैसे ज्ञानवान् परमानंदकरि पूर्ण रहता है. हे रामजी ! यह जो मैंने तुमको अमृतरूपी वृत्ति कही है इसको जब जानोगे तब तुमको साक्षात्कार होवेगा. जब जिसको आत्मज्ञानकी प्राप्ति होती है, तब सब दुःख नष्ट होजाते हैं. जैसे चंद्रमाके मंडलमें अंधकार नहीं होता तैसे ज्ञानी-को अशांति कबहू नहीं होती और जो कछु क्रिया करता है, तिसमें दुःख पाता है. जैसे कंकरके वृक्षमें कंटककी उत्पत्ति होती है, तैसे अज्ञानीको दुःखकी उत्पत्ति होती है.

हे रामजी ! इस जीवको मूर्खताकरके बड़े दुःख प्राप्त होते हैं. ऐसा अद्भुत दुःख और कोऊ नहीं, अरु किसी आपदाकरके ऐसा नहीं होता, जैसा दुःख मूर्खताकरके पाते हैं ऐसा दुःख कोऊ नहीं. हे रामजी! हाथमें ठीकरा ले, चांडालके घरकी भिक्षा ग्रहण करे और आत्मतत्वकी जिज्ञासा होवे, तौभी और ऐश्वर्यते श्रेष्ठ है, परंतु मूर्खतासों जीवना व्यर्थ है, तिस मूर्खताको दूर करनेको मोक्ष उपाय मैं कहताहूं.

हे रामजी ! यह मोक्ष उपाय परमबोधका कारण है, कछुक बुद्धि संस्कृत होवे अर्थात् जो पदपदार्थके जाननेहारी होवे अरु मोक्षउपाय

शास्त्रको विचारे, तो तिसकी मूर्खता नष्ट हो जावेगी. अरु आत्मपदकी प्राप्ति होवेगी. जैसा आत्मबोधका कारण यह शास्त्र है, तैसे और शास्त्र त्रिलोकीविषे कोऊ नहीं. नानाप्रकारके दृष्टांतसहित इतिहास हैं जामें, तिसको जब विचारोगे तब परमानंदको प्राप्त होवोगे. अज्ञानरूपी तिमिर नाश करनेको ज्ञानरूपी शलाका है. जैसे अंधकारको सूर्य नाश करता है तैसे अज्ञानको यह शास्त्रका विचार नाश करता है. हे रामजी! जिसप्रकार इसका कल्याण होता है सो श्रवण करो. गुरु जो ज्ञानवान् है सो शास्त्रका उपदेश करे अरु अपने अनुभवसों ज्ञान पावे. जब गुरु अरु शास्त्र और अपना अनुभव ये तीनों इकट्ठे मिलें तब इसका कल्याण होवे. जबलग अकृत्रिम आनंदको प्राप्त नहीं भया, तबलग दृढ अभ्यास करे. तिस अकृत्रिम आनंदको प्राप्ति करनेहारा मैं गुरु हूं. जीवमात्रका मैं परममित्र हूं ऐसा मित्र और कोई नहीं. हमारी संगति जीव जो आनंद प्राप्त करनहारी है, ताते जो कछु हम कहते हैं सो तुम करो.

हे रामजी! यह जो संसारके भोग हैं, सो क्षणमात्रके हैं. ताते इनको त्याग करहु और विषयके परिणाममें दुःख अनंत हैं, इनको दुःखरूप जानकर, त्याग देवे. अरु हमसरीखे ज्ञानवानोंका संग करो और हमारे वचनके विचारते तुम्हारे सब दुःख नष्ट होजायँगे. हे रामजी! जिस पुरुषने हमारे संग प्रीति करी है, तिसको हमने आनंदकी प्राप्ति कर दीनी है, जिस आनंदते ब्रह्मादिक आनंदित भये हैं और ज्ञानवानहू आनंदित भये हैं, सो निर्दुःख पदको प्राप्त भये हैं. हे रामजी! श्रेष्ठ पुरुष सोई है जाने हमारे साथ प्रीति कीनी है. जिसने संत अरु शास्त्रके विचारद्वारा दृश्यको अदृश्य जाना है अरु निर्भय हुवा है आत्माका प्रमाद जीवको दीन करता है. अज्ञानीका हृदयरूपी कमल तबलग सकुचा रहता है, जबलग तृष्णारूपी रात्रि होती है. जब ज्ञानरूपी सूर्य उदय होता है, तब तृष्णारूपी रात्रि नष्ट होजाती है, अरु हृदयरूपी कमल आनंदकर खिलि आते हैं.

हे रामजी ! जिन पुरुषोंने परमार्थको त्यागा है; अरु संसारके खान--पान आदि भोगोंमें मग्न हुवे हैं, तिनको तू मेंढ़क जान, जैसे कीचमें मेंढक पडा शब्द करता है, तैसा वह पुरुष है. हे रामजी ! यह संसार वडा आपदाका समुद्र है, तामें जो कोऊ श्रेष्ठ पुरुष है, सो सत्संग अरु सच्छास्त्रके विचारकरके संसारसमुद्र उल्लंघता है अरु परमानंदको प्राप्त होता है. आदि, अंत और मध्यरहित निर्भय पदको प्राप्त होता है. अरु जो संसारसमुद्रके संमुख हुवा है, सो दुःखते दुःखरूप पदको प्राप्त भया है, कष्टते कष्ट और नरकते नरकको प्राप्त होता है. जैसे विषको विष जान तिसका पान करता है, सो विष उसको नाश करता है, तैसे जो पुरुष संसार असत्य जानके, वहुरि संसारकी ओर यत्न करता है अरु मृत्युको प्राप्त होता है. हे रामजी ! जो पुरुष आत्मपदते विमुख है अरु आत्मपदको कल्याणरूप जानता है अरु आत्मपदको अभ्यासका त्याग कर संसारकी ओर धावता है; सो जैसे किसीके घरमें अग्नि लगी, अरु तृणका घर, अरु तृणकी शय्या करिके शयन करता है, सो जैसे नाशको पावे तैसे जन्म मृत्युको प्राप्त होवेंगे. और संसारके पदार्थ देखकर, राग दोषवान् हुवे हैं सो सुख विजरीका चमका जैसा है; क्योंकि, जो होके मिटजावे, स्थिर नहीं रहे तैसा संसारका दुःख आगमापायी है.

हे रामजी ! यह संसार अविचार करके भासता है, अरु विचार कियेते लीन होजाता है. विचार कियेते लीन जो न होता, तो तुमको उपदेश करनेका काम नहीं था सो तो विचार कियेते लीन होजाता है. इसी कारणते पुरुषार्थ चाहिये. जैसे हाथमें दीपक होवे अरु अंधकूपमें गिरे सो मूर्खता है, तैसे संसारके भ्रमके निवारणहारे गुरु शास्त्र विद्यमान हैं, तिनको शरण न आवे सो मूर्ख है. हे रामजी ! जिन पुरुषोंने संतकी संगति अरु सच्छास्त्रके विचारद्वारा आत्मपदको पाया है, सो पुरुष केवल कैवल्यभावको प्राप्त भये, अर्थात् शुद्धचैतन्यको प्राप्त हुवे हैं. अरु संसारभ्रम तिनका निवृत्त होगया है.

हे रामजी ! यह संसार मनके स्मरणते उपजा है, सो इसका कल्याण बांधवकरके नहीं होता है; अरु, धनकरकेभी नहीं होता है; प्रजाकरकेभी नहीं होता है अरु तीर्थ अरु देवद्वारकरकेभी नहीं होता है. ऐश्वर्यकरकेभी नहीं होता है, एक मनके जीतनेते कल्याण होता है. हे रामजी ! जिसको ज्ञानी परमपद कहते हैं और जिसको रसायन कहते हैं, जिसके पायेते इसका नाश नहीं होय अरु अमर होवे अरु सब सुखकी पूर्णता होवे, इसका साधन शमता अरु संतोष है, इनकर ज्ञान उत्पन्न होता है सो आत्मज्ञानरूपी एक वृक्ष है, तिसका फूल शांति है अरु स्थिति इसका फल है. जिस पुरुषको यह ज्ञान प्राप्त हुवा है, सो शांतिवान् हुवा है; सो निर्लेप रहता है, तिसको संसारका भावाभावरूप स्पर्श नहीं होता है. जैसे आकाशमें सूर्य उदय होता है, तब जगत्की क्रिया होती हैं, फिर जब सो अदृश्य होता है, तब जगत्की क्रियाभी लीन होजाती हैं. जैसे तिन क्रियावोंके होने न होनेमें आकाश ज्योंका त्यों है, तैसे ज्ञानवान् सदा निर्लेप है, तिस आत्मज्ञानकी उत्पत्तिका उपाय यह मेरा श्रेष्ठ शास्त्र है.

हे रामजी ! जो पुरुष इस मोक्षोपाय शास्त्रको श्रद्धासंयुक्त पढे अथवा सुने तो वाही दिनसों मोक्षका भागी होय रहे. अरु मोक्षके चार द्वारपाल हैं सो हम तुमको कहते हैं. सो इनमेंते एकहू जब अपने वश होय तब मोक्षद्वारमें इसका शीघ्र प्रवेश होवे, सो चारोंका नाम कहों सो सुनो. हे रामजी ! यह शम इसको परमविश्रामका कारण है अरु यह संसार जो दीखता है, सो मरुस्थलकी नदीवत् है, इसको देखकर मूर्ख अज्ञानरूपी जो मृग है सो सुखरूपी जल जानकर दौड़ता है अरु शांतिको नहीं प्राप्त होता. जब शमरूपी मेघकी वर्षा होवे, तब सुखी होवे. हे रामजी ! शम परमआनंद है अरु शम परमपद है और शिवपद है. जिस पुरुषने शम पाया है सो संसारसमुद्रते पार हुवा है, तिसको पुत्र मित्र होजाते हैं. हे रामजी! जबी चंद्रका उदय होता है, तब

अमृतके कण फूटते हैं अरु शीतलता होती है. तैसे जिसके हृदयमें शमरूपी चंद्रमा उदय होता है, तिसके सब ताप मिट जातेहैं अरु परम शांतिमान् होता है.हे रामजी! यह शम देवतावोंके अमृतसमान है, वही परम अमृत है. शमकरके इसको परम शोभा प्राप्त होती है. जैसे पूर्णमासीके चंद्रमाकी कांति परम उज्ज्वल होती है, तैसे शमको पायके, उसकी उज्ज्वल कांति होती है. जैसे विष्णुके दो हृदय हैं, सो एक तो अपने शरीरमें है, दूसरा संतोंमें है, तैसे इसके दो हृदय होते हैं, एक अपने शरीरमें है, दूसरा शमभी इसका हृदय होता है. ऐसा आनंद अमृतके पान कियेतेहू नहीं होता अरु लक्ष्मीकी प्राप्तितेभी नहीं होता जो आनंद शमवान्को होता है.

हे रामजी! प्राणहूतेभी प्रिय कोई होवे, सो अंतर्ध्यान कर फिर प्राप्त होवे, तैसा आनंद नहीं होवे ऐसा आनंद शमवान्को होवे तिसके दर्शनकरभी आनंद प्राप्त होता है, अरु ऐसा आनंद राजाकोभी नहीं होता जो बाहरते श्रेष्ठ मंत्री होता है अरु अंतरते सुंदर स्त्रियां होती हैं तिनकरभी ऐसा आनंद नहीं होता, जैसा आनंद शमसंपन्न पुरुषको होता है. हे रामजी! जिस पुरुषको शमकी प्राप्ति भई है, सो वंदना करके योग्य है, अरु पूजने योग्य है,जिसको शमकी प्राप्ति भई है,तिसको उद्वेग नहीं आवे अरु लोकहूते उद्वेग नहीं पावे, उसकी क्रिया अमृतसमान हैं अरु वचनभी उसके अमृतकी नाईं मीठे हैं, जैसे चंद्रमाकी किरण शीतल अरु अमृतरूप हैं, सो सबको हृदयाराम है, तैसे संतजनोंके वचन हैं. जिस पुरुषको शमकी प्राप्ति भई है,तिसकी संगति जब इस जीवको प्राप्त होती है, तब सब परमआनंदित होते हैं.

हे रामजी! जैसे बालक माताको पायके आनंदित होता है, तैसे जिसको शमकी प्राप्ति भई है, तिसका संग कर जीव अधिक आनंदवान् होता है. जैसे किसीका बांधव मराहुआ फिर आवे और इसको आनंद प्राप्त होवे, तिसतेभी अधिक आनंद शमसंपन्न पुरुषको पायके

होता है. हे रामजी ! ऐसा आनंद चक्रवर्ती राज्यके पायेतेभी तिसको नहीं होता अरु त्रिलोकीका राज्य पायेतेभी नहीं होता. जिसको शमकी प्राप्ति भई है तिसके शत्रुभी मित्र हो जाते हैं, तिसकर कछु भयभीत नहीं होता अरु सर्पका भयभी तिसको नहीं रहता; सिंहका भयभी तिसको नहीं रहता औरहू किसीका भय नहीं रहता. सदा निर्भय शांतरूप रहता है. हे रामजी ! जो कोऊ कष्ट आय प्राप्त होवे और कालकी अग्नि आय लगे, तौभी सो चलायमान नहीं होता; सदा शांतरूप रहता है. जैसे शीतल चांदनी चंद्रमामें स्थिर है तैसे जो कछु शुभ गुण अरु संपदा हैं, सो सब शमहृदयमें आय स्थिर होते हैं.

हे रामजी ! जो पुरुष आध्यात्मिकादि तापकर जलता है, तिसके हृदयमें शमकी प्राप्ति होवे, तब ताप मिट जाते हैं. जैसे तप्त पृथ्वी वर्षा करके शीतल हो जाती है, तैसे उसका हृदय शीतल हो जाता है. जिसको शमकी प्राप्ति भई है, सो सब क्रियाओंमें आनंदरूप है, तिसको दुःख कोऊ नहीं स्पर्श करता. जैसे वज्रशिलाको बाण वेध नहीं सक्ता, तैसे जिस पुरुषने शमरूपी कवच पहिरा है, तिसको आध्यात्मिकादि ताप वेध नहीं सक्ता; वह सर्वदा शीतलरूप रहता है.

हे रामजी ! तपस्वी, पंडित, याज्ञिक और धनाढ्य पुरुष पूजा और मान करने योग्य हैं, परंतु जिसको शमकी प्राप्ति भई है सो सबसे उत्तम है, सो सबको पूजनेयोग्य है. उसके मनकी वृत्ति आत्मतत्त्वको ग्रहण करती है, अरु सब क्रियाओंमें शोभती है. जिस पुरुषको शब्द, स्पर्श, रूप रस और गंध ये इंद्रियोंके विषय इष्ट अनिष्टमें राग दोष नहींहोता तिसको शांतात्मा कहते हैं, हे रामजी ! जो संसारके रमणीय पदार्थोंमें बध्यमान नहीं होता अरु आत्मानंदकर पूर्ण है, तिसको शांतिवान् कहते हैं. वाको संसारके शुभ अशुभकर मलीनपना नहीं लगता, सदा निर्लेप रहता है. जैसे आकाश सब पदार्थोंते निर्लेप है, तैसे शांतिवान् सदा

निर्लेप रहता है. हे रामजी ! ऐसा जो ज्ञानी पुरुष है, सो इष्ट विषयकी प्राप्तिमें हर्षवान् होता नहीं अरु अनिष्टविषयकी प्राप्तिमें शोकवान् होता नहीं अरु अंतरते सदा शांत रहता है; उसको कोऊ दुःख स्पर्श नहीं करता. अपने आपमें सदा परमानंदरूप रहता है. जैसे सूर्यके उदय हुवे अंधकार नष्ट हो जाता है, तैसे शांतिके पाये सर्व दुःख नष्ट हो जाते हैं और सदा निर्विकार रहते हैं.

हे रामजी ! सो पुरुष सब चेष्टा करते दृष्टि आते हैं, परंतु सदा निर्गुणरूप है; कोऊ क्रिया उनको स्पर्श नहीं करती. जैसे जलमें कमल निर्लेप रहता है, तैसे शांतिवान् सदा निर्लेप रहता है. हे रामजी ! जो पुरुष बडे राजसंपदाको पायकर अरु बडी आपदाको पायकर, ज्योंका त्यों अलग रहता है, सो शांतिवान् कहिये. हे रामजी ! जो पुरुष शांतिते रहित है, तिसका चित्त क्षण क्षण रागदोषकर तपता है अरु जिसको शांतिकी प्राप्ति भई है, सो अंतर बाहिर शीतल है अरु सदा एकरस है. जैसे हिमालय सदा शीतल रहता है, तैसे वह सदा शीतल रहता है. वाके मुखकी कांति बहुत सुंदर हो जाती है. जैसे निष्कलंक चंद्रमा होवे, तैसे शांतिवान् पुरुष निष्कलंक रहता है. हे रामजी ! जिनको शांति प्राप्त भई है, सो परम आनंदित हुवे हैं, परमलाभ तिनको प्राप्त होते हैं. ज्ञानी इसीको परमपद कहते हैं. जिसको पुरुषार्थ करना है, तिसको शांतिकी प्राप्ति करनी चाहिये. हे रामजी ! जैसे हमने कहा है तिस क्रमकरके शांतिका ग्रहण करोगे, तब संसारसमुद्रके पार पहुँचोगे.

इति श्रीयोगवासिष्ठे मुमुक्षुप्रकरणे शमनिरूपणं नाम त्रयोदशः सर्गः ॥ १३ ॥

चतुर्दशः सर्गः १४ ।

अथ विचारवर्णनम् ।

वसिष्ठ उवाच—हे रामजी ! अब विचारका निरूपण सुनोः

जब हृदय शुद्ध होता है, तब विचार होता है अरु शास्त्रार्थविचारद्वारा बुद्धि तीक्ष्ण होती है. हे रामजी! अज्ञानरूपी जो वन है, तिसमें आपदारूपी बेलिकी उत्पत्ति होती है. तिसको विचाररूपी खड्ग करके काटोगे, तब शांतआत्मा होवोगे. अरु मोहरूपी हस्ती है,सो जीवके हृदयकमलका खंड खंड कर डारता है. अभिप्राय यह कि, जो इष्ट अनिष्ट पदार्थमें रागद्वेषकर छेदा जाता नहीं, जब विचाररूपी सिंह प्रगटे तब मोहरूपी हस्तीका नाश करे. तब फिर शांतात्मा होवे.

हे रामजी ! जिसको कछु सिद्धता प्राप्त हुई है, सो विचार अरु पुरुषार्थकर भई है. जो राजा होता है सो प्रथम विचार कर पुरुषार्थ करता है; तिसकर राज्यको प्राप्त होता है; बल, बुद्धि अरु तेज, चतुर्थ जो पदार्थका आगमन अरु पंचम पदार्थकी प्राप्ति होती है, सो पांचोंकी प्राप्ति विचारकर होती है. अर्थात् जो इंद्रियोंका जीतना अरु बुद्धि सो आत्मा व्यापिनी अरु तेज पदार्थका आगमन इनकी प्राप्ति विचारसों होती है. हे रामजी ! जिन पुरुषोंने विचारका आश्रय लिया है, सो विचारकी दृढताकरके जिसकी वांछा करते हैं, तिसको पावते हैं; तातें विचार इसका परम मित्र है. जो विचारवान् पुरुष है, सो आपदामें मग्न नहीं होता. जैसे तुंबी जलमें डूबती नहीं, तैसे वह आपदामें डूबता नहीं. हे रामजी ! वह विचारसंयुक्त जो करता है, देता है, लेता है सो सब क्रिया सिद्धताका कारणरूप होती हैं. धर्म, अर्थ, काम अरु मोक्ष ये विचारकी दृढताकरके सिद्ध होते हैं. विचाररूपी कल्पवृक्ष है, तिसमें जिसका अभ्यास होता है सोई पदार्थकी सिद्धिको पाता है.

हे रामजी! शुद्ध ब्रह्मका विचार ग्रहण कर, आत्मज्ञानको प्राप्त होहु. जैसे दीपकसों पदार्थका ज्ञान होता है, तैसे पुरुष विचारसों सत्य असत्यको जानता है. जिन्होंने असत्यको त्यागकर सत्यकी ओर यत्न किया है,तिनको विचारवान् कहते हैं. हे रामजी! संसाररूपी समुद्रविषे आपदारूपी तरंग चलते हैं. जो विचारवान् पुरुष हैं सो संसारके भाव-

अभावमें कष्टवान् नहीं होते हैं. जो कछु विचारसंयुक्त क्रिया होती है, तिसका परिणाम सुख है, जो विचारबिना चेष्टा होती है, तिसकर दुःख प्राप्त होता है. हे रामजी! अविचाररूपी कंटकवृक्ष है, तिसते दुःखरूपी कंटक पडे उत्पन्न होते हैं अरु अविचाररूपी रात्रि है, तिसमें तृष्णारूपी पिशाचिनी आय विचरती है. जब विचाररूपी सूर्यका उदय होताहै तब अविचाररूपी रात्रि अरु तृष्णारूपी पिशाचिनी नष्ट होतीहै

हे रामजी! हमारा यही आशीर्वाद है कि, तुम्हारे हृदयसों अविचाररूपी रात्रि नष्ट होवे. विचाररूपी सूर्यकरके अविचारित संसारदुःखका नाश होता है; जैसे बालक अविचारकरके अपनी परछाहींको वैताल कल्पके भयको पाता है अरु विचार कियेते भय नष्ट हो जाता है, तैसे अविचार करके संसार दुःखको देता है. और सत्शास्त्रको युक्तिकर विचार कियेते संसारभय नष्ट हो जाता है. हे रामजी! जहां विचार है तहां दुःख नहीं है. जैसे जहां प्रकाश होता है, तहां अंधकार नहीं रहताहै, जहां प्रकाश नहीं तहां अंधकार रहता है; तैसे जहां विचार है, तहां संसारभय नहीं है अरु जहां विचार नहीं, तहां संसारभय रहता है. अरु जहां आत्मविचार होता है, तहां सुखको देनेहारे शुभ गुण आय स्थित होते हैं. जैसे मानससरोवरमें कमलकी उत्पत्ति होती है, तैसे विचारमें शुभगुणकी उत्पत्ति होती है. जहां विचार नहीं तहां दुःखका आगमन होता है.

हे रामजी! जो क[illegible] अविचारकर क्रिया करते हैं सो दुःखका कारण होता है. जैसे [illegible]हा बिलको खोदके, मृत्तिका निकासता है, सो जहां इकट्ठी होती है, तहां बेलिकी उत्पत्ति होती है, तैसे अविचारकर यह पुरुष मृत्तिकारूपी पापक्रियाको इकट्ठी करता है. तिसते आपदारूपी बेलि उत्पन्न होती है. अरु अविचाररूपी घुनका खाया सूखा वृक्ष है, तिसको सुखरूपी फल चाहते हैं. तेऊ नहीं निकसते हैं सो अविचार किसका नाम है? जिसकरके शुभ क्रिया न होवे अरु जिसकर शास्त्रानुसार क्रिया न होवे, तिसका नाम अविचार है.

हे रामजी! विवेकरूपी राजा है अरु विचाररूपी प्रजा है. जहां विवेकरूपी राजा आता है, तहां विचाररूपी प्रजा तिसके साथ फिरती है. अरु जहां विचाररूपी प्रजा आती हैं, तहां विवेकरूपी राजाभी आता है. जो पुरुष विचार करके संपन्न है, सो पूजनेयोग्य है; तिसको सब कोऊ नमस्कार करते हैं. जैसे द्वितीयाके चंद्रमाको सब नमस्कार करते हैं, तैसे विचारवान्को सब नमस्कार करते हैं. हे रामजी! हमारे देखते देखते अल्पबुद्धिहू विचारकी दृढताते मोक्षपदको प्राप्त भये हैं; ताते विचार सबका परम मित्र है. विचारवाले पुरुष अंतर बाहिर शीतल रहते हैं. जैसे हिमालय पर्वत अंतर बाहिर शीतल रहता है, तैसे वहभी शीतल रहते हैं. देखो; विचारकरके ऐसे पदको प्राप्त होता है. जो पद नित्य है अरु स्वच्छ है, अनंत है, परमानंदरूप है, तिसको पायकर, तिसके त्यागकी इच्छा होती नहीं, औरके ग्रहणकी इच्छा नहीं होती है; उनको इष्ट-अनिष्टविषे सब समान है. जैसे तरंगके होनेमें अरु लीन होनेमें समुद्रसमान रहता है, तैसे विवेकी पुरुषको इष्ट-अनिष्टविषे समता रहती है अरु संसारभ्रम मिट जाता है; आधाराधेयते रहित केवल अद्वैत तत्त्व उसको प्राप्त होता है.

हे रामजी! यह जगत् अपने मनके मोहते उपजता है अरु अविचारकर दुःखदायी दीखता है. जैसे अविचारकरके बालकको बेताल भासता है, तैसे इसको जगत् भासता है. जब ब्रह्मविचारकी प्राप्ति होवे, तब जगद्भ्रम नष्ट होजावे. हे रामजी! जिसके हृदयमें विचार होता है, तहां समताकी उत्पत्ति होती है. जैसे बीजते अंकुर निकस आता है, तैसे विचारते समता होय आती है. अरु विचारवान् पुरुष जिसकी ओर देखता है, तिस ओर आनंददृष्टि आता है, दुःख कोऊ नहीं भासता है. जैसे सूर्यको अंधकार दृष्टि नहीं आता, तैसे विचारवान्को दुःख दृष्टिमें नहीं आता; जहां अविचार है तहां दुःख है. जहां विचार है, तहां सुख है. जैसे अंधकारके अभाव हुवे बेतालके भयका अभाव

हो जाता है, तैसे विचार कियेते दुःखका अभाव हो जाता है.

हे रामजी! संसाररूपी दीर्घ रोग है; तिसका नाश करनेका विचार बडा औषध है. जिसको विचारकी प्राप्ति भई है, तिसके मुखकी कांति उज्ज्वल हो जाती है.जैसे पूर्णमासीके चंद्रमाकी उज्ज्वल कांति होती है, तैसी विचारवान्के मुखकी उज्ज्वल कांति होती है.हे रामजी! विचार करके इसको परमपदकी प्राप्ति होती है, जिसकरि अर्थसिद्धि होवे तिसका नाम विचार है.अरु जिसकरि अनर्थसिद्धि होवे तिसका नाम अविचार है.अविचाररूपी मदिरा है,जो इसका पान करता है सो उन्मत्त हो जाता है,तिसते शुभ विचार कोउ नहीं हो आता.शास्त्रके अनुसार जो कछु क्रिया है, सो ताते नहीं होती,ताते अविचार करि अर्थ सिद्धि नहीं होती.

हे रामजी! इच्छारूपी रोग है,सो विचाररूपी औषध करके निवृत्त होता है.जिन पुरुषोंने विचारद्वारा परमार्थसत्ताका आश्रय लिया है,सो परम शांत होजाते हैं. अरु हेय उपादेय बुद्धि तिनकी नहीं रहती. सब दृश्यको साक्षीभूत होकर देखते हैं,अरु संसारके भावअभावविषे ज्योंके त्यों रहते हैं अरु उदयअस्तते रहित निःसंगरूप हैं.जैसे समुद्र जलकरि पूर्ण है तैसे विचारवान् आत्मतत्त्वकरि पूर्ण है.जैसे अंधकूपविषेपडाहुवा पुरुष हस्तके बलकरि निकसता है,तैसे संसाररूपी अंधकूपमें गिराहुवा विचारके आश्रय होकर,विचारवान् पुरुष निकसनेको समर्थ होता है.

हे रामजी!राजाओंको जो कोऊ कष्ट आय प्राप्त होता है, तब वह विचार करके यत्न करते हैं, तब कष्ट निवृत्त हो जाता है. ताते तुम विचार कर देखो कि;किसीको कष्ट प्राप्त होता है सो विचारते मिटता है. तुमभी विचारका आश्रय करके सिद्धिको प्राप्त होहु.सो विचार इसकर प्राप्त होता है,जो वेद अरु वेदांतके सिद्धांतको श्रवण और पाठ कर, भले प्रकार विचारोगे तब विचारकी दृढताकर आत्मतत्त्वको प्राप्त होवोगे. जैसे प्रकाशकर पदार्थका ज्ञान होता है, तैसे गुरु अरु

शास्त्रके वचनकर तत्त्वज्ञान होता है. जैसे प्रकाशमें अंधको पदार्थकी प्राप्ति नहीं होती है, तैसे गुरु अरु शास्त्रसों जो विचारशून्य होवे तिनको आत्मपदकी प्राप्ति नहीं होती. हे रामजी! जो विचाररूपी नेत्रकर संपन्न है, सोई देखते हैं; अरु विचाररूपी नेत्रते जो रहित हैं सो अंध हैं.

हे रामजी! ऐसा विचार करे कि, हम कौन हैं अरु यह जगत् कौन है? अरु इसकी उत्पत्ति कैसी हुई है? अरु लीन कैसे होता है? इस प्रकार संत अरु शास्त्रके अनुसार विचार करो, सत्यको सत्य जानो अरु असत्यको असत्य जानो. जिसको असत्य जाना है, तिसका त्याग करो अरु सत्यमें स्थित होवो, इसीका नामविचार है. इस विचारकर आत्मपदकी प्राप्ति होती है. हे रामजी! विचाररूपी दिव्यदृष्टि जिसको प्राप्त भई है, तिसको सब पदार्थका ज्ञान होताहै, विचारसों आत्मपदकी प्राप्ति होती है, तिसको पायेते परिपूर्ण होता है. फिर शुभ--अशुभविषे संसारमें चलायमान नहीं होता, ज्योंका त्यों रहता है. जबलग प्रारब्धवेग होता है, तबलग शरीरकी चेष्टा करे, बहुरि शरीरको त्यागकर केवल शुद्धरूप हो जाता है. ताते—

हे रामजी! ब्रह्मविचारको आश्रय कर. संसारसमुद्रको तरजावो. जो कोऊ रोगी होता है, सो एता रुदन नहीं करता, जेता रुदन विचाररहित पुरुष करता है. जिसको कष्ट प्राप्त होता है, सोभी एता रुदन नहीं करता. हे रामजी! जो पुरुष विचारते शून्य है, तिसको सब आपदा आय प्राप्त होती हैं. जैसे सब नदी स्वभावसों समुद्रमें आय प्रवेश करती हैं, तैसे अविचारमें सब आपदा आय प्रवेश करती हैं. हे रामजी! कीचका कीट होना सो भला है अरु गर्त्तका कंटक होना सोभी भला है अरु अंधेरे बिलमें सर्प होना सोभी भला है, परंतु विचारते रहित होना सो भला नहीं. जो पुरुष विचारते रहित है अरु भोगमें दौरता है, सो श्वान है.

हे रामजी ! विचारते रहित पुरुष बड़े कष्टको पाताहै, ताते एक क्षणहू विचारते रहित नहीं रहना. विचारसों दृढ होकर निर्भय रहना कि, मैं कौन हूं? अरु दृश्य क्या है? ऐसा विचार करके सत्यरूप आत्माके ज्ञानकर दृश्यका त्याग करना. हे रामजी ! जो पुरुष विचारवान् है, सो संसारभोगमें नहीं गिर जाता अरु सत्यमें स्थित होता है विचार जब स्थिर होता है तब तिसते तत्त्वज्ञान होता है तिस तत्त्वज्ञानते विश्राम होता है, विश्रामते चित्तका उपशम होता है अरु चित्तके उपशमते सब दुःख नाश होते हैं.

इति श्रीयोगवासिष्ठे मुमुक्षुप्रकरणे विचारनिरूपणं नाम चतुर्दशः सर्गः ॥ १४ ॥

पंचदशः सर्गः १५।

अथ संतोषवर्णनम् ।

वसिष्ठ उवाच—हे अविचारशत्रुके नाशकता रामजी ! जिस पुरुषको संतोष प्राप्त भया है, सो परम आनंदित हुआ है. अरु त्रिलोकीका ऐश्वर्य उसको तृणकी नाईं तुच्छ भासता है. हे रामजी ! जो आनंद अमृतपान कियेते नहीं होता और जो आनंद त्रिलोकीके राज्यकर नहीं होता, तैसा आनंद संतोषवान्को होता है हे रामजी! इच्छारूपी रात्रि है अरु सो हृदयरूपी कमलको सकुचाय देती है और जब संतोषरूपी सूर्य उदय होता है, तब इच्छारूपी रात्रिका अभाव हो जाता है. जैसे क्षीरसमुद्र उज्ज्वलता करके शोभता है, तैसे संतोषवान्की कांति सुशोभित होती है.

हे रामजी ! त्रिलोकीके राज्यकी इच्छा निवृत्त न भई सो दरिद्री है अरु जो निर्धन है और संतोषवान् है सो सबका ईश्वर है जो अप्राप्त वस्तुकी इच्छा न करे अरु प्राप्त होई इष्ट अनिष्टमें राग द्वेष न धरे इसका नाम संतोष है. संतोषही परमपद है. संतोषवान् पुरुष सदा

आनंदरूप है अरु आत्मास्थितिसों तृप्त हुवा है तिसको और इच्छा कछु नहीं स्फुरती. अरु संतुष्टताकर तिसका हृदय प्रफुल्लित हुवा है. जैसे सूर्यके उदय हुवे सूर्यमुखी कमल प्रफुल्लित होता है, तैसे संतोषवान् प्रफुल्लित हो जाता है. जो अप्राप्त वस्तु है तिसकी इच्छा नहीं करता अरु जो अनिच्छित प्राप्त भई है, तिसको यथाशास्त्र क्रमकरके ग्रहण करता है, तिसका नाम संतोषवान् है. जैसे पूर्णमासीका चंद्रमा अमृतकर पूर्ण होता है, तैसे संतोषवान्का हृदय संतुष्टताकरके पूर्ण होता है अरु जो संतोषते रहित है, तिसके हृदयरूपी वनमें सदा दुःख अरु चिंतारूपी फूल फल उत्पन्न होतेही हैं.

हे रामजी ! जिसका चित्त संतोषते रहित, तिसको नानाप्रकारकी इच्छा होती है; जैसे समुद्रमें नानाप्रकारके तरंग होतेहैं. संतुष्टात्मा परम आनंदित है. तिसको जगत्के पदार्थमें हेयोपादेय बुद्धि नहीं होती. हे रामजी ! जैसा आनंद संतोषवान्को होता है, तैसा आनंद अष्टसिद्धिके ऐश्वर्यकरकेभी नहीं होता अरु अमृतके पान कियेतेभी नहीं होता. संतोषवान् सदा शांतिरूप है और सदा निर्मल रहता है. इच्छारूपी धूर सर्वदा उडती थी सो संतोषरूपी वर्षाकर शांत होगई है; तिस कारणते संतोषवान् निर्मल है.

हे रामजी! संतोषवान् पुरुष सबको प्यारा लगता है. जैसे आँबका परिपक्व फल सुंदर होता है अरु सबको प्यारा लगता है, तैसे संतोषवान् पुरुष सबको प्यारा लगता है, अरु स्तुति करनेयोग्य है. जिस पुरुषको संतोष प्राप्त भया है, तिसको परमलाभ भया है. हे रामजी! जहाँ संतोष है, तहां इच्छा नहीं रहती है अरु संतोषवान् भोगमें दीन होकर नहीं रहता. वह उदारात्मा है. सर्वदा आनंदकर तृप्त रहता है. जैसे मेघ पवनके आयेते नष्ट हो जाता है, तैसे संतोषके आयेते इच्छा नष्ट हो जाती है अरु जो संतोषवान् पुरुष है, तिसको देवता ऋषी-

श्वर, सब नमस्कार करते हैं, अरु धन्य धन्य कहते हैं. हे रामजी! जब इस संतोषको धरोगे, तब परमशोभा पावोगे.

इति श्रीयोगवासिष्ठे मुमुक्षुप्रकरणे संतोषनिरूपणं
नाम पंचदशः सर्गः ॥ १५ ॥

षोडशः सर्गः १६ ।

अथ साधुसंगवर्णनम् ।

वसिष्ठ उवाच—हे रामजी ! और जेते कछु दान--तीर्थादिक साधन हैं, तिनकर आत्मपदकी प्राप्ति नहीं होती, साधुसंगकर आत्मपदकी प्राप्ति होती है. साधुसंगरूपी एक वृक्ष है; तिसका फल आत्मज्ञान है. जिस पुरुषने फूलकी इच्छा करी है, सो अनुभवरूपी फलको पाता है हे रामजी ! जो पुरुष आत्मानंदते रहित है सो सत्संगकर आत्मानंदसों पूर्ण होता है अरु अज्ञानकरके जो मृत्युको पाता हैं, सो संतके संगते ज्ञान पायकर अमर होता है, अरु जो आपदाकरके दुःखी है, सो संतके संगकर संपदाको पाता है. आपदारूपी कमलका नाश करनहारा सत्संगरूपी वर्फकी वर्षा है, सत्संगसों आत्मबुद्धि प्राप्ति होती है, तिसकर मृत्युते रहित होता है और सब दुःखते रहित होता है अरु परमानंदको प्राप्त होता है.

हे रामजी! सत्संगतिकर इसके हृदयमें ज्ञानरूपी दीपक जलता है तिसकर अज्ञानरूपी तम नष्ट हो जाता है अरु बडे ऐश्वर्यको प्राप्त होता है; बहुरि किसी भोग पदार्थकी इच्छा नहीं रहती अरु बोधवान् होता है. सबते उत्तम पदमें विराजता है. जैसे कल्पवृक्षके निकट गयेते वांछित फलकी प्राप्ति होती है,तैसे संसारसमुद्रके पार उतारनेहारे संतजन हैं. जैसे धीवर नौकाकरके पार लगाता है, तैसे संतजन युक्तिकरके संसा-

रसमुद्रते पार करते हैं, अरु मोहरूपी मेघका नाश करनहारा संतका संग है सो पवन है; जिनको देहादिक अनात्मसों स्नेह नष्ट भया है अरु शुद्ध आत्माविषे जाकी स्थिति है, तिसकर तृप्त भये हैं. बहुरि संसारके इष्ट अनिष्टने जाकी चलायमान बुद्धि नहीं होती, सदा समताभावमें स्थित रहे हैं, ऐसे संसारसमुद्रके पार उतारनेमें फूल जैसे अरु आपदारूपी वेलीको जडसमेत नाश करनहारे हैं.

हे रामजी! संतजन प्रकाशरूप हैं; तिनके संगते पदार्थकी प्राप्ति होती है. जो अपने पुरुषार्थरूपी नेत्रते हीन हुवे हैं, तिनको पदार्थकी प्राप्ति नहीं होती.जिन पुरुषोंने सत्संगका त्याग किया है, सो नरकरूपी अग्निमें लकड़ीकी नाई जरैंगे, अरु जिन पुरुषोंने सत्संग किया है तिनको नरकरूपी अग्निका नाश करनहारा सत्संगरूपी मेघ है.हे रामजी! सत्संगरूपी गंगा है; जाने सत्संगरूपी गंगाका स्नान किया ताको बहुरि तप, दान आदि साधनका प्रयोजन नहीं. वह सत्संगकरके परमगतिको प्राप्त होनेका है, ताते और सब उपाय त्यागकर, सत्संगको खोजना. जैसे निर्धन चिंतामणि आदिक धनको खोजता है,तैसे मुमुक्षु सत्संगको खोजता है. आध्यात्मिकादि तीन तापनसों जलता है, तिसको शीतल करनेहारा सत्संग है. जैसे तपी हुई पृथ्वी मेघकर शीतल होती है, तैसे सत्संगकर हृदय शीतल होता है.

हे रामजी! मोहरूपी वृक्षका नाश करनहारा सत्संगरूप कुल्हाडा है; सत्संगकरके यह पुरुष अविनाशी पदको प्राप्त होता है; जिस पदके पायेते और पावनेकी इच्छा नहीं रहती, ऐसा सबते उत्तम सत्संग है; जैसे सब अप्सरानते लक्ष्मी उत्तम है, तैसे सत्संगकर्ता सबते उत्तम है; ताते अपने कल्याणके निमित्त सत्संग करना तुमको योग्य है. हे रामजी! ये जो चारों मोक्षके द्वारपाल हैं, सो तुमको कहे.जिन पुरुषोंने इनके साथ प्रीति करी है, सो शीघ्र आत्मपदको प्राप्त होंगे और जो इनकी सेवा नहीं करते, सो मोक्षको प्राप्त नहीं होते.हे रामजी! इन

चारोंमेंते एकहू जहां आता है,तहां तीनों औरहू आय जाते हैं.जहां समुद्र रहता है,तहां सब नदी आय जाती हैं; तैसे जहां शम आता है तहां संतोष, विचार अरु सत्संग ये तीनों आय जाते हैं. जहां साधुसंगम होता है, तहां संतोष, विचार अरु शम ये तीनों आय जाते हैं;जहां कल्पवृक्ष रहता है तहां सब पदार्थ आय स्थित होते हैं. अरु जहां संतोष आता है तहां शम, विचार और सत्संग ये तीनों आय जाते हैं.जैसे पूर्णमासीके चंद्रमामें गुण कला सब इकट्ठी हो जाती हैं,तैसे जहां संतोष आता है, तहां और तीनों आय जाते हैं. अरु जहां विचार आता है तहां संतोष, उपशम अरु सत्संग, ये आय रहते हैं.जैसे श्रेष्ठ मंत्रीसों राज्यलक्ष्मी आय स्थित होती है, तैसे जहां विचार होता है तहां और भी तीनों आते हैं.ताते हे रामजी ! जहां चारों इकट्ठे होते हैं,तहां परम श्रेष्ठ जानना.ताते हे रामजी ! चारों न होहिं तो एकका तो अवश्य आश्रय करना, जब एक आवेगा, तब चारों आय स्थित होवेंगे. मोक्षकी प्राप्ति होनेके ये चार परमसाधन हैं, और उपायसों मुक्ति होनेकी नहीं.

॥ श्लोकः ॥

संतोषः परमो लाभः सत्संगः परमं धनम् ॥
विचारः परमं ज्ञानं शमश्च परमं सुखम् ॥ १ ॥

हे रामजी ! यह परम कल्याणकर्त्ता, सो इन चारों करि संपन्न है, तिसकी ब्रह्मादिक स्तुति करते हैं, ताते दंत लगाय इनका आश्रय करके मनको वश कर ले.

हे रामजी ! मनरूपी हस्ती विचाररूपी अंकुशकरके वश होता है अरु मनरूपी वनमें वासनारूपी नदी चलती है, तिसको शुभ अशुभ दो किनारे हैं अरु पुरुषार्थ करना यह है कि,अशुभकी ओरते रोकके शुभकी ओर चलना. जब अंतर्मुख आत्माके संमुख वृत्तिका प्रवाह होवेगा,तब तुम परमपदको प्राप्त होवोगे. हे रामजी ! प्रथम तो पुरुषार्थ करना यही

है कि--अविचाररूपी उँचाईको दूर करना जब अविचाररूपी उँचाई दूर होगी, तब आपही प्रवाह चलेगा. हे रामजी ! दृश्यकी ओर जो प्रवाह चलता है, सो बंधनका कारण है. जब आत्माकी ओर अंतर्मुखी प्रवाह होवे, तब मोक्षका कारण होय जाय, आगे जो तुम्हारी इच्छा होवे सो करो.

इति श्रीयोगवासिष्ठे मुमुक्षुप्रकरणे साधुसंगनिरूपणं नाम षोडशः सर्गः ॥ १६ ॥

सप्तदशः सर्गः १७ ।

अथ षट्प्रकरणवर्णनम् ।

वसिष्ठ उवाच—हे रामजी ! ये जो मेरे वचन हैं सो परम पावन हैं. जो विचारवान् शुद्ध अधिकारी है, तिसको ये वचन परमबोधका कारण हैं. जो पुरुष शुद्ध पात्र हैं, सो इन वचनोंको पायके, शोभते हैं और वचनहू उनको पायके शोभा पाते हैं. जैसे मेघके अभावते शरद्-कालमें चंद्रमा अरु आकाश शोभते हैं, तैसे शुद्ध पात्रमें ये वचन शोभते हैं, अरु जिज्ञासु निर्मल वचनकी महिमा सुनके, प्रसन्न होता है. हे रामजी ! तुम परमपात्र हो अरु ये मेरे वचन परम उत्तम हैं, यह महारामायण मोक्षोपायक शास्त्र है, सो आत्मबोधका परमकारण है. अरु परमपावन वाक्यकी सिद्धता है, अरु युक्तियुक्तार्थवाक्य है, अरु नानाप्रकारके दृष्टांत कहे हैं, जिनके बहुत जन्मके पुण्य आय इकट्ठे होते हैं, तिनको कल्पवृक्ष मिलताहै. सो फलकर झुक पडता है, तब तिनको यह शास्त्र श्रवण होता है, अरु नीचको इनका श्रवण प्राप्त नहीं होता है. उसकी वृत्ति इनके श्रवणमें नहीं आती है. जैसे धर्मात्मा राजाकी इच्छा न्यायशास्त्रके श्रवणमें होती है अरु जो पापात्मा राजा है, तिसकी इच्छा नहीं होती, हे रामजी ! तैसे पुण्यवा-

नकी इच्छा इसके श्रवणमें होती है, अरु अधमकी इच्छा नहीं होती. जो कोई मोक्षोपायक इस रामायणका अध्ययन करेगा अथवा निष्काम संतके मुखते श्रद्धायुक्त श्रवण करेगा अरु आदिते लेकर,अंतपर्यंत एकत्रभाव होकर विचारेगा, तब तिसका संसारभ्रम निवृत्त हो जावेगा. जैसे जेवरीके जाननेते सर्पका भ्रम दूर हो जाता है, तैसे अद्वैतात्मतत्त्वके जाननेते तिसका संसारभ्रम नष्ट हो जावेगा.

इस मोक्षोपायक शास्त्रके बत्तीस सहस्र श्लोक हैं, अरु षट् प्रकरण हैं. प्रथम वैराग्यप्रकरण है, सो वैराग्यका परमकारण है. हे रामजी! मरुस्थलमें वृक्ष नहीं होता, परंतु बडी वर्षा होवे तब तहां वृक्ष होता है, तैसे अज्ञानीका हृदय मरुस्थलकी नाई है, तिसमें वैराग्यरूपी वृक्ष नहीं होता, परंतु यह शास्त्ररूपी जो बडी वर्षा होवे, तिसकर वैराग्यरूपी वृक्ष उत्पन्न होता है, तिसके एक सहस्र पांचसो श्लोक हैं. तिसके अनंतर-

मुमुक्षुव्यवहारप्रकरण है, तिसमें परमनिर्मल वचन हैं. तिनकरके जैसे मलीन मणि मार्जन कियेते उज्ज्वल हो आती है, तैसे यह वचनते मुमुक्षुका हृदय निर्मल होता है अरु विचारके बलते आत्मपद पानेको समर्थ होता है. तिसके एक सहस्र श्लोक हैं, तिसके अनंतर–

उत्पत्तिप्रकरण है तिसके सप्तसहस्र श्लोक हैं. तिसमें बडी सुंदर कथा दृष्टांतसहित कही है. जिस विचारते जगतका सत्यताभाव मनते चलायमान रहता है, अर्थात् जो जगत्का अत्यंत अभाव जान पडता है. हे रामजी! इस जगत्में जो मनुष्य, देवता, दैत्य, पर्वत, नदी-आदि स्वर्गलोक, पृथ्वी, आप्,तेज,वायु आकाश–आदि स्थावर जंगम भासता है, सो अज्ञानकरके हैं, अरु इसकी उत्पत्ति कैसे भई है? जैसे जेवरीमें सर्प होता है अरु शीपमें रूपा है अरु सूर्यके किरणमें जल दीखता है,आकाशमें तरुवर दीखता है और जैसे दूसरा चंद्रमा दीखता है. जैसे गंधर्वनगर भासते हैं, मनोरथकी सृष्टि भासती है अरु संकल्पपुर होता है अरु सुवर्णमें भूषण होता है समुद्रमें तरंग होते हैंआकाशमें नीलता दीखती

जैसे नौकामें बैठते किनारेके वृक्ष पर्वत चलते दृष्टि आते हैं अरु बादरके चलते चंद्रमा धांवता दीखता है और थंभमें पूतरी भासती है, भविष्यत् नगरते-आदि लेकर, असत्य पदार्थ जैसे सत्य भासते हैं, तैसे सब जगत् आकाशरूप है, अज्ञानकरके अर्थाकार भासता है. सो अज्ञानकरके उत्पत्ति दीखती है, अरु ज्ञानकरके लीन होजाता है. जैसे निद्रामें स्वप्नसृष्टिकी उत्पत्ति होती है अरु जागेते निवृत्त हो जाती है; तैसे अविद्याकरके जगत्की उत्पत्ति होती है अरु सम्यक् ज्ञानकरके निवृत्त होजाता है; सो अविद्या कछु वस्तुहू नहीं, सर्व चिदाकाशरूप है, सो शुद्ध है, अनंत है, परमानंदस्वरूप है. तिसमें न जगत् उपजता है, और न लीन होता है; ज्योंकी त्यों आत्मसत्ता अपने आपविषे स्थित है, तिसमें जगत् ऐसा है--जैसे भीतमें चित्र होता है,जैसे थंभमें पुतरियां होती हैं अरु हुवे बिना भासती हैं, तैसे यह सृष्टि मनमें रही है, वास्तवते कछु बनी नहीं. सब आकाशरूप है. जब चित्तसंवेदन स्पंदरूप होता है, तब नानाप्रकारका जगत् होके भासता है अरु जब निस्पंद होता है तब जगत् मिट जाता है. इसप्रकार जगत्की उत्पत्ति कही है. तिसके अनंतर-

स्थितिप्रकरण है; तिसमें जगत्की स्थिति कही है. जैसे इंद्रका धनुष आकाशरूप है और अविचारकरके रंगसहित भासता है;जैसे सूर्यकी किरणोंमें जल भासता है, जैसे जेवरीमें सर्प भासता है सो सब सम्यग्दृष्टिकरके निवृत्त होता है, तैसे अज्ञानकरके जगत्की प्रतीति होती है, सो मनोराज्य करके जगत् रच लेता है, सो कछु उत्पन्न हुवा नहीं है, तैसे यह जगत् संकल्पमात्र है. जबलग मनोराज्य है, तबलग वह नगर होता है. जब मनोराज्यका अभाव हवा, तब नगरका अभाव हो जाता है. जबलग अयान होता है, तबलग जगत्की उत्पत्ति होती है. जब संकल्पका लय हुवा तब जगत्का अभाव हो जाता है. जैसे इंद्र ब्रह्माके पुत्रहूकी दश सृष्टि संकल्प करके स्थित भई, तैसे

यह जगत्‌भी है; कोऊ पदार्थ अर्थरूप नहीं. हे रामजी ! इसप्रकार स्थितिप्रकरण कहा है. तिसके तीन सहस्र श्लोक हैं. तिसके विचारकरके जगत्‌की सत्यता जाती रहती है. तिसके अनंतर—

उपशांतिप्रकरण है; तिसके पंचसहस्र श्लोक हैं. तिसके विचारेते अहंतत्त्वादिक वासना लीन हो जाती हैं. जैसे स्वप्नते जागेते वासना जाती रहती है, तैसे विचार कियेते अहंतादिक वासना लीन होजाती हैं. काहेते, कि, उसके निश्चयमें जगत् नहीं रहता. जैसे एक पुरुष सोया है, तिसको स्वप्नमें जगत् भासता है और उसके निकट जो जाग्रत पुरुष है, तिसको स्वप्नका जगत् आकाशरूप है. जब आकाशरूप हुवा तब वासना कैसे रहे ? जब वासना नष्ट भई, तब मनका उपशम हो जाता है. तब देखनेमात्र उसकी सब चेष्टा होती है और इसके मनमें अर्थरूप इच्छा नहीं होती. जैसे अग्निकी मूर्ति देखनेमात्र होती है, अर्थाकार नहीं होती, तैसे उसकी चेष्टा होती है. हे रामजी ! जब मनते इच्छा नष्ट होती है, तब मनभी निर्वाण होजाता है. जैसे तेलते रहित दीपक निर्वाण होता है, तैसे इच्छाते रहित मन निर्वाण होता है. इसप्रकार उपशमप्रकरण है. तिसके अनंतर—

निर्वाणप्रकरण है. जो शेष है तिसमें चौदा हजार पांचसो श्लोक हैं. परमनिर्वाण वचन कहे हैं, अज्ञानकरके चित्त अरु चित्तका संबंध है, सो विचार कियेते निर्वाण होजाता है. जैसे शरत्कालमें मेघके अभावते शुद्ध आकाश होता है, तैसे पुरुष विचारकरके निर्मल होता है. हे रामजी ! अहंकाररूपी पिशाच है, सो विचारकरके नष्ट होता है, जेती कछु इच्छा स्फूर्ति है, सो निर्वाण हो जाती है. जैसे पत्थरकी शिला फुरनेते रहित होती है, तैसे ज्ञानवान् इच्छाते रहित होता है. तब जेती कछु जगत्‌की यात्रा है सो इसको होय चुकती है, जो कछु करना है सो कर चुकता है. हे रामजी ! शरीर होतेही वह पुरुष अशरीरी हो जाता है अरु नाना प्रकारका जगत् उसको नहीं भासता. जगत्‌की

नेतीते वह रहित होता है, अहंतत्त्वादिक तमरूप जगत् तिसको नहीं भासता है, जैसे सूर्यको अंधकार दृष्टि नहीं आता, तैसे उसको जगत् दृष्टिमें नहीं आता अरु ऐसे बडे पदको प्राप्त होता है जैसे सुमेरु पर्वतके किसी कोनेमें कमल होता है, तिसके ऊपर भौंरा स्थिर रहते हैं, तैसे ब्रह्माके किसी कोनपै जगत् तुषाररूप है अरु जीवरूपी भौंरे तिसपर स्थित हैं. वह पुरुष अचिंत्य चिन्मात्र है. रूप अवलोकन, मन तिसका आकाशरूप हो जाता है तिस पदको वह प्राप्त होता है, जिस पदकी योग्य उपमा कहनेको ब्रह्मा, विष्णु और रुद्रभी समर्थ नहीं होते, ऐसे अनुपमताके सदृश कोऊ नहीं है.

इति श्रीयोगवासिष्ठे मुमुक्षुप्रकरणे षट्प्रकरणविवरणं नाम सप्तदशः सर्गः ॥ १७ ॥

अष्टादशः सर्गः १८।

अथ दृष्टांतवर्णनम्।

वसिष्ठ उवाच—हे रामजी! यह परमउत्तम वाक्य है, उसको विचारनहारा उत्तम पदको प्राप्त होता है. जैसे उत्तम खेतमें उत्तम बीज बोयेते उत्तम फलकी उत्पत्ति होती है, तैसे इसको विचारनहारा उत्तम पदको प्राप्त होता है. यह वाक्य युक्तिपूर्वक है और युक्तिते रहित ऋषिवाक्यभी हो, तो तिसको त्याग करिये और युक्तिपूर्वक वाक्यका अंगीकार करिये.

हे रामजी! जो ब्रह्माके वचन युक्तिते रहित हों तब तिनकोभी सूखे तृणकी नाईं त्याग करिये, अरु बालकके वचन युक्तिपूर्वक हों तो तिनका अंगीकार करिये और पिताके कूपका खारा जल होवे तो उसका त्याग करिये और निकट मिष्ट जलका कूप होवे तब तिसका पान करिये. तैसे बडे अरु छोटेका विचार न करिये. युक्तिपूर्वक

वचनका अंगीकार करना. हे रामजी ! मेरे वचन सब युक्तिपूर्वक हैं अरु बोधके परमकारण हैं. जो पुरुष एकाग्र होके, इस शास्त्रको आदिते अंतपर्यंत पढे अथवा पंडितसों श्रवणकरके विचारे, तब तिसकी बुद्धि संस्कारित होवे.

प्रथम वैराग्यप्रकरणको विचारेगा, तब वैराग्य उपजैगा. जेते कछु जगत्के रमणीय भोग पदार्थ हैं, तिनको विरस जानेगा अरु किसी पदार्थकी वांछा न करैगा. जब भोगमें वैराग्य होता है, तब शांतिरूप आत्मतत्त्वमें प्रतीति होती है. जब विचारकरके बुद्धि संस्कारित होवेगी तब शास्त्रका सिद्धांत बुद्धिमें आय स्थित होवेगा और ससारके विकार रहित बुद्धि निर्मल होवेगी. जैसे शरत्कालके बादलके अभाव हुवेते आकाश सब ओरते स्वच्छ होता है, तैसे बुद्धि निर्मल होवेगी. बहुरि आधिव्याधिकी पीडा उसको न होवेगी. हे रामजी ! ज्यों ज्यों विचार दृढ होवेगा, त्यों त्यों शांतात्मा होवेगा; ताते जेते कछु संसारके यत्न हैं, तिनका त्यागकर, इस शास्त्रको वारंवार विचारेते चैतन्यसत्ता उदय होवेगी, त्यों त्यों लोभ--मोहादि विकारोंकी सत्ता नष्ट होवेगी. ज्यों ज्यों सूर्यउदय होता है, त्यों त्यों अंधकार नष्ट होता है; तैसे विकार नष्ट होवेगा तब तिस पदकी प्राप्ति होवेगी. जिसके पायेते संसारके क्षोभ मिट जायँगे. जैसे शरत्कालमें मेघ नष्ट हो जाता है. तैसे संसारके क्षोभ मिट जाते हैं.

हे रामजी ! ज्ञानवान् पुरुषको संसारके रागदोष वेधि नहीं सकते. जैसे जिस पुरुषने कवच पहिरा होय, तिसको बाण वेध नहीं सकते, उसको भोगकी इच्छा नहीं रहती; जब विषयभोग विद्यमान आय रहें तब तिनको विषयभूत जानके बुद्धि ग्रहण नहीं करती. अर्थ जानकर बाहर नहीं निकसती, अंतरात्मामेंही स्थित रहती है; पतिव्रता स्त्री अपने अंतःपुरते बाहर नहीं निकसती तैसे ताकी बुद्धिअंतरते बाहर नहीं निकसती हे रामजी ! बाहरते तो वहभी प्रकृतिजन्यकी नाईं दृष्टि

आता है जो कछु अनिच्छित प्राप्त होते हैं, तिनको भोगता हुवा दृष्टिमें आता है, और अंतरते उसको रागदोष नहीं फुरता.

हे रामजी! जेता कछु जगत्‌की उत्पत्ति प्रलयका क्षोभ है,सो ज्ञानवान्‌को नष्ट नहीं कर सकता.जैसे चित्रकी बेलिका आँधी चलाय नहीं सकती तैसे उसको जगतका दुःख चलाय नहीं सकता अरु संसारकी ओरते जड हो आता है.वृक्षकी नाईं गंभीर हो जाता है अरु पर्वतकी नाईं स्थिर हो जाता है अरु चंद्रमाकी नाईं शीतल हो जाता है. हे रामजी!सो आत्मज्ञानकरके ऐसे पदको प्राप्त होता है,जिसके पायेते और कछु पानेयोग्य नहीं रहता.आत्मज्ञानका कारण यह मोक्षोपाय शास्त्र है,जामें नानाप्रकारके दृष्टांत कहे हैं.जो वस्तु अपरिच्छिन्न होवे अरु देखनेमें न आई हो तिसका न्याय देखनेमें होवे;तिसकोविधिपूर्वक समुझावे उसका नाम दृष्टांत है.हे रामजी!यह जगत् कार्यकारणरूप है अरु आत्मा जगत्‌की एकता कैसे होवे, ताते जो मैं दृष्टांत कहूंगा, तिसका एक अंश अंगीकार करना,सब देशकर अंगीकार नहीं करना. हे रामजी ! कार्यकारणकी कल्पना मूर्खने करी है, तिसके निषेधके निमित्त मैं स्वप्न दृष्टांत कहूं हूं, सो समुझनेते तेरे मनका संशय नष्ट हो जावेगा. दृक् अरु दृश्यका भेद मूर्खको भासता है,तिसका दूर करनेके अर्थ स्वप्नदृष्टांत कहूंगा, तिसके विचारनेकरि मिथ्या विभाग कल्पनाका अभाव होता है. हे रामजी! ऐसी कल्पनाका नाशकर्त्ता यह मेरा मोक्षउपाय शास्त्र है;जो पुरुष आदिते अंतपर्यंत विचारेगा सो संसारी होवेगा.जो पदपदार्थको जाननेहारा होवे सो इसको वारंवार विचारे,तब तिसका दृश्य भ्रम नाश पावे. इस शास्त्रके विचारविषे और किसी तीर्थ,तप,दान आदिककी अपेक्षा नहीं;जहां स्थान होवे तहां बैठे. जैसा भोजन गृहविषे होवे तैसा करे अरु वारंवार इसका विचार करे, तब अज्ञान नष्ट होजावे अरु आत्मपदकी प्राप्ति होवे. हे रामजी ! यह शास्त्र प्रकाशरूप है. जैसे अंधकारविषे पदार्थ

नहीं दीखता अरु दीपकके प्रकाशकरि चक्षुसहित देखता है,तैसे शास्त्ररूपी दीपक विचाररूपी नेत्रसहित होवे तब आत्मपदकी प्राप्ति होवे.

हे रामजी ! आत्मज्ञान, विचारविना वरशापकरि प्राप्त नहीं होता, जब विचारकरि दृढ अभ्यास करिये, तब प्राप्त होता है.तातें मोक्षउपाय जो परमपावन शास्त्र,तिसके विचारते जगद्भ्रम नष्ट होजावेगा. जगत्के देखते देखते जगद्भाव मिट जावेगा.जैसे सर्पकी मूर्ति लिखी होती है अरु अविचारकरके तिसते भय पाता है, जब विचारकरि देखिये तब सर्पभ्रम मिटजाता है, सो सर्पका आकार दृष्टि आता है, परंतु उसका भय मिटजाता है. तैसे यह जगत्भ्रम विचार कियेते नष्ट होजाता है अरु जन्ममरणका भय नहीं रहता.हे रामजी!जन्मःमरणका भयभी बड़ा दुःख है,परंतु इस शास्त्रके विचारते नष्ट होजाता है. जिन्होंने इसका विचार त्यागा है सो माताके गर्भविषे कीट होवेंगे. अरु कष्टते नहीं छूटेंगे अरु विचारवान् पुरुष आत्मपदको प्राप्त होवेगा.अरु जो श्रेष्ठज्ञानी अनंत हैं तिनको अपना रूप भासता है; कोऊ पदार्थ आत्माते भिन्न नहीं भासता. जैसे जिसको जलका ज्ञान हुवा है, तिसको लहरी, आवर्त्त सब जलरूपही भासते हैं, तैसे ज्ञानवान्को सब आत्मरूप भासता है. अरु इंद्रियहूके इष्ट--अनिष्टकी प्राप्तिमें इच्छा दोष नहीं करता, सदा एकरस मनके संकल्पते रहित शांतरूप होता है.जैसे मंदराचल पर्वतके निकसेते क्षीरसमुद्र शांतिको प्राप्त भया, तैसे संकल्परहित यह पुरुष शांतिरूप होता है.

हे रामजी!और जो तेज होता है, सो दाहक होता है,परंतु ज्ञानरूपी तेज जिस घटविषे उदय होता है सो शीतल शांतिरूप होता है; बहुरि तिसविषे संसारका विकार कोऊ नहीं रहता. जैसे कलियुगविषे शिखावाला तारा उदय होता है, सो कलियुगके अभाव हुवे नहीं उदय होता, तैसे ज्ञानवान्के चित्तमें विकार उत्पन्न नहीं होता.

हे रामजी ! संसारभ्रम आत्माके प्रमादकरि उत्पन्न होता है, सो

आत्मज्ञानके प्राप्त भये यत्नबिना शांत होजाता है. फूल,पत्र काटनेमेंभी कछु यत्न होता है; परंतु आत्माके पानेमें कछु यत्न नहीं होता. काहेते कि, बोधरूपी करके जानता है, हे रामजी! जो जाननेमात्र ज्ञानस्वरूप है, तिसमें स्थित होनेका क्या यत्न है? आत्मा शुद्ध अद्वैतरूप है अरु जगत् भ्रममात्र है. जो पूर्व–अपर विचार कियेते जिसकी सत्यता न पाइये तिसको भ्रममात्र जानिये, अरु पूर्व-अपर विचार कियेते सत्य होवे तिसका रूप जानिये. सो इस जगत्का सत्यता आदि अंतविषे नहीं है, ताते स्वप्नवत् है. जैसे स्वप्न आदि अंतमें कछु है नहीं, तैसे जाग्रत्भी आदि अंतमें नहीं है, ताते जाग्रत् स्वप्न दोनों तुल्य हैं.

हे रामजी! यह वार्त्ता बालकभी जानता है, कि, आदि अंतमें जिसकी सत्यता न पाइये, सो स्वप्नवत् है. जो आदिभी न होवे अरु अंतभी न रहे; तिसको मध्यमेंभी असत्य जानिये. तिसविषे यह दृष्टांत कहे हैं. संकल्पपुरीवत् ध्याननगरकी नाईं, स्वप्नपुरीकी नाईं, वर शापकरके जो उपजता है तिसकी नाईं, औषधीते उपजेकी नाईं, इस पदार्थकी सत्यता न आदि होती है, न अंतमें होती है अरु मध्यमें जो भासता है, सोभी भ्रममात्र है. तैसे यह जगत् अकारण है अरु कार्यकारणभाव संबंधमें भासता है, तो कार्यकारण जगत् भया अरु आत्मसत्ता अकारण है, जगत् साकार है अरु आत्मा निराकार है.

इस जगत्का दृष्टांत जो आत्मविषे दूंगा तिसका तुम एक अंश ग्रहण करना. जैसे स्वप्नकी सृष्टि होती है, तिसका पूर्वापर भाव आत्मतत्त्वविषे मिलता है. काहेते कि, अकारण है अरु मध्यभावका दृष्टांत नहीं मिलता. काहेते कि, उपमेय अकारण है तो तिसका इसके समान दृष्टांत कैसे होवे? ताते अपने बोधके अर्थ दृष्टांतका एक अंश ग्रहण करना. हे रामजी! जो विचारवान् पुरुष हैं, सो गुरु अरु शास्त्रके श्रवणकरके सुखबोधके अर्थ दृष्टांतका एक अंश ग्रहण करते हैं. हे रामजी!

तिनको आत्मतत्त्वकी प्राप्ति होती है. काहते कि, सारग्राहक होते हैं, अरु जो अपने बोधके अर्थ दृष्टांतका एक अंश ग्रहण नहीं करते अरु वाद करते हैं, तिनको आत्मतत्त्वकी प्राप्ति नहीं होती; ताते दृष्टांतका एक अंश ग्रहण करना सर्वभावकरके दृष्टांतको नहीं मिलाना अरु पृथक्को देखि करि, तर्क नहीं करना. एक अंश दृष्टांतका आत्मबोधके निमित्त सारभूत ग्रहण करना. जैसे अंधकारमें पदार्थ परा होवे, सो दीपकके प्रकाशसों देख लेना. जो दीपकके साथ प्रयोजन है और ऐसे नहीं कहना कि, दीपक किसका है? अरु तेल बाती कैसा है? अरु किस स्थानका है? दीपकका प्रकाशही अंगीकार करना. तैसे एक अंश दृष्टांतका आत्मबोधके निमित्त अंगीकार करना.

हे रामजी! जिसकरि वाक्यार्थसिद्धि न होवे, तिसका त्याग करना; कि, वचन अनुभवको प्रकट करे तिसका अंगीकार करना. जो पुरुष अपने बोधके निमित्त वचनको ग्रहण करता है, सोई श्रेष्ठ है अरु जो वादके निमित्त ग्रहण करता है सो चोगचूंच है, वह अर्थको सिद्ध नहीं करता. जो कोउ अभिमानको लेकरि कहता है, सो हस्तीकी नाईं शिरपर माटी डारता है, तिसका अर्थ सिद्ध नहीं होता; अरु जो अपने बोधके निमित्त वचनको ग्रहण करता है अरु विचारकरि तिसका अभ्यास करता है, तब वह आत्मशांतिको पाता है. हे रामजी! आत्मपदके पानेके निमित्त अवश्यमेव अभ्यास चहिता है. जब शम, विचार, संतोष अरु संतसमागमकरि बोधकी प्राप्ति होवे, तब परमपदको पाता है.

हे रामजी! जिसका दृष्टांत कहता है, सो एकदेश लेकरि कहता है. सवसुख कहनेकरि अखंडताका अभाव हो जाता है अरु जो सर्वसुख दृष्टांत सुखको जानिये, सो सत्यरूप होता है, ऐसे तो नहीं. आत्मा सत्यरूप है, कार्यकारणते रहित शुद्ध चैतन्य है तिसके लखानेनिमित्त कार्यकारण जगतका दृष्टांत कैसे दीजिये, यह जगत्का जो

दृष्टांत कहता है सो एक अंश लेइ कहता है; अरु बुद्धिमानकी दृष्टांतके एक अंशको ग्रहण करते हैं जो श्रेष्ठ पुरुष हैं सो अपने बोधके निमित्त सारको ग्रहण करते हैं अरु जिज्ञासुकोभी यही चहिता है कि अपने बोधके निमित्त सारको ग्रहण करे अरु वाद न करे. जैसे क्षुधार्थीको चावल पाक आय प्राप्त होवहि, तब भोजन करनेका प्रयोजन है; अरु उसकी उत्पत्ति अरु स्थितिका वाद करना व्यर्थ है.

हे रामजी ! वाक्य सोई है जो अनुभवको प्रकट करै, अरु जो अनुभवको प्रकट करै तिसका त्याग करना; जो स्त्रीका वाक्य होवे अरु आत्मअनुभवको प्रत्यक्ष करे तिसका ग्रहण करना. अरु परमगुरु वेदवाक्य होवे और अनुभवको प्रकट न करे तिसका त्याग करना. जबलग विश्रामको नहीं पाया, तबलग विचार कर्तव्य है; विश्रामका नाम तुर्यपद है; जब विश्रामकी प्राप्ति होवे, तब अक्षय शांति होती है; हे रामजी ! जो तुर्यपदसंयुक्त पुरुष है, तिसका श्रुति स्मृतिउक्त कर्महूके करनेकरि प्रयोजन सिद्ध कछु नहीं होता अरु न करनेकरि कछु पाप नहीं होता. सदेह होवे, भावे विदेह होवे; गृहस्थ होवे, भावे विरक्त होवे; तिसको कर्तव्य कछू नहीं. वह पुरुष संसारसमुद्रते पार हुवा है.

इति श्रीयोगवासिष्ठे मुमुक्षुप्रकरणे दृष्टांतनिरूपणं नामाष्टादशः सर्गः ॥ १८ ॥

एकोनविंशः सर्गः १९.

अथ प्रमाणवर्णनम् ।

हे रामजी ! उपमेयको उपमाकरि जानता है, सो एक अंशको ग्रहण करि जानता है, तब बोधकी प्राप्ति होती है, अरु जो बोधते रहित है, सो मुक्तिको प्राप्त नहीं होता, वह व्यर्थ वाद करता है. हे

रामजी ! शुद्ध स्वरूप आत्मता जिसके घटविषे विराजमान है, तिसको त्यागकरि और विकल्प उठता है; सो चोगचंचु है अरु मूर्ख है.

हे रामजी ! जो अर्थ प्रत्यक्ष है, सो प्रमाण मानने योग्य है और जो अनुमान, अर्थापत्ति आदि प्रमाणसों तिसकी सत्ता प्रत्यक्षकरि होती है. जैसे सब नदियोंका अधिष्ठान समुद्र है, तैसे सब प्रमाणहुका अधिष्ठान प्रत्यक्षप्रमाण है. सो प्रत्यक्ष क्या है ? सो श्रवण करहु. हे रामजी! चक्षुरूपी ज्ञानसंमत संवेदन है, तिस चक्षुकरके विद्यमान होता है, तिसका नाम प्रत्यक्षप्रमाण है, तिस प्रमाणहुको विषय करनेहारा जीव है, अपने वास्तवस्वरूपके अज्ञानकरि अनात्मरूपी दृश्य बना है. तिसविषे अहंकृतिकरके अभिमान भया है. अभिमान सब दृश्य है. ताते हेयोपादेय बुद्धि भई है, अरु रागदोषकरके परा जलता है, आपको कर्त्ता मानकरि बहिर्मुख हुवा भटकता है.

हे रामजी ! जब विचारकरके संवेदन अंतर्मुखी होवे, तब आत्मपद प्रत्यक्ष होता है अरु निजभावको प्राप्त होता है. परिच्छिन्न भाव नहीं रहता, शुद्ध शांतिको प्राप्त होता है. जैसे स्वप्नते जागते स्वप्नका शरीर अरु दृश्य भ्रम नष्ट होजाता है, तैसे आत्माके प्रत्यक्ष हुएते सब भ्रम मिट जाता है, अरु शुद्ध आत्मसत्ता भासती है. हे रामजी ! यह जो दृश्य अरु द्रष्टा है सो मिथ्या है, जो द्रष्टा है सो दृश्य होता है अरु जो दृश्य है सो द्रष्टा होता है, सो यह भ्रम मिथ्या आकाशरूप है. जैसे पवनमें स्पंदशक्ति रहती है, तैसे आत्मामें संवेदन रहती है. जब संवेदन स्पंदरूप होती है, तब दृश्यरूप होके, स्थित होती है. जैसे स्वप्नमें अनुभव सत्ता दृश्यरूप होके स्थित होती है, तैसे यह दृश्य है ताते सब आत्मसत्ता है, एसे विचारकरि आत्मपदको प्राप्त होवो अरु जो ऐसे विचार करके आत्मपदको प्राप्त न होय सको तब अहंकार जो उल्लेख फुरता है तिसका अभाव करो, पीछे जो शेष रहेगा सो शुद्ध

बोध आत्मसत्ता है. जब शुद्ध बोधको तुम प्राप्त होहुगे, तब ऐसे चेष्टा पडी होवेगी, जैसे जंत्रीकी पुतरी संवेदनविना चेष्टा करती है, तैसे देहरूपी पुतरीका पालनहारा मनरूपी संवेदन है. तिसबिना पडी रहेगी, परंतु अहंकृतिका अभाव होवैगा; तातें यत्नकरके तिस पदके पानेका अभ्यास करो; जो नित्य शुद्ध शांतरूप है.

हे रामजी ! और दैवशब्दको त्याग करि अपना पुरुषार्थ करो अरु आत्मपदको प्राप्त होहु. जो कोऊ पुरुषार्थमें शूरसा है सो आत्मपदको प्राप्त होता है, अरु जो नीच पुरुषार्थका आश्रय करता है, सो संसारसमुद्रमें डूबता है.

इति श्रीयोगवासिष्ठे ममुक्षुप्रकरणे प्रमाणनिरूपणं नामैकोनविंशः सर्गः ॥ १९ ॥

विंशतितमः सर्गः २० ।

अथात्मप्राप्तिवर्णनम् ।

वसिष्ठ उवाच—हे रामजी! जब सत्संगकरके यह पुरुष शुद्ध बुद्धि करे, तब आतमपद पानेको समर्थ होवे. प्रथम सत्संग यह है कि, जिसकी चेष्टा शास्त्रहूके अनुसार होवे, तिसका संग करे; तिसके गुणहूको हृदयविषे धरे, बहुरि महापुरुषके शम—संतोष—आदिक गुणोंका भी आश्रय करे. शमसंतोषादिककरि ज्ञान उपजता है. जैसे मेघहूकरि अन्न उपजता है, अरु अन्नकरि जगत् होता है अरु जगतते मेघ होता है; तैसे शम--संतोषभी हैं, शमादिक गुणकरि ज्ञान उपजता है अरु आत्मज्ञानकरि शमादिक गुण आय स्थित होते हैं. जैसे बडे तालकरि मेघ पुष्ट होता है अरु मेघकरि ताल पुष्ट होता है, तैसे शमादिकगुण-

नकरि आत्मज्ञान होता है अरु आत्मज्ञानते शमादिक गुण पुष्ट होते हैं. ऐसे विचारकरके शमसंतोषादिक गुणोंका अभ्यास करहु. तब शीघ्र ही आत्मतत्त्वको प्राप्त होवोगे. हे रामजी ! ज्ञानवान् पुरुषको शमादिक गुण स्वाभाविक आय प्राप्त होते हैं अरु जिज्ञासुको अभ्यासकरके प्राप्त होते हैं अरु जैसे धान्यका पालन स्त्री करती है, उंचा शब्द करती है जिसकरि पक्षियोंको उडावती है, जब इसप्रकार पालना करती है, तब फलको पाती है, तिसकरि पुष्ट होती है. तैसे शमसंतोषादिकके पालने करि आत्मतत्त्वकी प्राप्ति होती है.

हे रामजी ! इस मोक्षोपाय शास्त्रको आदिते लेकर, अंतपर्यंत विचारे तब भ्रांति निवृत्त होवे. धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष सर्व पुरुषार्थकर सिद्ध होते हैं, परंतु यह मोक्षउपाय शास्त्र परमकारण है, जो शुद्ध बुद्धिवान् पुरुष इसको विचारेगा, तिसको शीघ्रही आत्मपदकी प्राप्ति होवेगी याते इस मोक्षउपाय शास्त्रका भलीप्रकार अभ्या करो.

इति श्रीयोगवासिष्ठे मुमुक्षुप्रकरणे आत्मप्राप्तिवर्णनं नाम विंशतितमः सर्गः ॥ २० ॥

समाप्तमिदं योगवासिष्ठे मुमुक्षुप्रकरणं द्वितीयम् २ ।
ग्राम सलेमाबादके, हरिप्रसादके बैन ॥
शोध्यो पण्डित रामभद्रने, श्रीसुमेरपुर ऐन ॥ १ ॥

पुस्तक मिलनेका ठिकाना—
हरिप्रसाद भगीरथजीका—
'प्राचीन-पुस्तकालय' कालकादेवी, पोष्ट नंबर २, मुंबई.